२८५१-

श्री राधा सर्वेश्वराभ्यां नमः

श्रीमद् सिद्धांत रत्नाञ्जलि

पूर्वार्द्ध ।

श्री वृषभानपुर (बरसाना) निवासी श्री राधा

चरणान्वेषी श्री हंसदास जी

कृत ।

भाषा कान्ति प्रकाशिका

अनुवाद सहित ।

सेवक बालगोविन्द की माता के द्रव्य सहायता से

पं० रामनिवास शर्मा के प्रबन्ध से

श्री 'ब्रजेन्द्र प्रेस' वृन्दावन में

मुद्रित ।

प्रथमवार ५०० } संवत् १९८३ { मूल्य हरिभक्ति

॥ श्रीराधा सर्वेश्वरो जयति ॥

श्रीमन्निम्बार्क महामुनीन्द्राय नमः

सिद्धान्त रत्नाञ्जलिः पूर्वार्द्धः

श्रीमद्धंस सनकादीन् नारदं मुनि पुङ्गवम् ।
निम्बभानुं प्रणम्याथ श्रीनिवासं जगद्गुरुम् ॥ १॥
श्री अष्टादश भट्ठाँश्च केशवं श्रीभटं तथा ।
श्री हरिव्यासदेवंच वन्दे सर्वान् गुरूनपि ॥ २॥
सुदुःशीलो दुराचारो क्रूरकर्मापि मन्दधीः ।
न जाने तदभिप्रायं येनाहमात्मसात्कृतः ॥३॥
तस्मै गोपाल दासाय गुरवे कृष्णरूपिणे ।
अत्यद्भुत प्रभावाय नमस्कृत्य कृताञ्जलिः ॥४॥
श्रीमद्धरि व्यासदेवस्य सिद्धान्तरत्नाञ्जलेः ।
कान्ति प्रकाशिकां भाषां कुर्वे तत्कृपयाप्लुतः ॥५॥
मया निमित्त मात्रेण हंस दासेन भीरुणा ।
नोदिता तेन देवेन प्रादुर्भूता शुभार्थदा ॥ ६॥

चौपाई

श्रीराधा पद कूंडेहि ध्याऊं । कूंडेहि कृष्ण चरण सिर नाऊं ॥
कूंडेहि गुरुकी करों वन्दना । कूंडेहि सन्त चरण नन्दना ॥

झूठेहि भक्तिकी बात बनाऊं। झूठेहि अपने को भक्त कहाऊं॥
सब कामन में झूठो पूरो। दुष्ट पने में सांचो शूरो॥
जे जे भक्त भये सुख दाई। अपनि कुटिलता आपहि गाई॥
सकल दोष आप में राखी। पतित पने की विनय बहु भाखी॥
तिन सब झूठी बात बनाई। जग सिरयो दीनता दिखाई॥
हरि परिकर हरि पास विराजे। जन उद्धार को जग में राजे॥

दोहा

पतित पनो उनमें कहां, बनि आवै तिहुं काल।
जिनको यश हरियश सहित, गाय तरै जगजाल॥

चौपाई

सांचो पतित जोचाहत देखो। मो पापी की मूरति पेखो॥
काहू के विद्या को बानो। काहू के कविता को बानो॥
कोई पंडित चतुर कहावै। कोई धर्मी धर्म सजावै॥
कोई हरिभक्ति रसिक रससानों। दुष्ट कर्ममें त्योंमोहि जानों॥
संतों अचरज कथा सुनाऊं। दुष्टपने की सीम दिखाऊं॥
अवध देशमें लक्ष्मन(लखनऊ)पुरी। मेरी देह तहां जनम धरी॥
मेरे पिता पितामह जेई। संत शिष्य साधुन के तेई॥
तिनघर जनम्यो अधम शरीरा। कुलकंटक जिमि वृक्ष करीरा॥

दोहा

उदर भरण के हेतु पितु, आये मथुरा देश।
राज काज में लग गये, पाय राजसी वेश॥

चोपाई

बालक ही मैं उनसंग आयो। मथुरा बसिकुछ काल गंवायो॥
दर्शन द्वारिका शोश विश्रान्त। पढ़ों करों विद्या दिन रात॥

पुनि श्रीवृन्दावन मंह आयो । श्रीलालाबाबू के मन्दिर भायो ॥
कृष्णचन्द्रकी मिली सिवकाई । बंकबिहारी ढिंग बस्यो जाई ॥
यह सब योग हरीने जोड्यो । पर दुष्टपनो मैंने नहि छोड्यो ॥
निन्दित कौन कर्म जग मांही । जो भर पेट किये मैं नाही ॥
हरि के धाम पाय जो काहूँ । पञ्च लेप यहु कबहु न लाहूँ ॥
गुरु पाये जग मैं विख्यात । रहस्य भक्ति के पूरण गात ॥

दोहा

ऐसे हू गुरु पाय के, भयो हिये नहि चेत ।
सुधा सलिलते सींचेहू, फलै न फूलै बेत ॥

चौपाई

श्रीगुरु के कछु गुण प्रघटाऊ । दिशा मात्र रसना से गाऊं ॥
उत्तम गौड़ ब्रह्मकुल पालक । हरिरस विमुख विमुखता घालक ।
रास विलास रसिक रस साने । राधा कृष्ण चरण सरसाने ॥
कथा कीरतन के पन धारी । आचारज उत्सव शुभकारी ॥
श्रीनिम्बार्क उत्सव प्रगटायो । सम्प्रदाय रस सबहि चटायो ॥
हंस सनक नारद निम्बारक । तिनकी प्रतिमा मन्दिर धारक ॥
चरणामृत सन्तन को धारैं । श्री भागवत के सप्ताह सारैं ॥
परम उदार बहुगुण नयशीले । संशय छेदक रसिक रसीले ॥

दोहा

बहुतकाल बपु धारिकै, शुद्ध किये बहु जीव ।
बावन अधिक उनीस शत, अन्तर्हित की सीव ॥

चौपाई

ऐसेहि जब संयोग तै होय । मोंको प्राप्त भयो पुनि सोय ॥
हम दोउ एक गुरु के चेला । विषम बुद्धिको मिल्यो झमेला ॥

संसारी नातो तब छूट्यो । गुरु भगनी को अंकुर फूट्यो ॥
गुरुदत्त पायो गोपाली नाम । भक्ति क्षेत्र में मिल्यो विश्राम ॥
पिता विरक्त रहे संकेत । प्रीया प्रीतम को रस खेत ॥
वैष्णव सेवा हिये धारी । सरल सुभाव न कुल छिदरी ॥
सन्त चरणमें हियोहुलसायो । लाभ सु मानुष तनको पायो ॥
कछु हकाल परगट वपु धारी । छिन्य रु। पुनि अन्तर सारी ॥

दोहा

धाम प्रभाव अरुगुरु कृपा, अन्न भक्त पुनि खाय ।
गृह बन्धन से छूट के, गिरि बन रहे पराय ॥

चौपाई

चालिस अधिक हु शतउन्नीस । सम्वत विक्रम विश्वावीस ॥
तेईस वर्ष अवस्था जानो । सन्तवेष को मिल्यो सयवानो ॥
मैं कुछ काल गोवर्द्धन रहेऊ । धर्मध्वजी भेष उर दहेऊ ॥
पुनि श्री बरसाने में आयो । श्री राधा के पग लिपटायो ॥
गहु विलास प्यारी को धाम । सुखद तहाँ पायो विश्राम ॥
पिय प्यारी जहँनित्य विलास । निशिदिन करैं सहित हुल्लास ॥
यद्यपि सुख्ल रास विहारी । पर दुष्ट बसेतैं महिमा गारी ॥
अति दुर्गन्ध जहाँ रहे छाई । सज्जन तहँतैं ओहि पराई ॥

दोहा

मो अपराधी के बसे, तज्यो आपनो धाम ।
बड़ प्रताप मो पापको, हारे श्यामा श्याम ॥

चौपाई

होयसो होय कहाँ मैंजाऊं । तजिपद कमल कहाँ मोहि ठाऊं ॥
दुष्ट बसायेको फल नीको । निज यश दियो कलंक को टीको ॥

औरहु एक बुद्ध को साजा। जग उपहास कहत बहु लाजा ॥
विषक्रम जिमि चहै अमृत सरैया। बवना छुवै अकाश तरैया ॥
तिमि मूरख मैं सोई हठठानी। अधम जीव की अकथ कहानी ॥
श्री हरि व्यास देव आचारज। जिनपद वन्दे मुनि देवा रज ॥
दशऽश्लोकी पर सिद्धान्त। रत्नाञ्जलि वेद वेदान्त ॥
ताकी भाषा करन विचारी। लोक वेद में आवे गारी ॥

दोहा

विद्या बल नहिं बुद्धि बल, चतुर चातुरी नाहिं।
परम दुष्टता देखिये, मन हठ त्यागत नाहिं ॥

चौपाई

है बल एक वेद जो बरणा। अशरण शरण आचारज चरणा ॥
गति दाता अगनित के येई। पतितन की नौका तिन सेई ॥
करि पारषद स्वधाम पठायो। स्वपच चढ़ता बलमें अपनायो ॥
सो योग्यता कहां मैं पाऊं। दरश प्रत्यक्ष कहाँ से लाऊ ॥
एक बधिकघर हिंसक लोहा। एक लोहा पूजा में सोहा ॥
दुहुन परसि पारस करै सोना। गुरु प्रभाव सोई स्तुति लीना ॥
सोई धरि हिय साहस मैं ठानो। लेहि सुधार गुरूमन मानो ॥
बालक तनिक जो पांव उठावै। माता देहरी फुलसि लंघावै ॥

दोहा

भली बुरी जो बनिपरी, दास आपनो जान।
लेहि सुधार संभाल पुनि, अधम उधारन बान ॥

चौपाई

ऐसे अनेक खूट खलन मेरे। कागज कारे होय घनेरे ॥
भरीसरोवरि सुरभिजल मिष्ट। शूकर परे करे अति भ्रष्ट ॥
कहा जानि मोहि धाम बसायो। हेराधे तुम कुयश कमायो ॥
तुम्हरे मन की जानि न जाई। एक युक्ति मेरे मन आई ॥

कोई मधुर मिठाई खाय । कोई करेला खाय अघाय ॥
प्रथम लौन डारिके धोवे । यहा भर कडुआई सो खोवे ॥
तापाछे जो रहै कडुआई । सो स्वादिन को स्वाद बताई ॥
तैसेहि बड़े बड़े शुभ लक्षण । महा भागवत चतुर विचक्षण ॥

दोहा

हरि अपनाये धाम निज, दिये परम सुख पाय ।
दुष्ट करेला मो सद्रश, प्यारी लिय अपनाय ॥

चौपाई

बरसानो श्री बन घर पायो । श्री कुंड गिरराज सुहायो ॥
आदि अनादि सम्प्रदा पाई । हंस सनक नारद सुखदाई ॥
श्री निम्बार्क मिली शरणाई । ध्रुव पदवी हरि व्यासी पाई ॥
श्रीरंग देवी यूथ ईश्वरी । तिन पदि करकी दासी करी ॥
बीबी महारानी श्री राधा । सब सुखखान गुणन अगाधा ॥
सांवरेमोहन मिले महाराजा । मिल्योठाठ सुन्दर सुखसाजा ॥
गुरुकी कृपा बानिक बनिआयो । वृथा मरों मैं कर पछतायो ॥
सुगति कुगतिकेहि खेलकी मूरी । क्यों चिन्ताकरि मरोंबिसूरी ॥

दोहा

रटि रसनाते नाम पुनि, रूप हिये द्रग लाय ।
यह सुख हियेतैं नहि टरै, चिन्ता करै बलाय ॥

सोरठा

हंस दास की आस राधा दासिन दासता ॥
श्रीराधे सुखरास, पट्टो मोहि लिख दीजिये ॥

चौपाई

श्रीहरि व्यास चरण शिरनाऊं । दृढ़ कर तिनकी कृपा मनाऊं ॥
मथुरा मैं वा रुरी बखान । देवी शिष्य बहु परमान ॥

अधम उधारन की यह बान। स्वयंच कियो पार्षद समान ॥
महिमा तिनकी कौन बखानै। को सागर गागर में आनै ॥
नारद शिष्य धुरन्धर देव। तिन द्वारा खुलो भक्ति को भेव ॥
संस्कृत भाषा ग्रंथ अनेक। रचे रहस्य भक्ति उद्रेक ॥
दश श्लोकी पर यह भाष्य। रत्नाञ्जलि वेद प्रकाश्य ॥
भाषा ताकी मम हिय प्रेरी। कान्ति प्रकाशिका भई चेरी ॥

दोहा

जीव स्वरूप माया प्रबल, राधाकृष्ण स्वरूप।
वर्णों पूर्व अर्द्ध में, पांच श्लोक अनूप ॥
कृपाको फल और भक्तिरस तथा विरोधीनाम।
कहें उत्तरार्द्ध में पायो ग्रंथ विश्राम ॥

✻ सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्धः ✻

श्री राधाकृष्णाभ्यांनमः

श्रीमद्धयाद्योल्लसित धूलिशेषं नत्वाऽखिलेशं निखिलैरुपास्यम्।
निम्बार्कशास्त्र श्रवणालसानां बोधाय यत्न विदधे सुरम्यम् ॥ १ ॥

इह खलु सकल लोक संतापवृत्तये अवनिसुरवरैः प्रार्थितस्य भगवतो हृदयाङ्कवर्तीतः सुदर्शनो निम्बादित्यापरनामा भगवान्नवतीर्णस्वामी: परमकारुणिकः स्वशिष्येभ्यो नैमिष प्रदेशे निर्दिश्य दानवबलं च हत्वा निखिलसात्वतजनानुदिधीषु वैदभाष्याद्यनेकग्रन्थान् कृत्वा वेदान्तसारभूतां दशश्लोकीमपि चकार तत्रवेदान्तो नामश्रुतिशिरोभाग ब्रह्मसूत्रगीतादीनिच सर्वेष्वपि तेष्वधिकारी विषय संबन्ध प्रयोजनानीत्यनुबन्धचतुष्टयमपेक्षितम्। तत्रवेदान्त-शास्त्रीयानुबंधचतुष्टयं यथा-निर्णीतहि साध्यायो—

श्रीमद्धरि व्यासदेव वर्णन करें हैं—दोहा,
उपास्य इष्ट सब जननकी श्रीभट्ट चरणकी धूर
करदन्डवत समग्रको जो सर्बस जीवन्मूर ॥ १ ॥
श्रीनिम्बार्क शास्त्रको श्रवण करत अलसांय ।
तिनके बोधन अर्थ कियो सुन्दर यत्न बनाय ॥२॥
यासंसार में निश्चय सब लोकोंके पापदूर करवे
को पृथ्वीके देवता जो ब्राह्मण तिनकी प्रार्थना
से ब्रह्माके हृदयसे अवतार लियो ऐसे सुदर्शन
भगवान निम्बादित्य जिनको दूसरो नाम उन
ब्राह्मणोंके तप करवेको अतिदयालु परम करुणा
वान नेमिशप्रदेश दिखायके और बलवान दानव
मारके सब भक्तजनोंके उद्धारकी इच्छाजो भयी
तो बेदान्त भाष्यादि अनेक ग्रन्थ रचना करके
वेदान्त की सारभूत दशश्लोकी भी करते भये
तामें वेदांत श्रुति शिरोभाग ब्रह्मसूत्र गीतादि हैं
सबतंत्रोके अधिकारी विषयसंबन्ध प्रयोजन वे अनुबं
ध चतुष्टय चहीते हैं तामे वेदांतशास्त्रके अनुबंध।

सिद्धांतरत्नावलिपूर्वार्द्ध

अध्येतव्य इत्यध्ययनविधिः । ब्राह्मणो न निष्कारणो धर्मः षडंगोवेदोऽध्येयो ज्ञेयश्चेति वचनात् । काम्यत्वे हिवेदस्यान्योन्याश्रयता स्यात् । अतः सर्वोपि नित्यविधिबलादेवषडंग सहितं वेदमधीत्यार्थं जानाति तत्र कश्चित्पुण्य पुंजवशान्निरतिशय परम पुरुषार्थ प्रेप्सायां तदुपायं वेदेन्विष्य इदमधगच्छति शांतोदांतस्तितिक्षुरुपरतः आत्मन्येवात्मानं पश्येत् । तद्यथेह कर्मचितोलोकः क्षीयते एवमेवामुत्र पुण्य चितोलोकः क्षीयते । परीक्ष्यकर्मचितांल्लोकान्ब्राह्मणो निर्वेदमायात् नास्त्यकृतः कृतेन सगुरुमेवाभिगच्छेत्समित्पाणिः श्रोत्रियंब्रह्मनिष्ठम् । यस्यदेवे परामक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ । तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशंते महात्मन इति ॥

भाषार्कांतिप्रकाशिका

चार दिखावे हैं नित्यस्वाध्याय अध्ययन करनो अर्थात वेदाख्य अक्षर समूह को ग्रहण करनो याप्रकार अध्ययनकी विधि है ब्राह्मण निष्कारण धर्म जो षडंग वेद ताको अध्ययन करै और जानै ये वचन हैं सकामता होवे से वेद की परस्पर आश्रयता होय है यातें सब नित्य विधि के बलते षडंग सहित वेदको पढ़ के अर्थको जानै तामें जो कोई बड़ो पुण्य पुंजवारो होय और अतिशय परम पुरुषार्थ की इच्छा राखै तौ ताको उपाय वेद में ढूंडके या विषय को ग्राह्य होय है । शान्तदान्तनाम इन्द्रिजितति तिक्षूसहनशील उपरत नाम वैराग्यवान आत्मा

जो मनता के विषय आत्मा को देखै। जैसे या लोकमें कर्मके संचित फल नाश होंय है तैसे परलोकमें पुण्य के इकट्ठे किये फलनाश होंय हैं ऐसे ब्राह्मण कर्मके संचे फलोंकी परीक्षा करके नाश वान जान के उपराम को प्राप्त होय कृत जो कर्म तासे अकृत जो मोक्षताकी प्राप्ति नहीं है ऐसे जानके वेदके पढ़े भये ब्रह्मनिष्टगुरू के पास जाय दातुनहाथ में ले जाय समित्पाणि।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

दुःखोदर्केषु कामेषु जातनिर्वेद आत्मवान। अजिज्ञासितमद्धर्मो गुरु मुनिमुपव्रजेत्। मदभिज्ञं गुरुं शांतमुपासीतमदात्मकम्। अमान्यमत्सरोदक्षो निर्ममो दृढसौहृदः। असत्वरोर्थजिज्ञासुरन सूयुरमोघ वागित्यादि श्रुतिस्मृत्युक्त साधनचतुष्टयसंपन्नोधिकारी। साधन चतुष्टयं च शमदमादि संपत् नित्यानित्य वस्तु विवेकः। इहामुत्रार्थ फल भोग विरागः इतीवलिङ्गचेति शमदमोपरतितितिक्षाश्रद्धा समाधयः। शमस्तावत्तदुक्तं भगवन्निष्ठता शमोमन्निष्ठता बुद्धेरिति भगवदुक्तेः दमोबाह्येन्द्रिय संयमः॥

भाषा कान्ति-प्रकाशिका।

या शब्द से निष्किचन अधिकारी सूचन किया। जाकी देवता में परम भक्ति है तैसी ताकी गुरु में चाहिये सोई महात्मा को वेदान्त

में कहे भये पदार्थ प्रकाश होंय हैं। आत्मा के जानन वारे को दुःख ही जिन में फल ऐसे विषयों में जब वैराग्य उत्पन्न होय मेरे धर्म नहीं जानतो होय तो गुरु मुनिके समीपजाय मेरेको जो अच्छी रीतिसे जानैं मेरेमें जिनको मन होय ऐसे शान्त गुरुकी उपासना करै आप मान न चाहै परायोउत्कर्ष देखके जरै नहीं चतुर ममता संसारी छोड़के गुरू में दृढ़ प्रीति राखे जल्दी न करै कोई की असूया न करै अर्थात् गुणमें दोष न देखै वृथा न बोलै श्रुतिस्मृति में कहे जो साधन तिनसे परिपूर्ण होय सो या वेदान्त को अधिकारी है तामें चार साधन कहैं हैं शम दमादिकी संपत होय नित्य अनित्य वस्तु कावि चाररावै या मनुष्य लोक और स्वर्गलोक के फल में वैराग्य राखै हरि में रति होय। तामेशमद मतितिक्षा श्रद्धा ये शमादिक हैं भगवान्में बुद्धि की नेष्ठा होजाय ताको शम कहै शम मेरी निष्ठा वारी बुद्धि को कहैं ये भगवद्वाक्य हैं वाहिर के विषयों से इन्द्री रोकनो ताको दम कहैं।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

तितिक्षुः क्षमावान् उपरतिः विषयेभ्यउपरामस्तद्वानुपरतः स्वरूपतो गुणतश्च सपरिकरो हरिरेवनित्योऽन्यदनित्यमिति विवेकवान् यथेहकर्मचितो लोकोवनितादिक्षीयते प्रणश्यति तथामुत्र स्वर्गउरवश्यमृतादिरपि नश्य-येवेत्येवं विचार्य ब्राह्मणो जिज्ञासितमद्धर्मः श्रद्धावान् तथा सर्वकामेषु जातनिर्वेदः सत्त्वार्थजिज्ञासुः गुरु भक्तिमान् ब्रह्माभिज्ञो गुरुमुपगच्छेदिति श्रुतिस्मृत्योर्निर्गलितोर्थः। स्वभावतो पास्तसमस्त दोषानंतकल्याण गुणगणाकरः श्रीकृष्णः शास्त्रविषयः सर्ववेदा यत्पदमामनंतीति श्रुतेः।

भाषा कांति-प्रकाशिका।

तितिक्षु सहनशीलको कहैं उपरति विषयों से जो वैरागी सो उपरत है हरिको स्वरूप व गुण और उनको परिकरपार्षदादि येई निश्चय करके नित्य हैं और सब अनित्य ऐसो विचार वारो जैसे या लोक में कर्म फल धन धान्य धाम सुन्दर स्त्री पुत्रादि नाश होंय हैं तैसेही स्वर्ग के उरवशी अमृत विमानादिक नष्ट होय हैं ऐसे जान के ब्राह्मण मेरे धर्म को जिज्ञासू श्रद्धालू सब कामना में जाको वैराग्य तत्वको पूछवे वारो गुरु की भक्ति जाके ब्रह्मके जानवे वारे गुरुके पास जाय यह श्रुति स्मृतिको अर्थ निर्धार भयो जिनके स्वाभावतेही समस्त दोष

दूर अनन्तकल्याण गुणोंकी खान वे श्रीकृष्ण या शास्त्र के विषय हैं। सब वेद जाके पदको मनन करैं यह श्रुति है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

वेदैश्च सर्वैरहमेववेद्य इतिस्मृतेश्च । कृष्ण प्राप्तिरेवप्रयोजन वाच्यवाचक भाव सम्बन्धः । कृष्ण प्राप्ती चत्वारि प्रतिबन्धकानि,ना-नित्य विषय भोगवासना प्रमाणगता संभावना प्रमेयगता संभावना विपरीत भावनाख्यानि तत्र श्रवणांगभूताः शमादयोविषया शान्तोनि वर्तकाः श्रवणं प्रमाणगतासंभावनायाः प्रमेयगतासंभावनाया मननं विपरीत भावनायाश्च निदिध्यासनं निवर्त्तकमिति अतः श्रवणादि संपादनेनासंभावनादि प्रतिबंध परिक्षयाय चतुर्लक्षणी ब्रह्ममीमांसा समारंभि भगवता कृष्ण द्वैपायनेन तस्मात्क्रमादि सहितेनमु-मुक्षुणागुरुमुपसृत्य भगवत्प्राप्ति प्रतिबंधा संभावनादि निवृत्तयेच ।

भाषाकांतिप्रकाशिका

सब वेदों करके मैं ही जानवे योग्य हूं यह स्मृति गीता है। श्रीकृष्ण की प्राप्ति ही यामें प्रयोजन है कहवे योग्य विषय और कहिवे वारो यह वाच्य वाचक भाव सम्बन्ध है। तामें श्रीकृष्ण के मिलवेमें चार बाधाकरें हैं। एक तो विषय भोग की वासना, दूसरे प्रमाणिक शास्त्र दिक में एकी भावना नहीं, तीसरे प्रमेय जो श्रीकृष्ण तिनमें संभावना नहीं, चौथे सब में उल्टी भावना, तामें वेदांत सुनवे के अंग भूत

जो शमादिक ये विषय की आशक्ति दूर करें हैं और प्रमाण में जो प्राप्ति भई असंभावना सो श्रवण कर वैसे जाय है। प्रमेय में असंभावना दूर करने वालो मनन है ध्यान करवे से विपरीति भावना दूर होय है। याते श्रवणादिक संपादन करके असंभावनादि जो भगवत प्राप्तिमें प्रतिबन्धक हैं तिनके नाश के अर्थ भगवान श्रीवेदव्यास जी चतुर्लक्षणी ब्रह्ममीमांसा आरम्भ करते भये तासे शमदमादि युक्त-पुरुष भगवत भाव प्राप्ति रूपी जो---

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तुर्लक्षणी मीमांसागीतोपनिषद्भिरात्मा नात्मा परमात्म विचारः कर्तव्यः पर्वनिरूपणीय पदार्थत्रये जीवात्मनिरूपणे शास्त्र संस्कार वर्जिता विचार विरहितं प्रत्यक्षमेव प्रमाणमाश्रित्य चेतनमात्मानं देह इह आत्मेति वदन्ति तथैवभूत चतुष्टयमात्र तत्त्ववादिनो लोकायतिकाश्च। अन्ये तु सत्य पि शरीरे चक्षुरादि भिर्विना रूपादि ज्ञानाभावादिन्द्रियाण्येवचेतनानीत्याहुः तदेकस्मिन शरीरे बहूनामिन्द्रियाणां चेतनत्वेय एवाहं रूपमद्राक्षं स एवेदानीं शृणोमीति प्रत्यभिज्ञा नस्यात् रूपरसादिषु भोक्तृत्वं युगपदेवस्यादक्रमेणेति वाच्यं एकशरीराश्रयत्वेनैव प्रत्यभिज्ञा ज्ञानक्रमभोगयो—

भाषा कांति प्रकाशिका

मोक्ष ताको चाहन वारो गुरू के निकट जायके भगवत प्राप्तिकी प्रति बंधक असंभाव-

नादि दूर करवे के अर्थ चतुर्लक्षणी मीमांसा व श्री गीता उपनिषद से आत्मा अनात्मा परमात्मा इन तीनोंको विचार करै येई तीन पदार्थ निरुपण करवे योग्य हैं तामें जीवात्मा निरूपण करवे में पहले जिन को शास्त्र को संस्कार नहीं है वे विचारसे रहित जो प्रत्यक्ष प्रमाण ताको आश्रय लेके चेष्टा करवें वाली देह को या संसार में आत्मा मानै हैं तैसे ही लौकिक आचरण करवे वाले चार भूत अग्नि पानी मिट्टी वायू के तत्ववादी इन्हीं को आत्मा कहैं कितनों को यह मत है कि शरीर होते भी नेत्रादि इन्द्री बिना रूपादिकों को ज्ञान नही होय तासे इन्द्री ही चेतन हैं यह शंका मत करियो कि एक शरीरमें बहुत इन्द्री और सब चैतन्य हैं तो जो मैं रूप देखतो भयो सोई मैं निश्चय करके सुनौं हौं या प्रकार को ज्ञान नहोय और रूप रसादि में भोक्तापनो।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

निमित्तत्वात् वरविवाह न्यायेन गुण प्रधान भावात् अन्ये

स्वप्ने चक्षुराद्यभावेऽपि केवलेमनसि विज्ञानाश्रयत्वमहं प्रत्ययाव लंबत्वं चोपलभ्यते अतश्चक्षुरादि करणकं शरीराधारंमनएवात्मेति मन्यंते विज्ञान वादिनस्तु क्षणिक विज्ञान व्यतिरिक्त वस्तु नोभावात् क्षणिक विज्ञान मेवात्मत्वमाहुः प्रत्यभिज्ञातु ज्वालायां मिवसंततवि ज्ञानोदयसादृश्या दुपपद्यते माध्यमिकास्तु सुषुप्तेर्विज्ञानस्याप्यदर्श नात् शून्य मेवात्मतत्त्व मितिवदन्ति न च सुषुप्ते विज्ञान प्रवाह विच्छेदावभासप्रसंगात्स्थिरा लंबनज्ञाना योगात् विशेषा भावात्। कारणा दास्तु देहेन्द्रियादि व्यतिरिक्तो नव विशेषगुणा।

भाषाकान्तिप्रकाशिका।

क्रमबिना एक कालमें होनो चाहिये ऐसे समुझौ कि एक शरीरके आश्रय होवे से ही प्रति अभिज्ञा है क्रम और भेाग को निमित्त नहीं जैसे वरविवाहमें कोई गुण प्रधान नहीं अन्य कोई ऐसे कहैं कि स्वप्न में सब इन्द्रियों को लय होजाय है तबभी केवल मनके विषय विज्ञान के आश्रयवारी अहं प्रत्यय को अव लंबन पायेजाय है तासे नेत्रादि जाके कारण शरीर जाको आधार वेमन को ही आत्मा मानैं हैं पर मनका भी सुषुप्तिमें लय है तासे मन भी आत्मा नहीं विज्ञान वादी ऐसे कहैं हैं कि क्षणिक विज्ञानके बिना कोई वस्तु नहीं क्षणिक विज्ञान ही आत्मा है जैसे अग्नि की

की ज्वाला में विज्ञान को उदय ताकी सदृश माध्यमि का ऐसे कहै कि सुषुप्तिमें विज्ञान को भी दर्शन नहीं हैं तासे शून्य ही आत्माको तत्व है सुषुप्ति वारे में विज्ञान को प्रवाहन ही चलै ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

अन्ये विभुरात्मेत्याहुः मायावादिनस्तु नित्यशुद्धबुद्धमुक्तसत्यस्वभावप्रत्यक्चैतन्यमेवात्मेतिवदंति अन्ये तु शून्यादिव्यतिरिक्तस्थायिनं संसारिणं भोक्तारमात्मानमाहुः औपनिषदास्तु ज्ञानानंदस्वरूपोऽणुरात्मा स च भगवदनुग्रहादानंत्याय कल्पते इति वदन्ति. तत्रौपनिषदपक्षे जीवात्मस्वरूपं निरूपयति भगवानाचार्यः ज्ञानस्वरूपमित्यादिना

"ज्ञानस्वरूपं च हरेरधीनं शरीरसंयोगवियोगयोग्यम् ।
अणुं हि जीवं प्रतिदेहभिन्नं ज्ञातृत्ववंतं यदनंतमाहुः" ॥ १ ॥

ज्ञानस्वरूपमित्यनेनजीवस्य ।

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

विषय अवभासके प्रसंगते निरालंबन ज्ञान अयोग्य है काहे से कि विशेष का अभाव है काणादमत वारे देह इन्द्रयोंसे न्यारो नव गुण विशेष के आश्रयविभू को आत्मा कहें हैं मायावादी नित्य शुद्ध बुद्धमुक्त सत्य स्वभाव प्रत्यक चैतन्य को आत्माकहैं हैं कोई और शून्यादि से भी न्यारो संसारी भोग भोग

वेबारे स्थायीको आत्माकहै है उपनिषद ज्ञान बारे ज्ञानान्द स्वरूप अणु आत्मा है और सो भगवानकी कृपासे अनंत होवेके योग्य है ऐसे कहै हैं तामें श्रीआचार्य निम्बार्क भगवान उपनिषद पक्ष लेके जीवात्माको स्वरूप निरूपण करै हैं यह जीव ज्ञानस्वरूप है और हरिके आधीन है और शरीर का जो संयोग ताके वियोगकरवेको सामर्थ्यमान है अणुपरिमाण है देह देह प्रति न्यारोन्यारो है और ज्ञानवान है तामें याको वेद अन्त रहित बतावे है ॥१॥ ज्ञानस्वरूप कहि के जीव को जडत्व दूर कियो।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

जडत्वं व्यावृत्तं चकारात्तस्य ज्ञानाश्रयत्वमपि बोध्यं यथा प्रकाशरूपस्यापि चन्द्रादेः प्रकाशाश्रयत्वं तथा। ज्ञानस्वरूपस्यापि ज्ञानाश्रयत्वं युक्तं एवमात्मा चिद्रूप एव चैतन्यगुण इति चिद्रूपतान्हि स्वयं प्रकाशता तथाहि श्रुतयः सयथा सैन्धवघनो ऽनन्तरो ऽबाह्यः कृत्स्नो रसघन एवं वा अरे आत्मा ऽनन्तरो ऽबाह्यः कृत्स्नोप्रज्ञानघनएवात्रायं पुरुषः स्वयं ज्योतिर्भवति न हि विज्ञातुर्विज्ञातेर्विपरिलोपो विद्यते अथ यो वेदेदं जिघ्राणीति स आत्माकतम आत्मेति योऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु हृद्यन्तर्ज्योतिः पुरुष एव हि द्रष्टा श्रोता घ्राता रसयिता मन्ताबोद्धा विज्ञानात्मा पुरुषः विज्ञातारमरेकेनविजानीयाद्वा।

भाषा कांति-प्रकाशिका।

चकार से ज्ञानाश्रय पनो भी जानवे

योग्य है जैसे प्रकाश रूप भी चन्द्रादिकोंको प्रकाशाश्रयत्व है तैसे ज्ञान स्वरूप आत्मा को भी ज्ञानाश्रयत्व है या प्रकार आत्मा चिद्रूप और चैतन्य गुण वारो है चिद्रूपता ही स्वयं प्रकाशता है तैसे ही श्रुति में है जैसे लवण का पिन्ड वाहर भीतर रस रूप है तैसे ही यह आत्मा भी वाहर भीतर समग्र विज्ञान घन है यह पुरुष (आत्मा) स्वयं ज्योति है विज्ञाता की विज्ञान शक्तिका कबहूं लोप नहीं है काहे सेकि विज्ञान शक्ति अविनाशी है श्रुति में प्रश्न है कि जो गंध को जानन वारो सो आत्मा कौन है या प्रश्न को उत्तर है कि यह आत्मा विज्ञान मय है प्राणों के विषय हृदय मेंअन्तर्ज्योति है पुरुष ही निश्चय देखवे वारो सुनवेवारो स्वादलेवेवारो सूंघवेवारो वोधवारो विज्ञानात्मा पुरुष ही है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

नात्ये वार्यपुरुषः नपश्यो मृत्युं पश्यति नरोगं नोतदुःखतां तदुत्तमः पुरुषो सोपजनंस्मरन्निदंशरीरं एवमेवास्य परिद्रष्टुरिमाः षोडशकलाः पुरुषायणाः पुरुषं प्राप्यास्तं गच्छन्ति तस्माद्धापनम्म-

न्मनोमयादन्योन्तर आत्माविज्ञानमय इत्याद्याः हरेरधीनमिति भगवदनुग्रह जन्यज्ञान क्रिया शक्ति कमित्यर्थः कर्तृत्वं करणत्वं च स्वभावश्चेतना धृतिः यत्प्रसादादिमे सन्ति न सन्ति यदुपेक्षयेति श्रुतेः द्रव्यं कर्म च कालश्च स्वभावो जीव एव च । यदनुग्रहतः सन्ति न सन्ति यदुपेक्षयेति स्मृतेश्चयस्य भगवतो नंदशक्तेः श्रीकृष्णस्यानुग्रहा देवद्रव्यादयः सन्ति निजाभिमं स्वकार्य्यं समर्था भवन्ति यदुपेक्षया—

भाषाकृत-प्रकाशिका ।

अरे याविज्ञाता पुरुष को कैसे जानै यह पुरुष ही जाननवारो है जो ऐसे आत्मा को देखे है सो मृत्यु रोग दुखों को नहीं देखे सो उत्तम पुरुष समीपीजनों को और अपने शरीर को भूल जाय है या सर्वत्र देखवे वारे के ये सोलह कला वारे पुरुष के अयन लिङ्ग शरीर पुरुष को पाय के अस्त होजाय है तासे या मनोमयते अन्तरात्मा विज्ञानमय अन्य है इत्यादि श्रुति हैं और यह जीव हरि के अधीन है भगवान की अनुग्रहसे याको ज्ञान क्रिया शक्ति होंय हैं सोई प्रमाण हैं कर्त्तापनो व कर्णपनो स्वभाव चेतना धृति या जीवके उन भगवान के प्रसाद से होंय हैं हरि न चाहैं तौ नहीं होंय यह श्रुति है स्मृति में भी लिखा है द्रव्य कर्म काल स्वभाव जीव जाकी कृपासे हैं और

ताकी उपेक्षा से नहीं है यह भगवान जिनकी अनंत शक्ति ऐसे श्रीकृष्ण की अनुग्रहसे द्रव्यादिक हैं अर्थात अपने अभिप्रेतकाम करवे में सामर्थ्यवान ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

यस्यानुग्रहं विना न समर्था भवन्तीति श्रुतिस्मृत्योरर्थः एतदुक्तं भवति तत्त्वं द्विविधं स्वतंत्रं परतंत्रं च स्वतंत्रं हरिः अन्यदस्वतंत्रं स्वातन्त्र्यमुद्दिष्टं तच्च कृष्णेन चापरे। अन्यथा तं स्वातन्त्र्यं यामसत्त्वं विद्धि भारतेति महाभारतोक्तेः तत्र परतंत्रतत्त्वं भावाभावभेदेन द्विविधं प्रथमप्रतीतौ अप्रतीत्युपलभ्यते यः समाधः यस्य नाऽन्यो निवर्त्यते सोऽभावः तथा चरतोलयः अत्र घटोऽस्ति अत्र घटोऽस्ति ॥ एवं शब्दप्रयोगः अस्ति घटाभाव इत्याद्यः तत्र चेतनाचेतन भेदेन भावो द्विविधः चेतयतीति चेतनः अनेकविधोऽचेतनः तत्र चेतनो द्विविधः मायावृतस्तदनावृतश्चेति मायासम्बन्धान्मा

भाषा कांति प्रकाशिका

होंय हैं और उनकी कृपा विना कुछ सामर्थ नहीं यह श्रुति स्मृति को अर्थ है ऐसे जानौ कि तत्त्व दो प्रकार को एक स्वतन्त्र एक परतंत्र, तामें हरि स्वतन्त्र है और सब परतन्त्र अर्थात उनके आधीन है सत्त्व को स्वतन्त्रता उद्देश करी है सो केवल कृष्ण में है और में नहीं पाते है भारत मवों को स्वतंत्रता न हो वैसे असत्त्व जानौं यह महाभारत

में कह्यो तामें भी परतंत्र तत्त्व दो प्रकार को भावरूप अभावरूप प्रथम प्रतीति में है ऐसे जो पायो जाय सो भावरूप और जो नहीं प्रतीति होय सो अभाव तामें प्रतीति जैसे यहां घट है यहां पट है यहां घट नहीं है यहां पट को अभाव है इत्यादिक भाव भी दो प्रकार को चेतन अचेतन जो चेतन करावे वह चेतन तासे विपरीति अचेतन, अचेतन भी दो प्रकार को माया से ढक्यो विना ढक्यो माया को जामें सम्बन्ध सो ढक्यो—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

यावृतः मायया अन्यं च धावनावृतः वैनतेयानंतादिस्तसुराः स्व शक्तेः सर्व नियन्तुरनन्या पेक्षमहिमैश्वर्यस्य भगवतो माय अनावृतत्वं स्वाधीनत्वेनैव सिद्धमिति हरेः स्वाधीनत्वं तदन्यस्य तत्पी नत्वमिति शरीरस्थं योनिस्थादिस्वात्मकृतकर्मवशात्ये देहान्तरप्राप्तिर्नित्येश विधं जीवं विदुरित्यर्थः ॥ उक्तंच श्रीगीतासु वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ॥ तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्य न्यानि संयाति नवानि देही ॥ शरीराणि च जरायुजांडज स्वेदजोद्भिजा ख्यानि तत्र जरायुजानि मनुष्यादीनि अंडजानि स्वेदजोद्भिज्जानि वृक्षा

मायाकार्यप्रकाशिका

जाको माया से सम्बन्ध नहीं सो नहीं ढक्यो तासे वैनतेय (गरुड़) अनंत (शेष)

आदि ये सब, जाकी महिमा ईश्वर्य्य और कोई की परवाह न राखे ऐसे सब शक्ति वारे सब के नियंता जो भगवान तिनकी माया से ढके नहीं हैं काहेसे कि उनके दास हैं तासे हरि ही कौं स्वाधीनता सिद्ध भई और सब उनके आधीन हैं आगे शरीर संयोग इत्यादि को अर्थ करैं हैं अपने किये भये कर्म तिनके वशते अनेक देहों को प्राप्त होंय या प्रकार कर के जीवों को जानते भये यह अर्थ है सोई गीता जी में कह्यो जैसे यह मनुष्य पुराने वस्त्र त्याग करके अन्य नवीन वस्त्र धारण करै हैं तैसे ही जीर्ण शरीरों को त्याग करके और नवीन देह को जीव प्राप्त होय है तामें शरीर की चार खान हैं जरायु जो झिल्लीसे उत्पन्न होंय अंडासे जन्में पसीना से उत्पन्न भये पृथ्वी फोड़ के ऊंचे उत्पन्न भये जरायु के मनुष्य पशु आदि क अंडा के पक्षी—

सरीसृपादीनि प्रस्वेदाज्जातानि यूकामशकादीनि उद्भिज्जानि पृथ्वी भुवं भित्त्वा जातानि वृक्षगुल्मलतादीनि॥ अणुमिति अणुपरिमाणमित्यर्थ

त्वोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यो यस्मिन् प्राणः पंचधा संविवेश अणुर्ह्येष आत्मा यं वा एते सिनीतः पुण्यपापे बालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितस्य च ॥ भागो जीवः स विज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते इत्यादिश्रुतेः जीवो ऽणुपरिमाणः उत्क्रान्तिमत्त्वात् [illegible] अनुमानाच्च गुणिनो ऽत्यन्तं दीपप्रभावद्गुणव्याप्त्या पादे मे सुखं शिरसि मे वेदनेत्यादि युगपदनुभवोपपत्तेः ननु आत्मनोऽवयवानाम् विशीर्णत्वप्रसंगः अनेकेषाम् अवयवानां भूतानां विनाशप्रसंगात् दोषश्चेत्

भावार्थप्रकाशिका

सांपादि पसीना से भये खटमलादिक पृथ्वी फोड़ के भये वृक्षगुल्मलतादिक अब अणु को अर्थ करैं हैं यह जीव अणु परिमाण है सोई श्रुति में है यह अणु परिमाण आत्माचित्त करके जानवे योग्य है जामें पांच प्रकार के प्रान प्रवेश होते भये अणु यह आत्मा जामें दोनों पाप पुण्य बंधे हैं। केश के अग्रभाग को सौ बट करौ फिर तासवें बट को सौ भाग करौ सो जीव को स्वरूपता के परिमाण जानो सो मोक्ष होवे के योग्य है यह श्रुति है जीव सूक्ष्मपरिमाण को है जैसे पक्षी घोंसला सें जावैं तैसे शरीरसे जाय आवै है गुणी(जीव) अणु परिमाणभी है पर जैसे दीपक प्रभा व्यापक रहै तैसे ही गुणकी व्याप्ती से पांव

मेरे में सुख है शिर में पीड़ा है यह एक ही बारमें अनुभव होय है तामें शंका है कि आश्रय के अवयव ही निश्चय टूट के फैले हैं ताको प्रभा कहैं सो नहीं ऐसे मत कहौ मणि और सूर्य को भी यारीति से नाश होजायगो और दीपमें अवयवी की प्रतिपत्ति कबहूं कदाचित नहीं होयगी ।

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

व्यवच्छिप्रतिपत्तिः कदाचिदपि न स्यात् प्रतिदेहंभिन्नमिति अनेकमित्यर्थः अनेन एकजीववादो निरस्तो वेदितव्यः श्रुतिश्च नित्योनित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विदधाति कामानिति एवं जीवानामीशजीवयोश्च परस्परभेदोपि सिद्धः नाहं देवो नाहं सर्वज्ञो नाहमीश्वर इत्यनुभवाच्च अहमर्थस्य चात्मत्वमुपस्थाप-यामः द्वासुपर्णासयुजासखायासमानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलंस्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योभिचाकशीति । ऋतं पिबंतौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्द्धे छाया तपौ ब्रह्मविदो वदंति पंचाग्नयो ये च त्रिणाचिकेताः अंतःप्रविष्टः शास्ता जनानां सर्वात्मेत्यादि श्रुतिश्च परजीवयोः स्वरूपैक्यं निषेधयति—

भाषार्थप्रकाशिका ।

यह जीव प्रति देह में भिन्न अर्थात न्यारो न्यारो है याते जो एकही जीव बतावैं हैं तिन को सिद्धांत दूर कियो जानौ श्रुतिमें

भी है जो नित्यों को नित्य चेतनों को चेतन बहुतों को एक ही सब कामना देवै याप्रकार जीव से जीव को भेद जीवों से ईश्वर को भेदपरस्पर दिखायो मैं चैत्र नहीं मैं सर्वज्ञ नहीं मैंईश्वर नहीं यहसबको अनुभव है अहमर्थ आत्मा में है यह ऊपर वर्णन करेंगे दो पक्षी एक साथ रहैं सखा दोनों एक वृक्ष पर बैठे उन दोनों में एक वृक्ष के फल स्वाद पूर्वक खावै दूसरो बिना भोजन किये प्रकाशपा व तो भयो है त्रिनाकचेता यालोकमें ऋतसुकृत को दोनों पीवेबाले एक गुहा में प्रवेश भये परम पराद्धे पर्य्यंत तिनको धूप छाया बतवेद के जानने बाले और पंचाग्नि ऐसे कहैं हैं सबको जो आत्मा जनोंके अन्तरमें प्रवेश होके सबको शासन करै है या श्रुति से भी ईश्वर व जीव को स्वरूप की एकता को निषेध होय है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

शारीरश्चोभयेऽपिहि भेदेनैनमधीयते भेदव्यपदेशाच्चान्यः अधिकं तु भेदनिर्देशादित्यादिषु सूत्रेषु च य आत्मनितिष्ठन्नात्म- नोऽन्तरोयमात्मा नवेद यस्यात्मा शरीरं य आत्मानं अन्तरोयमयति

प्राज्ञेनात्मनासंपरिष्वक्तः प्राज्ञेनात्मनान्वारूढ इत्यादि श्रुतिभिरुभयोर्व्यक्तिभेदनिर्णयात्षड्विधतात्पर्यलिंगोपेतश्रुतिगतयोर्भेद परमार्थ सत्त्वेव भवति लिंगानितु उपक्रमोपसंहाराभ्यासापूर्वताफलार्थवादोपपत्त्याख्यानि लिंगं तात्पर्यनिर्णये प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तदाद्यन्तयोरुपपादनमुपक्रमोपसंहारौ यथा आथर्वणे। द्वासुपर्णेत्युपक्रमः परमं साम्यमुपैतीत्युपसंहारः प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तन्मध्येपौनःपुन्येन प्रतिपादनमभ्यासः —

भाषा कांति-प्रकाशिका।

शरीर दोनों के भेद करके याको अध्ययन करै है भेद के व्यपदेश ते अन्य है अधिक तो भेदके निर्देशते इत्यादिक सूत्रोंमें भी भेद सिद्ध है जो आत्मा में तिष्टै जो आत्माके अन्तर जाको आत्मा न जानै जाको आत्मा शरीर है जो आत्मा के अंतर प्रेरणाकरै जो प्राज्ञआत्मा करके आलिंगित प्राज्ञआत्मा करके अन्वारूढ इत्यादिक श्रुतिसे भी दोनों ईश जीव की व्यक्ति को भेद निर्णय कियो छय प्रकार के तात्पर्य के लिंग की जो श्रुतिनि में भी जो भेद प्राप्त है सो परमार्थ करके जानो जाय है तामें छयलिंग बतावें हैं उपक्रम(आरंभ)उपसंहार (समाप्ति) अभ्यास अपूर्वता फल अर्थवाद उपपत्ति लिंग के तात्पर्य के निर्णयकरवे में प्रकरण में जो

प्रति पाद्य वस्तु ताको आदि अंत उपपादनकर वेको उपक्रम व उपसंहार कहे हैं सोई अथर्वण में सुपर्ण दोऊ यह उपक्रम है परम समता को प्राप्त होय यह उपसंहार है प्रकरण में जो प्रति पाद्य ताको वारम्वार प्रतिपादन करनो यह अभ्यास है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

यथा तत्रैव तयोरन्यः अमश्नन्नन्यः अन्यमीशमितिप्रतिपादनं शास्त्रैकगम्येश्वर प्रतियोगिकस्य कालत्रयाबाध्यभेदस्य शास्त्रं विना अप्राप्तेरपूर्वताफलन्तु प्रकरणप्रतिपाद्यस्य पूर्वोक्तभेदस्य श्रवणमार्थं प्रयोजनं यथापुण्यपापे विधूयेति प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तत्रप्रशंसनम-र्थवादः यथा तस्य महिमानमेतीतिश्रुतिरूपः प्रकरणप्रतिपाद्यार्थसा-धने तत्र तत्र श्रूयमाणायुक्तिः सोपपत्तिः यथा तत्रैवान्योऽन्तर्यामित्युप-पत्तिः किञ्चान्तर्यामी ब्राह्मणे षड्विधतात्पर्यलिङ्गोपेतं वाक्यं भेदप्रमाणं तथाहि वेत्थत्वं कार्यन्तर्यामिणमित्युपक्रमः एष ते आत्मा अंतर्यामी-त्युपसंहारः एष ते आत्मेत्यादौ बहुकृत्वोऽभ्यासः अंतर्यामित्व-स्याप्राप्ततया पूर्वतासर्वेभ्यश्चिच्छिदित्यादि--

भाषाकान्ति-प्रकाशिका।

जैसे तहां ही दोनोंमें अन्य बिना भोजन किये अन्य अन्य ईशको प्रतिपादन है शास्त्रसे ही प्राप्त ईश्वर प्रति योगी को भेद तीन काल में जाकी बाधा नहीं ऐसे भेद को शास्त्र बिना यह अप्राप्ति में अपूर्वता है प्रकरणमें प्रति पाद्य

पहिलो कह्यो जो भेद सुनवे को प्रयोजन सोई फल जैसे पुण्य पाप धोयके इत्यादि प्रकरण प्रति पाद्य को तहां तहां प्रशंसाकरनो यह अर्थ वाद है जैसे ताकी महिमा को प्राप्त होय यह श्रुति रूप प्रकरण प्रतिपाद्य के साधन में जो तहां तहां युक्ति सुनी जांय सोई उपपत्ति जैसे तहांही अन्य विनाभोजन किये ही यह उपपत्ति है अंतर्यामी ब्राह्मणमें भी छय प्रकारके तात्पर्य लिंग युक्त के जो वाक्य सोभी भेद के प्रमाण हैं तैसे ही तू अंतर्यामी को जाने है यह उपक्रम है यह तेरो आत्मा अंतर्यामी यह उपसंहार है यह तेरो आत्मा इत्यादि इक्कीस वार अभ्यास है अंतर्यामी पनेकी आम्रेडिता अपूर्वता

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्धे

फलं तच्चेत्त्वं याज्ञवल्क्यसूत्रमविद्वांस्तच्चांतर्यामिणं ब्रह्मगवीरु-दजसे मूर्धा ते विपतिष्यतीति निन्दारूपोर्थवादो यस्य पृथ्वी शरीरं यं पृथ्वी न वेदेत्याद्युपपत्तिः ननु जीवोहि एकस्तस्य कथं नानात्वमुच्यते स्वप्नवद् धर्मोक्षगुरुशिष्यादिव्यवस्थोपपत्तेरितिचेत् नैव तस्मिन् कस्मिन् सुप्ते निखिलजगत्प्रतीत्यापत्तेः सृष्टिमारभ्य प्रलयपर्यन्तमखण्ड स्यैव जीवे असंभवाच्च परात्कमहत्त्वमित्यादिबुद्धिविषयत्वव्यवस्थानु-पपत्तेश्च योगिनः कामव्यूहे नान्तःकरणतादात्म्यारोपोऽप्यहमित्येव सर्वत्र प्रतीतेश्च तदंतः करणान्यैकत्वे याज्ञवल्क्यादीनामप्यैक्यापत्याऽपाय-

व्यूहस्थोबाधाभावः स्यादितिदिक् । कात्स्न्यमर्वसमित्यवादिर्शक्याव्य हारोबोध्यः ॥

भाषाकांतिप्रकाशिका

सो निश्चय ब्रह्म को जाननवारो इत्यादि फल है सो तू याज्ञवल्क्य सून को न जान के अपने अंतर्यामी के वेद की श्रुति को तोड़ैगा तो तेरो मस्तक गिर जायगो यह निंदा रूप अर्थवाद है जाको पृथ्वी शरीर जाको पृथ्वी नहीं जानती भई इत्यादि उपपत्ति है तामें वाद की शङ्का है कि जीव एक है ताको तुम बहुत कैसे कहौ हौ बंधन व मोक्ष गुरू चेला इत्यादि व्यवस्था की प्राप्ति स्वप्न तुल्य है ताको उत्तर है कि ऐसे मत कहौ जो एक जीव कहोगे तो एक के सोये से सब जगत की प्रतीति न होयगी सृष्टि से लेके प्रलय पर्यंत कोई जीवको सोना न बनैगो और प्रत्यक्षा परोक्षा भी असंभव होयगी और मैं व तू इत्यादि बुद्धि के विषय की व्यवस्था भी न प्राप्ति होयगी काय व्यूह के विषय भी नाना अतःकरण आरोपण करैं हैं तामें भी अहं (मैं) यह सर्वत्र प्रतीत हो

यहै जो सब में अंतःकरण एक होय तो वाहिर की इन्द्री भी एक ही होंयगी तब काय व्यूह न बनेगी यह दिशा मात्र दिखाई अब ज्ञातृत्वंत को अर्थ करैं हैं ज्ञातृत्व वंत के आगे आदि

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तथाच ज्ञातृत्व कर्तृत्व भोक्तृत्वादयोपि स्वाभाविका धर्मा जीवे संतीत्यर्थः तत्रकेचित् गौणः केचित् स्वरूपभूताइत्यादि विवेकस्त्वन्यत्र दृष्टव्यः ननु ज्ञातृत्वं नाम ज्ञानक्रियाकर्तृत्वं तच्च विक्रियात्मकमित्यविक्रियस्यात्मनो मतं भवति अपितु अंतःकरण-रूपाहंकारस्य इति चेत उच्यते ज्ञातृत्वं हि ज्ञानगुणाश्रयत्वं ज्ञानं चास्यनित्यस्य स्वाभाविकधर्मत्वेन नित्यं स्वयमपरिच्छिन्नं ज्ञानं संकोचविकाशार्हं एतज्ज्ञानमिन्द्रियद्वारेण प्रसरति तत्प्रसरेतुकर्तृत्वमस्त्येव तच्चनस्वाभाविकमपितु कर्मकृतमित्यविक्रियास्वरूपएवा आत्मा एवंरूपमविक्रियात्मकं ज्ञातृत्वं ज्ञानस्वरूपस्यात्मनएवेति नकश्चिदपि जडस्याहंकारस्य ज्ञातृत्वसंभव इतिदिक—

भाषाकांतिप्रकाशिका।

शब्द को और अध्याहार करनो होयगो तासे ज्ञातापनो कर्त्तापनो भोक्तापनो इत्यादि स्वाभाविक जीव के धर्म हैं तामें केतने गौण हैं कोई स्वरूप भूत हैं इन को विचार अन्य त्र देख लेनो तामें वादी की शंका है कि ज्ञातृत्व नाम ज्ञान क्रिया कर्त्तापनो ये विकार आत्मक हैं और आत्मा अविकारी है तामें

नहीं बनसकैं हां अंतःकरण रूप अहंकार में बने हैं ऐसे जो कहैं ताको समाधान यह है कि ज्ञातृत्वनाम ज्ञानगुण को आश्रय पनो सो या नित्य जीवको ज्ञान स्वभाविक धर्महै तासे सो भी नित्य है और सो ज्ञान स्वयं तो अखन्ड है पर संकोच विकाशपावतो रहे है यह ज्ञान इन्द्रियों के द्वारा फैले है ताके फैलबे से याको कर्तृत्व होय है सो स्वाभाविक नहीं है किन्तु कर्मको कियो भयोहै याते आत्मा अविकारात्मक है तासे ज्ञातृत्व ज्ञान स्वरूप आत्मा को है जडरूप अहंकार को कदाचित ज्ञातृत्व संभव नहीं यह दिशा मात्र दिखाई ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पत्र ६

एवं ज्ञातृतया सिद्ध्यन्नहमर्थएव प्रत्यगात्मानज्ञप्तिमात्रं अहंभावविगमे तु आत्मनोऽपि न प्रत्यक्त्वसिद्धिः एवं चाहमित्येकाकारे-णात्मनः स्फुरणात् सुषुप्तावपि नाहं भावविगमः एवं हि सुप्तोत्थितस्यप्रत्यवमर्शः सुख महमस्वाप्समित्यनेन प्रत्यवमर्शेन तदानीमप्यहमर्थस्यैवात्मनः सुखित्वं ज्ञातृत्वं च गम्यते एतावन्तंकालं नकिंचिदहमज्ञासिषमित्यत्र नञः कस्य प्रतिषेधः अहमर्थो वेद्यमिति वेदितुरहमर्थस्यानुवृत्ते र्वेद्यविषयोहि सः प्रतिषेधः ननुमामप्यहं नज्ञातवानित्यहमर्थस्यापि तदानीमननुसंधानं प्रतीयत इति चेत् उच्यते अहमर्थस्य ज्ञातुरनुसंधानं नं स्वरूपं निषिध्यते अपितु प्रबोधसमये अनुसंधीयमानस्याहमर्थस्य वर्णाश्रमादि—

या प्रकार ज्ञातृता करके सिद्ध भयो जो अहंअर्थ सो प्रत्यगात्मा में हैं ज्ञप्ति मात्र कदाचित नहीं अहंभाव जो नर है तौ ज्ञप्ति को भी प्रत्यकपनो सिद्ध नहीं है याप्रकार अहं और आत्माकी एकाकारसे स्फूर्ति होय है तासे सुषुप्ति में भी अहंभाव वनोग्हे है सोयके उठै तवऐसेविचार करै है कि मैं सुखसे सोयो या विचार से ता समय भी अहंअर्थ वारे आत्मा ही के सम्बन्ध में सुखपनो ज्ञातृत्वपनो जानो जाय है इतने कालपर्य्यन्त मैं कुछ नहीं जान तो भयो या स्थलमें समग्रको प्रतिषेध नहीं है में नहीं जानतो भयो यामें जानवे वारे को अहंअर्थ तौवनो ही है जानवे को जो विषय ताही को निषेध करै है तामें शंका है कि मैं अपनपेको भी नहीं जानतो भयो याप्रकार तासमय अहंअर्थ को भी अनुसन्धान नहीं प्रतीत होय है एसे जो कहैं ताके लिये कहैं हैं कि अहंअर्थ ज्ञाता में अनुवृत्त है ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

विशिष्टता अत्र च जागरितावस्थानुसंहितजात्यादिशिष्टो-स्मदर्थो मामित्यंशस्य विषयः स्वापावस्था असिद्धो विशदत्वानुभवै-कताश्रयश्चाहमर्थोहमित्यंशस्य विषय इति विवेकः अपिच सुषुप्ता-वात्माज्ञानसाक्षित्वेनास्त इति हि मायावादिनां प्रक्रिया साक्षित्वं च साक्षात् ज्ञातृत्वमेव नह्यजानतः साक्षित्वं ज्ञातैयलोकवेदयोः साक्षीति व्यपदिश्यते नज्ञानमात्रं आह च भगवान पाणिनिः साक्षाद्द्रष्टरिसंज्ञायामिति साक्षात् ज्ञातर्य्येवसाक्षिशब्दं अयंच साक्षी जाना-मीति प्रतीयमानोस्मदर्थ एवेतिकुतस्तदानीमहमर्थो नप्रतीयते अन्य-थात्मानोपि तदानीमप्रकाशापत्तेः एवं मोक्षदशायामपि नाहं भावविगमः—

भाषा कांति प्रकाशिका

तासे स्वरूप को निषेध नहीं करें जागती समय में अहंअर्थ की वर्णा आश्रमादि विशेषणा तिन को निषेध करें हैं यास्थल में यह विचार है जाग्रत अवस्था में जात्यादि कर के विशिष्ट जो अस्मदर्थ सो मैं या अंश को विषय है स्वाप अवस्था में प्रसिद्ध विशद अपने अनुभव के एक आश्रय को अह मर्थ अहंया अंश को विषय है सुषुप्ति में आत्मा ज्ञान को साक्षी है यह माया वादियों की प्रक्रिया है साक्षी पनोसाक्षात जानबेवारे को होय है विना जाननबारे की साक्षी नहीं

होय ज्ञाता ही लोक वेद में साक्षी मानो जाय है ज्ञान मात्र नहीं सोई भगवान पाणिनि ने कह्यो है साक्षात देखवेवारे में ही वर्त्तै है साक्षात ज्ञाता केविषय ही साक्षी शब्द वर्त्तै है मैं जानौ हौं ऐसे प्रतीत होय जो सोऽस्मदर्थ ही है कैसे ता समय अहं अर्थ की प्रतीति नहीं होय जो ऐसो अहं अर्थ न प्रतीत होय तौ ता समय आत्मा को भी प्रकाशन होय याही प्रकार मोक्ष दशा में भी अहं भाव नहीं जाय ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अहंभावविगमेत्वात्मना शरवापवर्गो द्रविडमंडकन्यायेन प्रतिज्ञातः स्यात् नचाहमर्थो धर्ममात्रं येन तद्विगमेप्यविद्यानिवृत्ताविव स्वरूपमवतिष्ठेत प्रत्युत स्वरूपमेवाहमर्थ आत्मनः ज्ञानं तुतस्य धर्मः अहं जानामीति ज्ञानं मे जातमिति चाहमर्थ धर्मतया ज्ञानप्रतीतेः पर्तेन चाहं जानामीत्यस्मत्प्रत्यये योनिदमंश. प्रकाशैकरसश्चिद्रूपदार्थः स आत्मातस्मिंस्तद्बलनिर्भासिततया युष्मदर्थलक्षणो हं जानामीति सिद्ध अहमर्थः चिन्मात्रातिरेकी युष्मदर्थएवेत्युपपादितं अहंप्रत्ययगोचरोऽस्मदर्थः युष्मत्प्रत्ययविषयोयुष्मदर्थः अत्राहं जानामीति सिद्धो

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

अहं भाव जो नष्ट है तौ मोक्ष आत्माको नाश बोलो जाय जैसे दक्षिण देश में भातको

मांड़ पतरो भातमें मिलाय और मीठी लकड़ी से चलाय देंय सो मांड़ को स्वरूप जैसे नष्ट होजाय तैसे मोक्ष समुझनो अहं अर्थ धर्म मात्र नहीं है जासे ताके चले जाये परभीस्वरूप रह्यो आवै जैसे अविद्या निवृत भये पीछे स्वरूप स्थिर रहै किंतु अहं अर्थ आत्मा को स्वरूप ही है ज्ञान ताको धर्म है मैं जानू हूं ज्ञान मोको उत्पन्न भयो या प्रकार अहं अर्थ में ज्ञान की प्रतीति को सम्बन्ध धर्म मात्र है या करके जिनको मत है मैं जानूं हूं यह अस्मत-प्रत्ययके विषयजो इदं अंशसो प्रकाश मात्ररस चित्पदार्थ नहीं है सोआत्मा ताके विषय है ताके बलसेप्रकाश मान युष्मदर्थलक्षण भी मैंजानूं हूं यहसिद्ध भयो याते अहं अर्थ चिन्मात्रसे न्यारो सो ईयुष्मदर्थ है यह पक्ष दूर कियो अहं प्रत्यय से सिद्ध भयो अस्मदर्थ युष्मतप्रत्यय से सिद्ध युष्मदर्थ यह जाननो जिन को मत है।

सिद्धांतरत्नावलिपूर्वार्द्ध

ज्ञातायुष्मदर्थवचनं मे माता वंध्या तिवज्ज्या हताथं चा किंच सदा नीमहमर्थाभावे हंनिदुं :स्वा:स्वामि:शुस्वाममोक्षश्राभावेच तत्साधने प्रव

त्वंने स्वसाधनानुष्ठानेन यदहमेव न भविष्यामि इत्यवगच्छेदयमयं द
सौ मोक्षकथाप्रस्तावगंधतः॥एवं चाधिकारिणो भावादेव सर्वमोक्षशा
स्त्रमप्रमाणं स्यात् एतेनमोक्षदशायामहमर्थो नानुवर्त्तते इत्यपाकृतं मयि
नष्टेऽपि मत्तोऽन्यः कश्चित् प्रकाशमात्रमवतिष्ठते इतिमत्वा तत्प्राप्तये कस्या
प्यत्नो नभविष्यति तस्मादहमर्थस्यैव आत्मत्वेन सिद्धत्वात् प्रत्यगात्मत्वं
मुक्तानामपि वामदेवादीनामहमित्येवानुभवात् तथाच श्रुतिः तद्धै
तत्पश्यन्नृषिर्वामदेवः प्रतिपेदे अहंमनुरभवं

भाषा कांति-प्रकाशिका ।

अब मैं जानूं या कहवे से युष्मदर्थ वचन को ज्ञाता सिद्ध होगयो तौ जैसे कोई कहै कि मेरी माता बांझ है तारीति से अर्थ को व्याघात होय जो अहमर्थ न होय तौ मैं दुःख से छूट जाऊं ऐसे विचार के मोक्ष में राग उपजै है तब ताके साधन में प्रवर्त्त होय है जो ऐसे जानै कि साधनके अनुष्ठान करवे से मैं ही न रहूंगो तौ मोक्ष कथा की गंध से भी दूर भागे ऐसे जब अधिकारी न रहैंगे तौ मोक्ष को शास्त्र अप्रमाणीक होजाय यासे जो ऐसे कहैं है कि मोक्षदशा में अहंअर्थ नहीं रहै सो मत भी दूर कियो मेरे नष्ट भये पीछे मेरे से न्यारो कोई और प्रकाशमात्र बाकीरहै है ऐसे मान के ताकी प्राप्ती को कोई उपाय न करैंगो

तासे अहं अर्थ की ही ज्ञातृत्व करके सिद्धि भयी सोई प्रत्यगात्मा है मुक्त जो वामदेवादि कहैं उनको भी अहं अर्थ को अनुभव है श्रुति है सो ऋषि वामदेवता को देखके प्राप्त होते भये मैं मनु हो तो भयो।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

सूर्य्यश्चेति किंच भगवतोप्येवमेव व्यवहारः हंताहमिमास्तिस्रोदेवता बहुस्यां प्रजायेय सएक्षतलोकान्नु सृजा इति तथा यस्मात्क्षरमतीतोहमक्षरादपिचोत्तमः। अतोस्मिलोकेवेदेचप्रथितः पुरुषोत्तमः। अहमात्मागुडाकेशसर्वभूताशयस्थितः। नत्वेवाहं जातुनास महंकृत्स्नस्यजगतः प्रभवः प्रलयस्तथा अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्त्तते। तेषामहं समुद्धर्त्ता मृत्युसंसारसागरात्। अहं बीजः प्रदः पिता वेदाहमसमतीतानि। अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचेत्यादि नन्वहमित्येवात्मनः स्वरूपं चेत्तर्हि कथं भगवताहंकारस्य क्षेत्रांतर्भाव ऊचदिश्यते। गीतासुमहाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेवेति चेत् शृणु।

भाषाकांतिप्रकाशिका

मैं सूर्य्य होतो भयो विशेष का कहैं भगवानको भी यह व्यवहार देखो जाय है श्रुति है हर्ष से कहैं कि ये तीन देवता मैंहीहूं मैं उत्पन्नहो बहुत होजाऊ या संकल्प से माया की ओरी देखते भये लोकों की रचना करते भये तैसेही गीता जी के प्रमाण दिखावैं हैं याते क्षर से

न्यारो अक्षर से भी उत्तम हौं तासे लोक वेद में प्रगट पुरुषोत्तम मैं हौं हे अर्जुन सब भूतौं के आशयमें स्थिति आत्मा मैं हूं मैं कदाचित पहिले नहीं होतो भयो मैंसब जगतको उत्पत्ति प्रलय करों हौं । मोही से सब प्रगट होय मो में सब वर्तैं है तिन को संसार सागर से मैं उद्धार करवे वालो होऊ हौं सोमैं बीजको देने वालो पिता हौं मैं सब भूत भविष्य वर्तमान जानौं हौं मैं तोको सब पापोंसे छुटाय देंवगो तू मत शोचै इत्यादि तामें वादी की शंका है कि जो अहं आत्माको स्वरूपही है तौ भगवानने अहंकारको क्षेत्र नाम शरीरके अंत भूत कैसे वर्णन किया सोई गीता जी में कह्यो महाभूतानि अहंकार बुद्धिः अव्यक्त या प्रकारताको सुनौं

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

सर्वेष्वपि स्वरूपेष्ववशेष्वहमित्येवोपदेशादहमित्येव प्रत्यगात्मनः स्वरूपं तथैवात्मस्वरूपप्रतिपत्तेश्च अव्यक्तपरिणामभेदस्य त्वहंकार-स्यानहमहंकरोतीत्यभूततद्भावे च्विप्रत्ययमुत्पाद्य क्षेत्रांतर्भावो भग-वतोपदिश्यते स्वल्पमात्मनिदेहे ऽहं भावकरणहेतुत्वेनाहंकार इत्यु-

च्यते अयमेव गर्वापरनामोहंकारः शास्त्रे बहुशोहेयत्वेनोच्यते तस्मा-द्बाधकाभावेनाहं बुद्धिरात्मविषयैव शरीरविषया त्वहंबुद्धिरविद्यैवेति सिद्धमहमर्थस्यात्मत्वं ननु अनेकजीववादे एकस्याचिज्जीवानां समाप्त्या संसारसमाप्तिः स्यादित्यत आह यमनंतमाहुरिति नारदादय इति शेषः यतस्तादनंता जीवास्तस्मात्सर्वजीवसमाप्त्या संसारसमाप्तिरित्यर्थः आहुरित्यनेन प्रमाण—

भाषाज्ञानप्रकाशिका

जहां जहां स्वरूप को उपदेश है तिन सब उपदेशोंमें अहं प्रत्यक आत्मा को स्वरूप ही बतलायो है और आत्मस्वरूपकी प्रतिपत्ति है और अव्यक्त परिमाण भेदको जो अहंकार सो अनहं को अहं करै अभूततद्भाव में च्वि प्रत्ययउत्पादन करके क्षेत्रके अंतर्भाव जो भगवान ने उपदेश कियो सो अनात्मा देह में अहं भाव करनो है ताकारण ते ताको अहंकार उच्चारण करैं हैं याको दूसरो नाम गर्व भी है यह शास्त्र में बहुत प्रकार से त्यागने योग्य लिखो है ताते बाधा रहित अहं बुद्धि साक्षात् आत्मा के विषय में है शरीर विषय कअहंबुद्धि अविद्या ही होय है यारीतिसे अहमर्थ को आत्मत्वसिद्ध भयो तामें फिर वादी

की शंका है कि जो तुम्हारो अनेक जीव हैं ऐसो कहनो है तो जीव जब समाप्त होजांयगे तो संसार भी समाप्त होजायगो ताको समाधान यह है कि जीवों को नारदादिक अनन्त नाम जिनको अंत नहीं ऐसे बतावें हैं तासे जीवोंकी समाप्ति नहीं न संसारकी समाप्ति

सिद्धांतरत्नांजलिपूर्वार्द्ध

सिद्धान्तं सूचयति प्रमाणं च स्मृतिः अतीतानागताश्चैव यावन्तः सहिताः क्षणाः। ततोऽप्यनंतगुणिता जीवानां राशयः पृथगिति न देवं जीवस्वरूपं निरूपितं परंतु अघटघटनापटीयस्यागुणमय्याः हरेर्मायाः या सं सर्गेणान्यथात्वमपि जीवे प्रतीयते तन्न भगवदनुग्रहादेव निवः र्तत इत्याहमूल अनादीतिअनादिमायापरियुक्तरूपं त्वेनंविदुर्वैभगवत्प्र सादात्। मुक्तं च भक्तं किलबद्धमुक्तं प्रभेदबाहुल्य मथापि बोध्यं। टीकाअनादिमायायापरियुक्तं संयुक्तं संवलितं रूपं स्वरूपं यस्य त- मेनं जीवजातं प्रसादादनुग्रहात् श्रीभगवतः मुक्तं निरतिशयानंदरूपं मुक्तिमंतं भक्तं स्वाभाविकर्यानिमित्तापरिच्छिन्नं।न्द्वयवंतं विदुः सनका- दयः इतिशेषः।

भाषा कांति प्रकाशिका

या प्रमाण को भी सूचन करें हैं स्मृति में जितने क्षण अतीतनाम होगये अनागत नाम होंयगे तासे भी अनंतगुण जीवों की न्यारी २ राशिहैं याप्रकार जीवस्वरूप निरूपणकियो परंतु अघट जोघटैनहींऐसी घटनाकीप्राप्ति कर

वे में कुशल गुणमयी हरिकीमाया को सम्बन्ध पायके जीवको उलटो पनोप्रतीतहोयहै अर्थात अपनो स्वरूप भगवत सम्बंध छोडके देहमे अ हंबुद्धि राखके ताकेसम्बन्धी सुतकल त्रादिधन धाम मैंपक्कीममतावांधैंहै यहयाजीव कोविपरीत पनो भगवानकी अनुग्रहसे हीनिवृत्तहोयहै ताके लिये मूलकोदूंसरो श्लोक कहैं है अनादि माया से ढकगयो रूपजाको ऐसेजीवको भगवान के प्रसाद सेसंकादिक जानते भये तामें जीवों के भेद वतावैंहैं मूलमे जोजीव एक वचनहै सो जातिउप लक्षणहैं मुक्त नामनिरतिशय आनन्द रूपमुक्ति वाले भक्तनाम स्वाभाविक अपरिच्छि न्न इन्द्रिय वाले किलनिश्चय करके ताके अनंत र और भी वहु मुक्त केभेद वहुत जानवे योग्य हैं

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

श्रीभगवदनुग्रहस्त्वद्विविधः सर्वथा सुखरूपो मदत्वं भावित्वं अ-नुवन्ध मातत्वं भावादिनिर्मितानां सत्त्वेपि तैःपुनर्मोहाभावःप्रथमःस च विभक्तश्च वयस्त्वादिषुद्वितीयस्तु दुःखत्वं भयमानादित्वं सगरोगवत् शिव-न्द्रादिषु यथा श्रीभागवते मया तेकारि मघवन् मन्मर्भगोनुग्रहता। मदनुस्मृतये नित्यंमत्तस्येन्द्रश्रिया भृशमिति भगवदुक्तेःपुनरपिसद्वि-विधः साधनाधीनः साध्याधीनश्च। प्राचीनमंदीकृतत्वं भावी दैन्य-

साध्यः अन्यसाधनहीनेषु भगवदिच्छयावरः ननु भगवदनुग्रहो व्यापकः परिच्छिन्नो वा नाद्यः सर्वेषु तदापत्तेः नान्त्यः अकिंचित्करत्वादिति चेन्न सतोव्यापकस्यापि भगवदनुग्रहस्य वेदांतश्रवणादिद्वारानितान्त करणेन भक्तिमत्स्येव स बंधो जायते ।

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

तामें भगवान की कृपा दो प्रकार की है सर्वदा सुखरूपसे विराजै मदस्तंभभूष करके विराजै मानस्तंभके निमित्तहैं तौभी तिन करके मोहन हीसो प्रथम अनुग्रह सो प्रियव्रत ध्रुव प्रह्लादादि कोंके ऊपर जैसे श्रीभागवत के सप्तम स्कंधमेकह्यो सोप्रह्लाद असुरबालक हो के भी असुर भावसे रहित होतेभये दूसरे पक्षे स्तंभमानादि वारेइन्द्रादि कोंपरजैसे संसार के रोग कीदवा सोई श्रीभागवत दसमस्कन्द मेंहैइन्द्रमैने तुम्हारे ऊपर अनुग्रह करके तुम्हारी यज्ञ भंग करी तुम अतिशय इन्द्रपने की श्री से मतवारे होगये तो तुमको मेरोस्मरण रह्यो आवै यह भगवानने कह्यो फेर भीसो अनुग्रह दोप्रकार की साधन आधीन साध्य आधीन तामें पहिलीग वांदिकों कोमन्दकरके विराजै जौ दीनता तासे मिलै जैसे आचार्य भगवान ने कह्यो कि इन

कृष्णकी कृपादैन्यादिगुणवाले पुरुष पर होयहै औरदूसरी अन्य कोई जिनको साधन नही के वल भगवानकी इच्छासे जैसेयज्ञ पत्नियों परभ ई तामे शंकाहै कि तुम्हारे भगवानकी कृपा परि छिन्न (खंडित)है किंव्यापकहै

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

नान्यत्र यथा तार्किकमते व्यापकस्यापि गोत्वादेः सास्नादिम त्स्वेव सं बंधो नान्यत्र तद्वत् यत्र श्रवणादि न दृश्यते अनुग्रहश्च दृश्यते तत्र जन्मांतरीयं तत्कल्पनीयं किंच यथा पृथ्वी जलव्याप्ता सर्वदेशा-विशेषतः । निम्नस्थले दृश्यते हि समस्तमुदकं स्वयं कृष्णकृपातिप्रस-र्गादै न्यनम्रे षु च तथेति सनत्कुमारवचनादै न्यनम्रे ष्वेव भगवदनुग्र हो नान्यत्रेति सिद्धं अथ बद्धमुक्तभेदद्वाविध्यं बोध्यं अपिशब्दो व-धारणे यद्यपि बद्धमुक्तयोर्मध्ये मुक्तस्यैव प्राधान्यं तथापि प्रत्यासत्त्वा-द्बद्धस्य प्रथमुद्देशः तत्रबद्धाः अनादिकर्मवासनाजन्य—

भाषाक्रांतिप्रकाशिका ।

तामें व्यापक नहीं सब पर होनी चा-हिये अंत की भी नहीं सो कुछ नहीं कर सके ताको समाधान यह है कि अनुग्रह व्यापक भी होके वेदान्त के सुन वेसे जाके हृदय में भक्ति महारानी बसी ताही के सम्बन्ध में कृपा होय है या प्रकरण में वेदान्त नाम भगवत जन्म कर्म गुण रूप

लीला का है काहे से कि आगे भक्तिमत विशेषण पडो है इन के सुने बिना भक्ति असंभव है सोई* श्रीभागवत में है ब्रह्माजी बोले कि जो तुम्हारे चरण कमल कोश की गंध श्रुति पवन की लाई भई कानों के छेद सेसूंघे हैं उन ने परा भक्ति से आप के चरण पकड लिये उन अपने दासों के हृदय कमल को आप नहीं छोड़ौ ॥ जैसे नार्किकों के मत में गोत्वादिशब्द व्यापक भी होके गलासींग बारे पशू ही में सम्बध राखे हैं अन्यत्र नहीं तैसे यहां भी समुझै और जहां श्रवणादिक नहीं दिखाई पडै और अनुग्रह देखी जाय तहां आगे जन्मों को समझ लेना जैसे वृत्रासुर व गजराज या जन्म में कुछ साधन नहीं रज तम को शरीर यहां घोर संग्राम में बड़े२ योगियों को दुर्लभ ऐसी उत्कंठा होती भई ।

(*) श्रीभागवते ये त्वदीय चरणाम्बुज कोशगन्धं जिघ्र निकर्ण-विवरैः श्रुति वात नीतं । भक्त्या गृहीत चरणः परया चतेषांनापैषि नाथ हृदयांबुरुहात्स्वपुं सामिति ॥

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

देवतिर्यङ्मनुष्यस्थावररूपचतुर्विधशरीरितत्त्वं बंधिष्वहंताम-
मतावंतः तेच द्विविधाः मुमुक्षवो बुभुक्षवश्चेति विविधसांसारिक-
दुःखसंदर्शनेनविरक्ता सं तः संसारान्मोक्षमिच्छन्तो मुमुक्षवः तेपि
द्विविधाः।

भाषाकान्ति-प्रकाशिका।

÷वृत्रासुर को इन्द्र के साथ युद्ध करते हरि के दर्शन भये तब प्रार्थना करी है हरे मैं तुम्हारे चरण कमल मूलके जो दास तिनको अनु-दास फेर होऊं और मेरो मन तुम प्राण पतिके गुण स्मरण करौ और वाणी उच्चारण करौ और काया कर्म करौ कोई जो शंका करै कि अजामेल को कोई साधन नहीं वाको मरण समय पार्षद कैसे दर्शन देते भये तौ बेटा के मिष से जो नारायण नाम लियो तो आभास नाम ही परम साधन भयो ताकी महिमा अनर्गल शास्त्र में प्रसिद्ध है। गजराज ग्राह के पाश में बंध्यो पहले जन्म को सीखो भयो जाप जपतो भयो जैसे पृथ्वी सदा जल से व्याप्त है पर तथापि

÷श्रीभागवते षष्ठस्कंदे–अहं हरे तव पादैकमूलदासानुदासो भविता-
स्मि भूयः। मनः स्मरेतासुपतेर्गुणानां गृणीत वाक्कर्म करोतु कायः।
अष्टमस्कंदे–– जजाप परमं जाप्यं प्राक्जन्मन्यनुशिक्षितम्।

निम्नस्थल में ही स्वयं प्रत्यक्ष जल देखो जाय तैसे श्रीकृष्ण कृपा भी स्वभाव से ही दैन्य नम्र में ही देखी जायहै तासे दैन्य नम्रमें ही भगवत कृपा सिद्ध भई अन्यत्र नहीं आगे बद्ध मुक्तों के बहुत भेद जानवे योग्य हैं यद्यपि बद्ध व मुक्त इन दोनों में मुक्तों की ही प्रधानता है तौ भी बद्ध प्रत्यक्ष है तासे पहिले उनको ही वर्णन करें हैं तामें बद्धाः अनादि कर्मों की वासना से वने जो देवता पशू पक्षी ये जंगम रूप और स्थावर रूप वृक्षादिक चार प्रकार के शरीर वारे तिन देहों में और उनके संबन्ध के बेटा स्त्री धनादिक में ममतावारे वे भी दो प्रकार के संसार में मोक्ष इच्छा वारेः—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

ज्ञान साधना भगवत्परिकर साधनाश्च तत्र ज्ञान साधनाः वर्णा श्रमोचित कर्म यौगा नुग्र तत्समुत्थित गंगाप्रवाहवद् विछिन्न स्मृति संतानरूप साक्षात्कार पर्यंत भक्तिनिष्ठावंतः तेचद्विविधा उपास का औपनिषदाश्चेति तत्रो पासका: श्रीरामचन्द्र नृसिंह हयग्रीवाद्य वतारमंत्रविहित ध्यानपूजन पुरश्चरणादि निष्ठावंतः औपनिषदास्तु श्रवण मनन निदिध्यास नैकनिष्ठाः एतेषु भगवल्लीलागुणरूपादिसा क्षात्कारप्रतिबंधकान्मोक्षमिच्छयांतरभावनीयाः भगवत्परिकरीसाध नास्तु ज्ञानकर्मादीनां प्रधानसाधनत्वमनंगीकृत्य करुणावरुणालयं गुरुमेवोपायं मत्वा कंचन सम्बन्धविशेषं लब्ध्वा मुक्तिनिश्चयवंतः-

भोग की इच्छावारे। नानो प्रकार के संसार से दुख देख के विरक्त होके संसार से छुटवेकी इच्छाकरैं वे मुमुक्षू वे भी दो प्रकार के ज्ञान साधन वारे भगवत परिकर साधन वारे तामें ज्ञान साधन वारे वर्णाश्रम के उचित कर्मयोग अनुष्ठान कियो तासे गंगाजी के प्रवाह की तरह उठ्यो जो अखन्ड स्मृतिको विस्तार तासे साक्षात पर्य्यंत भक्ति निष्ठा वारे ते दो प्रकोर के उपासक उपनिषद ज्ञान वारे ज्ञानी तामें उपासक श्रीरामचन्द्र नृसिंह हयग्रीवादि अवतारों के विधान से ध्यान पूजा पुरश्चरण के निष्ठावारे दूसरे उपनिषद वारे ज्ञानी श्रवण मनन निदिध्यास न निष्ठावारे उपनिषद वारो के भीतर भगवान के लीला गुण रूपादि को साक्षात्कार जामें न रहे ऐसी मोक्षकी इच्छा वारोंको भी समुझ लेने। भगवतपरिकर साधन वारे तौ ज्ञानकर्मादिकोंको प्रधान साधनपनो अंगीकार नहीं करै करुणाके समुद्र गुरू को ही

उपाय मानके कोई संबंध विशेष भगवान के साथ मिलजाय याही को मुक्ति निश्चय कर लिये हैं।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

एतेच सर्वे च प्रत्येकं चतुर्विधाः आर्त्ताजिज्ञास्वर्थार्थिनो ज्ञानिनश्च अथ मुमुक्षवो वैषयिकानन्दमिच्छवः तेच योग्यायोग्यभेदेन द्विविधाः तत्र योग्यानामभगवन्निर्हेतुक कृपाकटाक्षेणभाविनीयोग्यतावंतः।

भाषा कांति प्रकाशिका

ये सब एक२ में चार२ प्रकार के हैं आर्त्त (दुखिया) जिज्ञासु (कल्याण का उपाय पूछ-वे वारे) अर्थार्थी ज्ञानी ये चार प्रकार के आ-र्त्तादि उपासकों में उपनिषद् वारे ज्ञानियों में और भगवत् परिकर साधन वारों में हैं तात्पर्य यहहै कि कोई संसारी दुख से घर छुट्यो फिर उपासक महात्मावों को संग मिल्यो उपासक होगये ज्ञानवारे को संग मिल्यो ज्ञानी हो गये तैसे ही भगवत परिकरके साधन वारे को संग मिल्यों वैसे होगये तैसे उन तीनों जिज्ञासु अर्थार्थी ज्ञानियों को विचार लेनो गीता जी में भगवान् ने भगवत्-परिकरके साधन वारों

के उदाहरण बताये हैं* आर्त्त जिज्ञासू अर्थार्थी ज्ञानी हे अर्जुन ये चार प्रकार के सुकृति मेरो भजन करै हैं तिनमें ज्ञानी सब उपाधि से न्यारो एक प्रेम-भक्ति ही से केवल देहाभिमान छोड़ कर जो निरन्तर भजन करै है और मेरे में लगो रहै सो श्रेष्ठ है याते मैं ताको प्यारो हौं तासे सो मोको प्याते दुखिया जैसे गजराज ग्राह की पाश से दुखी हरि को स्मरण करतो भयो सो भी जन्मांतर के सुकृति और अगस्त जी के शाप मिष कृपा विशुद्ध भक्ति को अधिकारी भयो और पार्षद गति पाई तैसे ही शौनकादिक जिज्ञासू वोंकी गति समझ लेनो ध्रुव जी पहले अर्थ की चाहना से घर से निकरे फिर श्रीनारद जी की कृपा से भगवत दर्शन पाय के विशुद्ध भक्ति के अधिकारी भये ज्ञानी श्रीः—

---

* चतुर्विधा भजंते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन। आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ। तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते। प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अयोग्या द्विविधाः नित्यसंसारिणो निरययोग्याश्च तत्र नित्यसंसारिणो वृक्षादयः निरययोग्या मनुष्ये ष्वधमराक्षः पिशाचादयश्च ते चद्विविधाः प्राप्तनिरया अप्राप्तनिरयाश्चेति अथमुक्ताः तेषामाना व्यस्तरेहादिष्वहं ताममतानिवृत्ति पूर्वकस्वरूपप्राप्तिर्यतः तेचद्विविधाः नित्यमुक्ता मुक्ताश्चेति—

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

संकोदिक हरिके चरण कमलकी तुलसी मकरन्द की वायू नासिका से सूंघ के पुलकरों मांच अश्रुधारण करते भये ज्ञानी यासे अतिशय प्यारो कि पहिले हो त्वंपदार्थ के ज्ञानसे श्रेष्ठ फिर तत्पदार्थमें प्रेमा भक्तिभई ताको मेरे सिवाय कोई वांछान ही ऐसे चारो प्रकार के विशुद्ध भक्तिके अधिकारी भये कारण केवल भगवत कृपा कटाक्ष अथवा उनके दासों की कृपा है। बुभूक्षु नाम विषय भोग की इच्छा वारे सो दो प्रकारके योग्य अयोग्य तामें योग्यतो वे हैं जो भगवान की निर्हेतुक कृपा कटाक्ष से आगे सुधर जांयगे और अयोग्य भी दो प्रकार के नित्य संसारमें पड़े वृक्षादिक और नरक के योग्य मनुष्यों मेनीच जिन के रात

दिन धनकी कमाई और स्त्री संग में व्यतीत होंय और राक्षस पिशाचादिक। उन में भी दो प्रकारके एकतौ नरकमें पड़े हैं दूसरे नरक में अभी पड़े नहीं अबमुक्तों को वर्णन करें हैं अज्ञान करके देहादिक में अध्यासकरी जो अहंता ममता सो निवृत होगई और स्वरूपको प्राप्त भये वे भी दो प्रकार के नित्यमुक्तमुक्त

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

तत्र नित्यमुक्तानामगर्भजन्मजरामरणादिदुखमननुभूय नित्यप्राप्यानंदानुभवैकरसः यथानंदसुनंदादयः मुक्तास्तु भगवदनुग्रहेण अनादेरज्ञानात्प्रमुक्ताः सालोक्यसारूप्यसामीप्यसार्ष्टिसायुज्यानुभवयंतः तेचद्विविधा- गुणगानपराः सेवनपराश्चेति तत्र गुणगानपरा भीष्मादयः सेवन परास्तु चतनालादिनिर्माणक्रियापरा एते च देवर्षिमनुष्यराजन्यादिभेदेन प्रत्येकमनेकविधाः पुनः सर्वेप्येते चतुर्विधाः आर्त्तमुक्ताः जिज्ञासुमुक्ताः अर्थार्थीमुक्ताज्ञानीमुक्ताश्चेति तत्रार्तमुक्ताः शिवानुयायिनः जिज्ञासुमुक्ताब्रह्मसृष्ट्यादयोनुयायिनः अर्थार्थिनो श्रीलक्ष्मी विष्वक्सेनाद्योनुयायिनः—

भाषाकांतिप्रकाशिका।

तामे नित्यमुक्त तौ वे है कि गर्भ जन्म मरणादि दुख कोन अनुभव करके नित्य एक रस आनन्द सर्वकाल अनुभव करै है जैसे नंदसुनंदादिक और मुक्त भगवान की अनुग्रह से अनादि अज्ञान तासे छूट के चार

प्रकार की मोक्ष 'सालोक्य' अर्थात हरिके साथ उन के लोक में रहनो 'सारूप्य' नाम कौस्तुभ-मणि और लक्ष्मी चिन्ह छोड़के हरिके समान रूप होनो 'सामीप्य' नाम भगवान के समीप रहनो 'सार्ष्टि' नाम समान ईश्वर्य को होनो ये चार प्रकार की मोक्ष अनुभव करैं हैं और पांचवी 'सायुज्य' जो ब्रह्म में एकाकार के मत वारों की सो अपनी ईच्छानुसार वे अनुभव करैं सम्प्रदायी मतमें सायुज्य शब्द समयोगता का है श्रुति१ में लिखा है कि यह जीव जब लोकों के ऊपर जावै तब लोक के देवताओं के साथ सायुज्य होय है जो सायुज्य नाम एकाकार को समुझैं तौ एक देवतामें सायुज्य होके कैसे निकरे और दूसरेके साथ कैसे होय सायुज्य नाम भगवान के—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

ज्ञानिमुक्तास्तु सनकादिनारदनिम्बादित्यानुयायिनः तत्र नित्यमुक्ताः द्विविधाः पार्षदा आनन्तर्य्याश्च पार्षदागरुडादयः आनन्तर्य्यास्तु किरीटकुण्डलवंशादयः एतेषां तु स्वशरीरेच्छानुगुणि तन्निजेच्छयावि

१ एतासामेव देवतानां सायुज्यं सार्ष्टिं समान लोकतामाप्नोति इत्य् ते

महाशिवविप्रहोमातपित्रादिस्त्वहिर्वपिभवति तथाहि धु नगः स एकधा भवति अपरिमितधा भवति सयदि पितृलोककामो भवति संकल्पादेवास्यपितरः समुत्तिष्ठन्तितत्सम्पद्ये ति

भाषा कांति प्रकाशिका

साथ सहयोग अर्थात एक पास विराजवेको हैं वे मुक्त महात्मा दो प्रकार के एक गुण-गान करवे वाले भीष्मादि दूसरेसे वापरायण अर्थात बनमाला आदिक वनायवे वारे ये सब देवता ऋषि मनुष्य राजन्यादि भेदसे एक एक में अनेक हैं फेर ये सब चार प्रकार के दुःख से कोई प्रकार महादेव जी के शरण आये फिर श्री शिवजीकी असाधारण कृपासे मुक्तभये और शिवजी के शरण दुखिया ही आवे हैं तासे वे आर्त्त मुक्त हैं जिज्ञासू श्री ब्रह्मा जी के शरण आये फिर उन की कृपासे मुक्त भये ब्रह्मा जी चार वेद के वक्ता तत्वके ज्ञाता जगत के गुरू जिज्ञासा उनके पास ही ठीक है तासे भृगुआदि से ब्रह्मा के अनुयायी जिज्ञासू मुक्त हैं तैसेही श्रीलक्ष्मी जी के पास प्राय अर्थार्थी आवे पर श्रीजी अपनी कृपासे

जैसे माता बालक के मुखसे मट्टी निकार के मिश्री देय तैसे अर्थन देके मुक्त करैं तासे अर्थार्थी श्री विष्वक सेनादि के अनुयायी है श्री सं कादिक दिगम्बर निर्गुण उन के पास सिवाय ज्ञानी के सकामी को आनो महान असम्भव तासे ज्ञानी मुक्त सं कादिक निम्बादित्य के अनुयायी हैं यद्यपि चारो आचार्यों के चारो प्रकारके मुक्त हैं पर बहुधा करके क्रम ऐसोही पायो जाय है तासे श्री आचार्य ने वरखानकियो।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्धे

यश्च क्रीडन् रममाणः इमाल्लोकान्कामान् कामरूप्यनुसं-चरन् सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सहब्रह्मणा। विपश्चितेत्याद्याः श्रुतिः बहुप्रकारं संसृतौ मायया तेत्यमतिकरुणदेशः कृष्णदाता सदाम्य-सतत मिदमहं त्वां प्रार्थये दीनहीनोन भवतुपुनरस्याज्ञानुयायकोः प्रकारः। इतिश्री परमहंसवैष्णवाचार्य्य श्रीहरिव्यासदेवविरचितेवेदांत सिद्धांतरत्नांजलौ प्रथमपरिच्छेदः १

भाषाकान्ति-प्रकाशिका।

नित्य मुक्त भी दो प्रकारके हैं पार्षद१ आंतरी२ (भीतरके) पार्षदतौ गरुडादिक आंतरी किरीट कुन्डल वंशी आदिक ये सब फेर जब कबहू ईश्वर इच्छा होय अथवा निज इच्छा

तौ जगत में विग्रह गृहण करै है और माता पिता रूप सृष्टिभी होय है तामें श्रुतिप्रमाण है सो एक प्रकार को होय अनगिन्ती प्रकार को होय सो जो पितृ लोक की कामना करैं संकल्पमात्र से ही पितरसम्यक प्रकार ले जाय है सो तहां विराजै है हँसै क्रीडाकरै रमणाकरै इन लोकों में इच्छा रूप धारण करके विचरे फिर सब काम ब्रह्म के साथ यह ज्ञानी प्राप्त होय है इत्यादि इन श्रुतियों से कितनी शंका मिटै हैं तामें पहिले शंका प्रतिपाद नकरै हैं कोई ऐसे विचारै है कि श्रीकृष्ण में पुत्रभाव पित्रभाव कांतसख्य येभाव संसार केहैं अयोग्य है यह पहिली शंका कदाचित कोई संसारमें जब अवतार लेवैं तब करभी लेय परिदिव्य धाम वैकुन्ठ गौ लोक में अत्यंत असम्भव है दूसरी शंका यह कि भगवत धाम में जाय के फेर लौटके नहीं आवै तामें श्रुति है सो फिर संसार में नआवर्तन करै भगवान नेभी कह्यो कि जहां जाय के फेर न लौटे सो मेरो परम

धाम है वे फेर या प्राकृत विश्व में कैसे आये तीसरे जो भगवान में पुत्रादि भावको प्रीति करके संसारसे छूट गये तौ हम भी अपने पुत्रादि को में मन लगायके छूट जावें वे भी तौब्रह्म हैं तामें पहिले समाधान यहहै कि शास्त्र में विधान है कि १जो कोई प्रकार से होय कृष्णमें मन प्रवेश करै श्री कपिलदेव जो अपनी माता देवहूती से बोले कि जिनको मैं आत्मा सुत सखादेव इष्ट सुहृद हूं वे सुगति को प्राप्त होंय और रास-पंच-अध्यायी में शुकदेवजी ने कह्यो कि २काम, क्रोध, भय, स्नेह, ऐक्य सुहृदता से नित्य जो हरि में मन लगावें हैं वे तन्मयता को प्राप्त होय है तन्मयता को अर्थ यह है कि दास भाव वारे अपने दास-भाव से तन्मय होंय व वात्सल्य रस वारे पुत्र भाव से तन्मयता को पावे और भी अपने२ भावसे तन्मयता पावैं गीताजीमें

नच पुनरावर्तते इतिश्रुति

गीता यद्गत्वा न निवर्तंते तद्धाम परमंमम

१ श्रीभागवत सप्तमस्कन्धे येन केन प्रकारेण मनः कृष्णे निवेशयेत्
२ दशमे कामात् क्रोधात् भयात्स्नेहा दैक्यं सौहृदमेव च नित्यं हरौ विदधतेयांति तन्मयतांहिते ।

आपने कह्यो कि जो मेरे को जा भाव से भजन करै ताको मैं तैसे भजन करौं फिर भक्त के भावानुसोर नवर्त्त वेसे आपके बचन वृथा होंय और जो भाव जा भक्त को स्थायी हो जाय सो मोक्ष के परे भगवत धाम में भी बनो रहे तासे साधन अवस्था में संसार में जा भाव से भजन कियो सो नित्य अप्राकृत धाम में रहै और सोई भावसे भगवान् उनके साथ वैंर्त्त जो माता पिता कान्तादि नित्य न होय तौ अवतार समय में कहांसे आवै प्राकृत अनधिकारी से हरि को सम्बन्ध कैसे बनै दशरथ जी वसुदेवादि पिता कौशिल्या आदि मातादिकों के अनेक जन्म श्रीकृष्ण के माता पिता को सम्बन्ध सुन्यो जाय है प्राचीन यह भाव नहीं तौ कल्प २ में या भाव के करवे बारे कहां से आये और नित्य नहों तौ वैकुंठ गौलोकादि में ये सब दासादि वर्ग कहां से आये और कैसे रहैं :—

और यथार्थ तौ ये सब भाव हरि में ठीक है संसार के मात पिता अन्य सम्बन्धी अधिष्ठान

रूप हरि ही से सच्चे हैं अधिष्ठान विना स्त्री पति को बेटा बाप को मुंह जरावै और इन भावों से प्रीति अतिस्वादि की हो जाय है प्रीति तौ हरि की स्वाभाव से दर्शन करवे वाले मात्र को होय है पशु पक्षी आदि आत्माराम मुनि आदि संसार के विषयी इन सब को दर्शन मात्र से हरि में प्रीति उपजै है फिर जब कोई सम्बन्ध हो जाय तौ ममता विशेष बढ़ जाय जैसे दूध में मिश्री इलायची से स्वाद विशेष हो जाय तासे इन भावों से प्रीति करनो श्रेष्ठ है और साकार ब्रह्म में माननेही पड़ेंगे दूसरी शंकाको समाधान यह है कि जैसे हरि भगवान् अवतार लेके प्राकृत ब्रह्मांड में आवैं और प्रयोजन की लीला करैं और प्रकृति से न्यारे रहें तैसे उनको परिकर आपके संग आवे जावै है जो न आवैं तौ लीला कोन के संग होय जैसे प्रकृति में रह के हरि निर्लेप पर है तैसे उनके दास भी अकर्मक लीला बिग्रह धारण करके अलग रहैं जीव को साधन करके ज्ञान होजाय सोई जोव-

प्रकृतिसे न्यारो रहे फिर परिकरको कहा कहनों तीसरे समाधान यह है परीक्षत जी ने प्रश्न कियो कि गोपी श्री कृष्ण को कांत जानती भई हे मुने ब्रह्म नहीं जानती भयी उनके गुण मय देह को उपराम कैसे भयो शुकदेव जी ने उत्तर दियो कि चन्देली को राजा बैर कर के सिद्धि को प्राप्त भयो तौ अधोक्षज की प्यारियों का कहनो सिद्धांत यह है कि श्रीकृष्ण अनाव्रत ब्रह्म हैं कोई रीति से दर्श स्पर्श आलापादि कोई प्रकार से जाने बिना भी सम्बंध होजाय जीव प्राप्त होंय संसारी पति पुत्रादि आवृत ब्रह्म हैं पारस लोहे को कोई रीतिसे स्पर्श होय सोनो करै मृतिकादि को व्यवधान होय तौ नहीं सोना होये आचार्यों के शास्त्र में बहुत समाधान हैं बिस्तार भय से नहीं लिखेः—

दो० तुम्हारी माया से भ्रमै जीव जगत के मांहि।
महादयालू कृष्ण तुम करौ कृपा ता पांहि॥

दीन २ मो दास की सदा प्रार्थना येह ।
या माया के जाल को कबहूं न परसै देह ॥

इति श्री परमहंस वैष्णवाचार्य श्री हरिव्यास
देव पदकमल भृंग दासानुदास हंसदास
कृत भाषा प्रथम परिच्छेद समाप्त

॥ श्रीराधासर्वेश्वरोजयति ॥
॥ श्रीनिम्बार्कमहामुनीन्द्रायनमः ॥

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्धस्य

द्वितीय परिच्छेद

प्रारम्भः ।

अव्यक्तं कारणंयत्तत्प्रधान मृषिसत्तमैः । प्रोच्यते प्रकृतिः सूक्ष्मा नित्यं सदसदात्मकं । अक्षय्यं नान्यदाधार ममेयमजरंध्रुवं । हेतु भूत मशेषस्य प्रकृतिः सापरा मुने इत्यादिस्मृति सिद्ध प्रधानं निरूपयति अप्राकृत मित्यादिना अप्राकृतं प्राकृत रूपकं चकाल स्वरूपं तद चेतनं मतं । माया प्रधानादि पदप्रवाच्यं शुक्लादिभेदाश्च समेपितत्र । तेषां चेतनत्वं वा ज्ञातृत्वमस्य प्रकाशत्वं वा अस्य अचेतनस्य व्यापार यस्यापि न ज्ञातृत्वं । अतएव कर्तृत्व भोक्तृत्वादयोऽपिनस्संति तदचेतनं त्रिविधं प्राकृत मप्राकृतं कालश्चेति प्रकृति नामान्योन्य समरूप गुणत्रया श्रयभूतं द्रव्यं गुणाश्च सत्वरजस्तमांसि एतद्गुण त्रयाश्रय ।

भाषा कांति प्रकाशिका

अव्यक्त जो कारण ताको उत्तम ऋषि प्रधान कहैं हैं सोई स्थूल सूक्ष्मात्मक प्रकृति

नित्य है सो अक्षय है जाको अन्य आधार नहीं मान करवे में न आवै अजर एक रस समग्र की कारण सोई हे मुने पराप्रकृति है या प्रकार स्मृति प्रमाणते सिद्ध जो प्रधानता को निरू-पणकरैं हैं तीसरो श्लोक श्री निम्बार्क भगवान को अप्राकृत व प्राकृत रूप और काल स्वरूप यह अचेत न मानो जाय है माया प्रधानादिक जाके नाम हैं शुक्लादिक भेद सब तामें हैं तासे अचेत न नाम जाको ज्ञातृत्व अर्थात चेतन धर्म नहीं स्वयं प्रकाशता नहीं या अचेतन को व्योपार तौ है परज्ञातापनो नहीं है तासे कर्ता पनो व भोक्तापनो भी नही है सो अचेतन तीन प्रकार को है प्राकृत१ अप्राकृत२ कालस्वरूप सत्वरज तम ये तीनो गुण परस्पर समान रूप है तिनके आश्रयकी जो द्रव्य(वस्तु) ताको प्रकृतिक हैं।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

प्रकृतमेव द्रव्यं त्रिगुणं प्रधानमिति चोच्यते एतच्च त्रिगुणं स्व-स्वकर्म वशीभूतानां जीवानां भगवत्स्वरूपतिरोधानं करोति । जीवानां बन्धकारणत्वेन करोति माया चाविद्या च इत्येवमेव भवति तैः तत्र स्वरूपं ज्ञानादि कारणं गुण विशेषः इदमेवात्र कथितं सत् मुक्ति-

कारणं च भवति राग दुःखादि कारणं विशेषो रजः प्रमादालस्यादि कारणं गुण विशेषस्तमः भगवदिच्छया कालविशेषे त्रयाणामपि गुणानां साम्यावस्थाप्रलयः यथैकदेहावस्थित वातादीनां साम्यं स्वास्थ्य मावस्य सृष्टिः वैषम्यंचानेकधा अव्यक्ताक्षर तमोरूपविनाश: प्रकृत्यादेनकेचित् नामान्तराणीत्यन्ये इदमेव द्रव्यं त्रिगुण।

भाषाकीर्तिप्रकाशिका

और इन्ही तीन गुण के आश्रयभूत द्रव्य को त्रिगुण प्रधान वर्णन करै हैं। येई तीन गुण अपने कर्म के वश पड़े जो जीव तिनके हृदय से भगवान को स्वरूप छिपायलेंय हैं सोई श्रुति में है अविद्या के आभास से जीव की प्रतीति करादेय विद्याके आभास से ईश की प्रतीति करादेय माया व अविद्या स्वयं आप होय। तामें ज्ञानादि को कारण जो गुण विशेष सो सत्व है यह सत्व गुण जो विशेष बढ़ जायतो मुक्तिको कारण होय है राग दुखादिको कारण विशेष रजो गुण है प्रमादआलस्यादिकों को कारण गुण विशेष तमोगुण है भगवत इच्छासे जाकाल में तीनों गुणों की समान अवस्था होय तब प्रलय होय है जैसे एक देहमें वातादिक समान स्थित होंय। और इनकी जब विषम

अवस्था होय तब सृष्टि होय विषमता अनेक प्रकारकी है अव्यक्त अक्षरको तमरूपसे प्रकृति में विभाग कोई ताको वैषम्य कहैं कोई और और नाम बतावैं हैं—

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिप्रकाश

परिणामो द्रव्यार्थव्यक्तमित्युच्यते तच्च व्यक्तं त्रयोविंशति विधंलक्ष्यते तथाहि तत्र प्रथमंप्रकृतिर्भगवदिच्छया महत्तत्त्वं व्यंजयति अयंचमहान् जीवस्य मनस्यध्यवसायं जनयति पुनरयं महान् स्वस्मिन्नहंकारं व्यंजयति अयमहंकारोजीवस्य मनसि-शरीरगोचरामहं बुद्धिंजनयति । अहंकारश्चाहंकृत व्यंचेतिद्वि तेः श्रयंश्चाहंकारशब्दोऽर्थंभाहंकार इत्यादे देहेहं बुद्धौगार्वंचप्रयोगेण मानार्थकः अथमेवाहंकार उत्कृष्टजनावमानहेतुः शास्त्रेहेयतयोच्यते आत्म वाच्य हंशब्दस्यव्यमच्छब्दसिद्ध इत्युक्तमधस्तात् अहंकारस्त्रिविधः वैकारिक तैजसतामसभेदात् तत्रवैकारकः सा

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

यही द्रव्य विषम परिमाण अवस्था के विषय व्यक्त नाम से बोली जाय है सो व्यक्त तेईस प्रकार को देखो जाय तामें पहिले प्रकृति भगवान कीइच्छा से महतत्व को प्रकाश करै है यह महतत्व जीवके मनमें अध्यवसाय(निश्चय) उत्पन्न करै है और महतत्व फिर अपनेमें अहंकार को प्रकाश करै है यह अहंकार

जीव के मन में शरीर की गोचर अहं बुद्धि उत्पन्न करै है अहंकार और अहं कर्तव्य यह श्रुति में हैं या अहंकार शब्द के अनेक अर्थ हैं। दंभ अहंकार देह में अहं बुद्धि गर्व इत्यादि याही अहंकार से प्रतिष्ठित जन को तिरस्कार भी हो जाय है शास्त्र में याको त्याग करनो लिखो है और आत्मा के अर्थ को जो अहं शब्द सो अस्मच्छब्द से सिद्ध है सो पहले कह आये हैं अहंकार तीन प्रकार को है वैकारक तैजस तामस नामें वैकारक सात्विक को कहै हैं।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

त्त्विकाहंकारः तैजसोराजसाहंकारः तामसाहंकारोभूतादिः सात्त्विकाहंकारेभ्यो व्यकादेवता दश एकादशंमनः राजसादिन्द्रियाणि अप्यञ्चमनः शब्दस्पर्श रूपरस गंध पंचविषय संग दशायां बंधकारणंतत्र विषयान्मुक्त्य सपरिकरभगवद्विषये प्रावण्येसति विमुक्तिकारणंच भवति अवार्यविवेकः इन्द्रियंद्विविधं बाह्यमांतरं चेति तत्रबाह्य श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वा घ्राणाख्यानीतिज्ञानेन्द्रिय पंचकं वाक् पाणि पादपायूपस्थाख्यानीतिकर्मेन्द्रिय पंचकंतत्र श्रोत्रादीनि पंच शब्दस्पर्शरूप रसगंधानुगृह्णाति दिग्वातार्कवरुणाश्विनोधिष्ठातृदेवाः क्रमेण श्रोत्रादीनांवागादीनां तुक्रमेण।

भाषाकांतिप्रकाशिका।

तैजस राजस अहंकार है तामस अहंकार भूतादि। सात्विक अहंकार के प्रगट किये दश

देवता और ग्यारहों मन है राजस अहंकारसे दस इन्द्री और यही मन, जब येइन्द्री और मन पांचविषय शब्द स्पर्श रूप रस गंध को संग पावैं तब जीवको संसारमें बंधन करावैं और जब यही मन अपने परिकर इन्द्रि सहित इन कहेभये विषयों को छोड़के भगवान् की कथा सुनो स्पर्श करनो रूप दर्शनरस आस्वाद सौरभ सूंघवेमें लगै तौ मुक्तिको कारण है तामें यह बिचार है इन्द्री दो प्रकार की बाहिरी भीतरी तामें बाहिरकी कानत्वचा नेत्र जिह्वा नाक ये पांच ज्ञान इन्द्रीहैं वाणी हाथ पांव पायू उपस्थ ये पांच कर्म इन्द्री हैं तामें कानसे सुनै, त्वचा से स्पर्श, नेत्रसे देखै, जिह्वासे स्वादलेय, नाक से सूंघै, इनके अधिष्ठाता देवता क्रमसे दिशा पवन, सूर्य, वरुण, अश्विनी कुमार हैं—

सिद्धांतरत्नांजलिपूर्वार्द्धे

वन्हि इन्द्र उपेन्द्र मित्र प्रजापतयोऽधिष्ठातृ देवता: एतानि वागादीनि वचनादान विहरणोत्सर्गानंदादीन्कुर्वंति आंतरेन्द्रियं चतुर्विधंमनो बुद्धि चित्त अहंकार भेदात् तत्रसंकल्प विकल्प गुणकंमनोऽध्यात्मकं अनिरुद्धोदैवतकं संकल्प विकल्पाधिभूतं द्रव्यस्फुर्णविज्ञानं बुद्धिरध्यात्मंप्रद्युम्नोऽधिदैवतं संशयविपर्यय निश्चय स्मृतयोऽधिभूतं

स्वच्छत्वाविकारित्वशांतत्ववृत्तिकत्वचेतकत्वं चित्तमध्यात्मं वासुदेवाधिदैवतं चिंतनमधिभूतं अहंकारोऽध्यात्मं संकर्षणोऽधिदैवतं अहंताममताधिभूतं एवं बाह्येन्द्रियेष्वपि बोध्यं तत्त्वोत्पत्ति क्रमस्त्वेवं तामसाहंकाराच्छब्दतन्मात्रं शब्द ।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

वाणी से बोलनो होय देवता अग्नि है, हाथ से वस्तु ग्रहण करी जाय देवता इन्द्र हैं, पांव से चलो जाय देवता उपेन्द्र है, पायूसेमल त्याग होय देवता यमराज है, उपस्थसे विषयानन्द प्रजापति अधिष्ठाता देवताहैं, और भीतर की इन्द्री चार प्रकार की हैं। मन बुद्धि चित अहंकार तामें संकल्प विकल्प वृत्तिवारो मन अध्यात्म है अनिरुद्ध ताके देवता हैं संकल्प विकल्प अधिभूत है द्रव्यको स्फुरणताके विज्ञान की बुद्धि अध्यात्म है प्रद्युम्न अधिदैवत हैं संशय विपर्यय निश्चय स्मृति येसब अधिभूत हैं स्वच्छपने को विकार न होवे को शांतपने को वृत्तिको चेतनता को चित्त अध्यात्म है वासुदेव देवता हैं चिंतवन करनो अधिभूत है अहंकार अध्यात्म है संकर्षण अधिदैवत हैं अहंताममता अधिभूत हैं याही प्रकार वाहिर की इन्द्रि में जाननो-

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

तन्मात्राद्याकाशः आकाशात्स्पर्शतन्मात्रं स्पर्शतन्मात्राद्वायुः वायोरूपतन्मात्रं रूपतन्मात्रात्तेजः तेजसो रसतन्मात्रं रसतन्मात्रात् आपः अद्भ्यो गंधतन्मात्रं गंधतन्मात्रात्पृथ्वीति केचित्तु तामसाहंकारात्क्रमेण शब्दादितन्मात्राण्यंतरीकृत्य पंचभूतान्युत्पद्यंतेइत्याहुः अन्येतु भूताद्भूतोत्पत्तिमाहुः सिद्धांते तु सात्विकाहंकारान्मनो वैकारिकादेवाश्च राजसादिन्द्रियाणि तामसाद्भूतानि तन्मात्राश्चेति सृष्टिक्रम इत्युक्त मथसत्वात पञ्चमपरेपि स्वस्वसम्प्रदायानुरोधेनोत्पत्तिक्रममाहुः आका शादिपंचभूतेषु शब्दादिपंचगुणानामुत्तरोत्तरमेकैकगुणाधिक्यंबोध्यं तत्राकाशस्य शब्दोगुणः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सोऽत्पत्तिको क्रम या प्रकारको है तामस अहंकार से शब्द तन्मात्र हो तो भयो, तासे आकाश भयो, आकाशते स्पर्शतन्मात्रा, तासेवायु वायुसे रूपतन्मात्रा, तासे तेजहो तो भयो, तेजसे रसतन्मात्रा ताते जल होतो भयो, जलसे गंध तन्मात्राताते पृथ्वी होतीभयी कोई ऐसे कहैं हैं कि शब्दादि जो तन्मात्रा हैं तिनको भीतर करके तामस अहंकार से ही क्रम करके पांच भूतों की उत्पत्ति होती भयी और कोई भूतों से भूतोंकी उत्पत्ति होयहैं ऐसे कहैं हैं सिद्धांत में तौसात्विक अहंकार से ही मन और वैकार का देवता होंय हैं राजससे इन्द्री तामस से

भूतानि व, तन्मात्राय ह सृष्टिको क्रमवर्णन कियेा ऐसे ही और भी अपनी अपनी सम्प्रदाय के अनुरोध से उत्पतिको क्रम कहें हैं आकाशादि पांच भूतोंके विषय शब्दादि पांच गुणको आगेमें

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

वायोः शब्दस्पर्शौतेजसः शब्दस्पर्शरूपाणि अपांशब्दस्पर्शरूपरसाः पृथिव्याः शब्दस्पर्शरूपरसगंधाः पंचापीतिविवेकः एतेनाकाशस्यैव शब्दोविशेषगुण इत्यपास्तं महत्तत्त्वमारभ्य पृथ्वी पर्य्यंतंसमष्टिरित्युच्यते यथासेनावनराश्यादिव्यवहारः तेषु एकदेशमादाय क्रियमाणं कार्यं व्यष्टि रित्युच्यते यथा वृक्ष धान्यादिव्यवहारः पंचीकरण प्रक्रिया पुराणादिषु प्रसिद्धा पंचीकरणं तुभगवानहरिरीश्वरः प्रथिव्यादिपंचापि भूतानिसृष्ट्वापृथक्कं भूतंद्विधाविभज्यद्वयोर्भागयोः अभाग मेकं निधायद्वितीयं भागं पुनश्चतुर्धा करोति तां श्चतुरोभागान् भूतान्तरेषु चतुर्षु संयोजयति

भाषाकांतिप्रकाशिका

एक२ गुण अधिक जानने होयगो तामें आकाशमें गुण शब्दहै वायूमें शब्दस्पर्श दोगुण हैं तेज में शब्द स्पर्श रूप तीन गुण हैं जल में शब्द स्पर्श रूपरस चार गुण पृथ्वीमें शब्द स्पर्श रूप रस गंध पांचो हैं याते जो कोई कहे कि आकाश को ही शब्द विशेष गुण है सो दूर कियेा महतत्वसे लेके पृथ्वी पर्यंतको समष्टि कहें हैं जैसे सेना, वन, राशि इनको व्यवहार और तिनको

एक देश ले के जो कार्य कियो जाय ताको व्य-
ष्टि कहैं हैं जैसे वृक्ष धानादि पंचीकरण ताको
कहैं कि भगवान हरि ईश्वर पृथ्वो आदि पांच
भूतन को रचकर एक२ भूत के दो२ भाग किये
दोनों भाग में एक भाग आपनो धरो दूसरे
भाग के फिर चार किये तिन चारों भाग को
फिर चारों भूतन के अंतर में मिलावैं हैं ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

एवंचिकीर्षितेषु पंचस्वपि भूतेष्वेकैकस्य भूतस्यार्द्धं स्वभागः द्वितीयमर्द्धं चतुर्णां भूतानां भागेषु संयोजनमिति त्रिवृत्करणश्रुति-रत्रात्र मूलं पृथिव्यादिव्यपदेशस्तु वैशेष्यात्तद्वाद इतिन्यायात्सं-भवति तत्र प्रकृतिमहदहंकारं पंचभूतानि शरीरस्योपादानकारणानि इन्द्रियाणि प्रत्येकमसंगतानि प्रतिपुरुष भिन्नानि भोगायतनं शरीर किंच मनएव कर्मेन्द्रियैःसहितं सन्मनोमयकोशइत्युच्यते प्राणादिपंच-कंकर्मेन्द्रियै सहितं सत् प्राणमयकोश इत्युच्यते प्राणापानसमानो-दानव्यानाइति वायूपंचकं तत्र हृदयस्थानवर्त्तीप्राणः अपानः पायूप-स्थवर्त्ती समानो नाभि—

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

याही प्रकार पांचौ भूतोंमें करवेकी इच्छा
एक भूत को आधोभाग अपने करलेनो और
आधेभाग को चार भूतनके भागमें मिलावनो
त्रिवृत करनी श्रुति याप्रकरणमें मूल है पृथ्वी
आदिको मिष ताकी विशेषताको बाद है या

न्यायसे उत्पन्न होय है तामें पृथ्वी महद् अहंकार पांच भूत येशरीरके उपादान कारण हैं इन्द्री आपुस में मिली नहीं हैं और पुरुष पुरुषमें न्यारी न्यारी हैं यह शरीर भोगको घर है यह मनही कर्म इन्द्रियनके साथमिलके मनोमय कोश बोलोजाय है प्राणादि जोपांच कर्मइन्द्रीके साथ मिलके प्राणमय कोश बोलो जाय है प्राणअपान समान उदान व्यान ये पांच प्राण वायु हैं ता में हृदय के स्थान में रहै ताको प्राण कहें हैं पायु उपस्थ में रहे ताको अपान कहैं हैं—

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

स्थानवर्त्ती अयं प्राणापानाभ्यांच समो भूत्वाऽशितचतुर्विधाहा-दिकंपचति उदानःकंठस्थानवर्त्ती विष्वयामनयान्सर्वशरीरवर्त्ती व्यानः केचित्तु नागकूर्मकृकलदेवदत्तधनंजयाख्याःपंचान्येववायवःसंतीत्याहुः नागउद्गिरणकरःकूर्मउन्मीलनकरःकृकलःक्षुधाकरः देवदत्तो जृंभणकरः धनंजयः पोषणकरः एतेषांप्राणादिष्वंतर्भावः अन्नविकारित्वाद्देहोः शरीरमन्नमयकोशइत्युच्यते विज्ञानमयोजीवः आनन्दमयः परमात्मा मायावादिनस्तु अन्नमयप्राणमयमनोमयविज्ञानमयानन्दमयाः पंचापि कोशा इति वदंति तन्नित्यं ब्रह्मणो नानंदमयत्वप्रसंगाच्च अत्रायंविशेष अचेतनं द्विविधं नित्यमनित्यंच तत्र नित्यं कालमहदहंकार

भाषा कांति प्रकाशिका

नाभिस्थान में रहै ताको समान कहैं १ चारोओर गमनकरै सब शरीरमें वर्तै सोव्यान

है२ यही समान प्राण अपानके साथ सम होके खाये भये भक्ष भोज्य लेह्य चोष्य चारप्रकारके अन्नको पचावै है३ कोई ऐसे कहैं हैं कि नाग कूर्म कृकल देवदत्त धनंजय नामकी पांच अन्य वायु हैं नाग खाये भयेको उगलावै है कूर्मपल कखोलावै है कृकल भूखलगावै है देवदत्तजम्हाई लिवावै है धनंजय पोषणकरै है इन पांचोंको प्राणादिके अंतर्भाव हैं अन्नको विकारही शरीर को कारण है तासे याशरीरको अन्नमय कोश कहैं हैं जीव विज्ञानमय है परमात्मा आनन्द मय है मायावादी तो अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनन्दमय येपांच कोशकहैं तामें यह चिंतवन करनोहै कि ब्रह्ममें अनानन्दको प्रसंग आजाय है यामें यह विशेषहै अचेतन दोप्रकार कोहै नित्य अनित्य तामें नित्य तो काल महद्

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

गुणऽपंचीकृतभूततन्मात्रेन्द्रियप्राणरूपं तद्विकारभूतमनित्यं तत्र कालस्य विकाराः परमाणु मारभ्य परार्द्धपर्यन्ता अतीतानागतवर्तमान युगपच्चिरक्षिप्रादिव्यवहारहेतुकालः तत्र सूर्यो यावत्परमाणुदेशमतिक्रामति तावत्कालः परमाणुः द्वौपरमाणू द्व्यणुकः त्रयोद्व्यणुकास्त्रसरेणुःत्रसरेणुत्रिकंत्रुटिःत्रुटिशतंवेधःत्रिभिर्वेधैर्लवःत्रिलवोनिमेषःत्रिनिमेषः क्षणः पंचक्षणाः काष्ठा पंचदशकाष्ठालघुः पंचदश लघूनि नाडि

का द्वि नाडिके मुहूर्तः नाडिका षट् सप्त वा प्रहरः चत्वारश्चत्वारो-
यामाः अहोरात्रौ पंच दशाहानि पक्षः शुक्लः कृष्णश्च तौ द्वौ मासः
द्वौमा सावृतुः षण्मासा अयनं अयने द्वे संवत्सरः एवमेवाग्रे

भाषाकान्तिप्रकाशिका

अहंकार तीनगुण अपंचीकृतभूत तन्मात्र इन्द्रियप्राणरूप यहविकार भूत सब अनित्य है तामें कालको विकार परमाणु से लेके ब्रह्माके पचास वर्ष जाको परार्द्ध कहैं तापर्यंत है होगयो होयगो होरह्यो है युगपद् नाम एक ही वार में बहुत काल जल्दी इत्यादिक व्यवहारको कारण काल है सूर्य जितने समय में परमाणु देशको उलंघनकरै सो काल परमाणु बोल्यो जाय है दो परमाणुको द्व्यणुक कहैं तीन द्व्यणुकको एक त्रसरेणु तीनत्रसरेणुकी एकत्रुटि सौत्रुटि को वेध तीन वेधन को एकलव तीन लवको एक निमेष (एकपलकको काल) तीन निमेष को एक क्षण पांच क्षणकी एक काष्ठा पन्द्रह काष्ठा की एक लघु पन्द्रह लघुकी एक नाडिका दो नाडिका को एक मुहूर्त छय वा सात नाडिका को एक प्रहर चार चार प्रहर

की दिन व रात पन्द्रह दिनको एक पक्ष शुक्ल कृष्ण पक्ष दोनों मिलके महीना दोमहीनाकी एक ऋतु छय महीनाको एक अयन दो अयनको एक संवत्सर ऐसे ही और आगे जानलेनो—

सिद्धान्तप्रकाशिका

प्युष तथाच कालस्वरूपं श्रीभागवते कालस्रोतोजवेनाशु ह्रियमाणस्य नित्यदा परिणामिनामवस्थास्ताजन्मप्रलयहेतवे अनादनन्त तानेन कालेनेश्वरमूर्त्तिना अवस्था नैवहृश्यते विपर्यात ज्योतिषामिवेति मूर्त्तिः प्रतिमा ईश्वरस्य मूर्त्तिः ईश्वर मूर्त्तः तेन ईश्वरप्रतिमास्थानीयेनेत्यर्थःअतएव प्रकृतिपुरुषाभ्यां कालस्य विभागोऽप्युपपन्नतरः एवंप्रकारमपि शोधने श्रीमद्भागवते आयुर्हरति वैपुंसामुद्यन्नस्तं चयन्नसौ

भाषाकान्तिप्रकाशिका

अर्थात् दक्षिण अयन देवतान की रात्रि उत्तर अयन देवतान को दिन बारह हजार वर्ष सतयुगादि चारों युग की संख्या है तामे चार हजार वर्ष सतयुगकी संख्या आठ सौ वर्ष संध्या के हैं तीन हजार वर्ष त्रेता के छयसौ वर्ष संध्या के हैं दो हजार वर्ष द्वापर के चारसौ वर्ष संध्या के एक हजार वर्ष कलियुग दोसौ संध्या के हजार चौकड़ी इन युगन की वीत जावै तब ब्रह्मा जी को एक दिन तैसे ही परिमाण की

रात्रि याही संख्या करके सौवर्ष ब्रह्माकी आयुहै ताको दो परार्द्ध कहैं एक परार्द्ध वीत गयो दूसरे परार्द्ध को यह पहलो कल्प है वाराह कल्प याको नाम है एक ब्रह्मा के दिन में चौदह मनु चौदह इन्द्र चौदह सप्तऋषि होंय हैं एक मन्वन्तर इकत्तर चौकड़ी को होयहै कालको स्वरूप श्रीमद्भागवत में लिखो है नित्य शीघ्री हरो जाय जो जगत तामें परिणाम शरेन की अवस्था जन्म प्रलय की कारण होंय हैं जाको आदि अन्त नहीं ऐसो जो काल सोई ईश्वर की मूर्त्ति है ताकर के अवस्था नहीं दिखाई पड़े जैसे आकाश में उद्योतिन की। तामे मूर्ति नाम प्रतिमा को है ता काल रूप ईश्वर की प्रतिमास्थानीय करके यह अर्थ आयो तासे प्रकृति व पुरुष इन दोनों से:–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

तस्यार्थं य लक्षणो नीत उत्तमश्लोकवार्तदेत्याद्युक्तप्रकारेण भग वच्छ्रवणप्रवृत्तिविषयत्वाद्वाले विद्येयं संपदैश्वर्यादीनामनित्यत्वनिश्चयं कालनिरूपणमुपयुज्यते महदादीनां विकार उपचयांशः स चानित्य ब्रह्माण्डं च महदादीनां विकारः कार्यं तत्र चतुर्दशभुवनात्मकं तादि

भूर्भुवः स्वर्महर्जनः तपःसत्यमितिसप्तलोकाश्चोपर्युपरि वर्त्तमानानि सप्त अधोऽधो वर्त्तमानानि अतलवितलसुतलरसातलतलातल महातलपातालाख्यानि चैवम् ब्रह्माण्डं तदंतर्वर्त्ति जरायुजाण्डजादिचतुर्विधभूतोत्पन्न छिन्न छिद्रमत्स रागादिकं च सर्वमनित्यमेव किन्तु वेदा पञ्चपञ्चाशद्वर्णाश्च नित्या एवनित्यावेदाः समस्ताश्चे त्यादि

भाषाकान्तिप्रकाशिका

काल को विभाग ठीक होजाय है इतने प्रकार के शोधवे में श्रीमद्भागवत के वचन हैं सोई द्वितीय स्कंध में कह्यो ये सूर्य्य महाराज उदय अस्त होके पुरुषन की आयु हरैं हैं एक जो क्षण हरि भगवान की वार्त्ता सुनवे में व्यतीत भयो ता क्षण विना अथवा जाको क्षण भी उत्तम श्लोक की वार्त्ता में गयो ताके विना याके कहे से या जीव की भगवत भजन में प्रवृत्ति उत्पन्न होय है याही रीति से संपद् ऐश्वर्य को अनित्य समझने के अर्थ काल को निरूपण करनो उचित है महादादिकन को बढ्यो भयो विकार अनित्य है महादादिकन के विकार्य को जो कार्य है ताके चौदह भुवन हैं उनके नाम भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक ये ऊपर

के हैं तैसे नीचे वर्तमान सात लोक अतल, वितल सुतल, रसातल, तलातल, महातल, पाताल ये नाम हैं ब्रह्माण्ड और ताके अंतवर्ती जरायुज अंडजादि चार प्रकार के शरीर समष्टि व्यष्टि रूप अन्नपानादि यह सब अनित्य है एकपंचास (५१) अक्षरः–

सिद्धांतरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

प्रमाणान्नित्यत्वंचात्र कूटस्थत्वमाद्यन्तशून्यत्वं तच्चवेदादी-नामस्त्येव पुराणादयोयेनांशेननित्यास्तमंशं नित्यवर्गेनिधाय येनां-शेनानित्यास्तमनित्य वर्गेनिधाय नित्यादिविभागः समुन्नेय इतिसर्व-मनवद्यं अत्र च कार्य्यकारणयोस्तंतुपटात्मकं परस्परं भिन्नत्व इत्यानितिवदन्त्यतोभेदएवेतिकेचिद्वदंति अन्येतु परमाणव एवतथा-तथासन्निविष्टाः पटादिबुद्धिविषयाः नतुपटोनामास्तीतिवदंते अपरं-तुकारणात्कार्य्यंनातिरिच्यतेकिंत्वेकस्मिन्नेवद्रव्येकार्यकारणत्वव्यवहार-इत्याहुः कार्यकारणभूतयोस्तंतुपटयोर्भेद इति उक्तं गुणगुणिनो-रपिभेदाभेदौज्ञातव्यौयद्गुणःसत्यपिद्रव्येस्वयंनश्यति यथाम्रफलेश्या-मत्वादिस्तत्र भेदाभेदोवसितव्यौ यदिचगुणः यावत्कालं द्रव्यंवर्त्तते

भाषाकीर्तिप्रकाशिका ।

और वेद ये नित्य हैं वेद समस्त नित्य हैं यह प्रमाण है नित्य ताको कहै जो कूट–स्थ होय और आद्य अंत करके शून्य होय सो लक्षण वेदन को है पुराणादिक जितने अंशमें नित्य हैं ता अंशको नित्य वर्ग में धरो और

जितने अंश में अनित्य हैं ताको अनित्य वर्ग में धरके नित्यादिक को बिभाग करलेनो या प्रकार से सिद्धांत निर्दोष है अब यास्थल में कोई ऐसे कहैं हैं कि तंतुपटात्मक कार्य व, कारण ये दोनों द्रव्य परस्पर न्यारी न्यारी हैं याते भेदही है अन्य ऐसे कहैं हैं कि परमाणु ही तहां तहां प्रवेश होके पटादि रूपसे बुद्धि में प्रतीतहोय है पट नामकोई है ही नहीं अपर ऐसे कहै हैं कि कारणते कार्य अलग नहीं है एक ही द्रव्यमें कार्य,व कारण दोनो अवस्था होजायं है कारण जो तंतु कार्य्य जो पट इन दोनों को भेदा भेद यह ठीक भयो ऐसे ही गुण और गुणी को भेदा भेद जानवे योग्य है गुणी जो द्रव्य नाम वस्तु तामें जो गुण है सो तावस्तु के रहते पहिले नष्ट होजाय जैसे आम्रके फल रहते रहते श्यामता ताको गुण नष्ट हो जाय—

तावत्तिष्ठतिनद्रव्यंतावभेदएव केचित् गुणगुणिनोरत्यंतभेदइतिवदंति अपरेतु परमाणवएवकार्याद्रिरूपभावा: गुणगुणिभावोनास्तीत्याहु:

तच्चिन्त्यं एवं क्रियाक्रियावतोर्जातिव्यक्त्योरंशांशिनोः शक्तिशक्तिमतो-र्भेदाभेदौ अत्यंताभेदश्च प्रतिपत्तव्यः तत्रस्थापिघटेचलनक्रियाया अभावात्घटचलनयोर्भेदाभेदौ भवतः चेतनक्रियायाश्च नित्यत्वेनचेतनस्य तत्क्रियाया अत्यंताभेदः ब्रह्महत्यादिनाजातेर्नाशात् ब्राह्मणत्वपि-ण्डयोर्भेदाभेदौसंभवतः घटत्वघटयोरत्यंताभेदः एवमेव अंशगते अंशि-नोवस्थायांतेनांशेनभेदाभेदौ अन्यैरंशैरत्यंताभेदएवंएवं शक्तिशक्तिमतो-रत्यंताभेदोभेदाभेदौ चअत्यन्तयौगुणक्रियाजातिशक्तिसाङ्कर्यादयः

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

तब भेदाभेद समुझनो और जोगुण जब तक गुणी रहै तब तक रहै तब अत्यंत अभेद समुझनो कोई गुण और गुणीको अत्यन्त भेद बतावैं हैं अपरऐसे कहैं हैं कि परमाणुही को रूपादि स्वभाव है न कोईगुण है न कोई गुणी है सोचिंतवन योग्य है ऐसे ही क्रिया और क्रियावान को जाति व्यक्तिको अंश अंशीको शक्ति शक्तिमानको भेदाभेद और अत्यन्त अभेद जानने। जैसे घटतौ है पर चलनेकी क्रियाको अभाव है तासे घट में और चलन क्रियामें भेदा भेद दोनों है चेतन में क्रियाको नित्यत्व है तासे ताकी क्रिया को अत्यन्त अभेद है ब्रह्म-हत्यासे जाति नाश होजाय है तासे ब्राह्मणपने में व पिन्डमें भेदा भेद दोनों हैं घटको और घटपने

को अत्यन्त अभेद है जाअंशके गयेपर भी अंशी बनो रहे ताअंशसे भेदा भेद है अन्य अंशन कर के अत्यन्त अभेद है ऐसे ही शक्ति व शक्तिमान में अत्यन्त अभेद वभेदा भेद जानवे योग्य है-

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

सर्वेषिद्रव्यस्यधर्माः आत्मानात्मपरमात्मेतितत्त्वंत्रयमित्युक्तं तत्रतत्त्वंनाम अन्यारोपितंग्रामाणिकमिति यावत् तच्चद्रव्यमद्रव्यं-चेतिद्विविधं तत्रद्रव्यंचपुनर्द्विविधं जडमजडंच तत्राजडमपिद्विविधं-ईश्वरो जीवश्चेति तत्राजडंवस्तुजीवश्च निरूपितः अद्रव्यं तु सत्त्वंर-जस्तमः शब्दस्पर्शरूपरसगंधाः संयोगः क्रिया जातिशक्ति सादृश्यं चेतित्रियोदशविधं सर्वेषामपिपदार्थानां पदार्थत्रयांतर्भावान्न पदार्थां-तरविरोधः अचेतनमेवबस्तु प्रायाविद्यादि पदवाच्यंशक्तिशक्तिम-तोरभेदादित्याह मायाप्रधानादि पदप्रवाच्यमिति जीवेशा वाभासेन करोति मायाचाविद्याचस्वयमेवभवतीतिश्रुतेः शुक्लादि भेदाइति

भाषाकान्तप्रकाशिका

गुणक्रिया जाति शक्तिसादृश्यादि ये सब द्रव्यके धर्म हैं। आत्मा अनात्मापरमात्मा ये तीन तत्व कहे तत्व वाको नाम है जामें और को आरोप न होय जैसे गांवकी तलाईमें विष्णु पदीको आरोप सो तत्व नहीं भागीरथी तत्व है ताही में प्रमाण है सो तत्व दो प्रकार को द्रव्य अद्रव्य द्रव्य भी दो प्रकार की जड अजड़ तामें अजड़ भी दो प्रकार को जीव

ईश्वर तामे अजड़ जो जीव सेा तौ निरूपण किये अब अद्रव्य कहैं सत्व रजतम शब्द स्पर्श रूप रस गंध संयेाग क्रिया जाति शक्ति साद्दृश्य ये तेरह प्रकार के हैं सब पदार्थों को तीन ही पदार्थमें अंतर्भाव है तासे पदार्थ अन्तरमें बिरोध नहीं है अचेतन ही वस्तु माया अविद्यादि शब्द से बेाली जाय है शक्ति व शक्तिमानको अभेद है या रीतिसे माया प्रधानादि पद बेाले जांय है जीव और ईश को आभास अर्थात् विद्या अविद्या से प्रतीत कराय देय–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णामित्यादि श्रुतेः समशब्दः सर्वपर्यायः समेऽपि सर्वेऽपि तत्र तस्मिन्नचेतने सत्वरजस्तमोमयमचेतनमित्यर्थः दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्ययेति स्मृतेः प्रत्यक्षादिविषयत्वान्प्राकृतमचेतनमादौ निरूपितम् नन्वेतदयुक्तं तथाहि तत्रानुमानं विमतं मिथ्या-दृश्यत्वाज्जडत्वात्परिच्छिन्नत्वाच्छुक्तिरूप्यवदिति मिथ्यात्वं च सदसत्वानधिकरणत्वं तच्च सत्वविशिष्टासत्वाभावो वा सत्वात्यंताभावा-सत्वात्यंताभावरूपं धर्मद्वयं वा सत्वात्यंताभावविशिष्टासत्वात्यंता-भावरूपं विशिष्टं वेति चेन्न सदेकस्वभावे जगति विशिष्टाभावस्येष्ट-त्वात् नद्वितीयः सत्वासत्वयोरेकाभावे परस्य सत्वावश्यक —

भाषाकांतिप्रकाशिका

माया अविद्या आपही होय है यह श्रुति है ता अचेतन सत्व रज तम बारे में शुक्लादि

भेद सब हैं समशब्दसर्व वाचक हैं मायाके स्वरूप की श्रुतिभी है अजन्मा एका (मुख्या) लाल ऊजरी कारी ऐसी समान प्रजा रचै है श्री गीता जी में भी कह्यो है यह मेरी माया खेलवे वारी गुणमयी बड़ी दुरत्यय है प्राकृत अचेतन प्रत्यक्ष दरसे है तासे पहिले प्राकृत अचेतन को लिखैं हैं

अद्वैतवादीकी आशङ्का है ननुइत्यादि वाक्य से यह पहिला कहा हुआ ठीक नहीं है इस को दृढ़ करनेके लिये अनुमान करता है अनुमान में पक्ष साध्य हेतु, दृष्टान्त ये चार कहे जाते हैं विमतं यह पक्ष है सकल प्रपञ्च को विमत बोलते हैं मिथ्यात्व साध्य है दृश्य त्व हेतु है जडत्व परिच्छिनत्व यह दोनों भी मिथ्यात्व के साधक हेतु हैं शुक्तिरूप्यदृष्टान्त है भाव यह है जैसे शुक्तिरूप्य मिथ्या है इसी तरह उक्त तीनों हेतुवों से सब जगत मिथ्या है अब विचार करता है मिथ्यात्व किस को कहते हैं सत्व को और असत्व को अनधि करण मिथ्या है ।

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

र्थेन व्याघातात् अतएव न तृतीयः ननु सत्त्वासत्त्वयोः परस्पर-
विरहरूपत्वानंगीकाराद्व्याघातः परस्परं विरहव्याप्यत्वादिकं न
व्याहतिकरं गोत्वाश्वत्वयोः परस्परविरहव्याप्ययोरुभयाभाव-
सत्त्वात् किंतु क्वचिदुपाधौ सत्त्वेनाप्रतीयमानत्व मसत्त्वं त्रिकालाबा-
ध्यत्वं सत्त्वं तयोरभावः साध्य इति चेन्न असल्लक्षणस्यासंग्रहापत्ति-
व्याप्तेः तस्याप्युक्तासत्त्वांगीकारे लक्षणे सद्भिन्नत्वस्य वैयर्थ्यापत्तेः
शब्दाभासेन तुच्छस्यापि क्वचिदुपाधौ सत्त्वेन धीसंभवाच्च उक्तसत्त्वा-
भावस्य शून्यवादिनापि जगति स्वीकाराच्च लाघवात् सत्त्वासत्त्वयोः
परस्पराभावत्वस्यैवौचित्याच्च नापि सार्वत्रिक त्रैकालिकनिषेध

भाषाकान्तिप्रकाशिका

इसमें फिर विचार करता है सत्वविशिष्ट असत्वाभाव रूपहै किम्वा सत्त्वाभाव असत्वाभाव रूप धर्म द्वयस्वरूप है किम्वा सत्त्वाभावविशिष्ट असत्त्वाभाव रूप है यह तीन विकल्प हैं इनमें से प्रथम विकल्प को खण्डन करता है सत्त्व-विशिष्टासत्त्वाभाव जगतमें मानते ही हैं क्योंकि जगतको स्वभावसे सत्स्वरूपता है उसमें सत्त्व-विशिष्टा सत्त्व कैसे रह सक्ता है दूसरा विकल्प भी ठीक नहीं असत्त्वाभाव सत्त्वस्वरूप है जब कि असत्त्वाभाव माना उस अवस्थामें सत्त्वा भाव नहीं आसक्ता है किन्तु सत्त्व ही रहि जाता है इसी तरह सत्त्वाभाव रहने पर असत्त्व

ही रहि जाता है असत्त्वाभाव नहीं आसक्ता सत्त्वाभाव असत्त्वस्वरूप है याते तीसराविकल्प भी नहीं कह सकते इसी प्रकार व्याहति दोष आवैगा ननु इत्यादि ग्रन्थ से पूर्वोक्तव्याघाता दिदोषों को वारण करता है–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

प्रतियोगित्वं मिथ्यात्वं निषेधस्यतात्त्विकत्वेऽद्वैतहानि रता-त्त्विकत्वेसिद्धसाधनापत्तेःव्यावहारिकत्वेपि तस्य बाध्यत्वेन तात्त्विक सत्त्वाविरोधित्वेनार्थान्तरताच नच ब्रह्मस्वरूपोनिषेधःभ्रमकालाभिव्य-क्तस्य सापेक्षस्य निषेधस्य भ्रमकालनिरूपितनिरपेक्षनिर्विशेष ब्रह्मरूप-त्वासंभवात् किंचस्वरूपेणनिषेधेऽसत्त्वापत्तेः पारमार्थिकत्वेन निषेध-प्रतियोगित्वस्य निर्धर्मके ब्रह्मण्यपि सत्त्वात् एतेन स्वात्यन्ताभावाधि-करणएवप्रतीयमानत्वं मृषात्वमिति निरस्तं सपवाधत्वात् सप्रयोग-त्वाद्वित्वित प्रतीयमानो पाधिके असंगत्वात्केवला ।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सत्वाभाव असत्त्वस्वरूप नहीं असत्त्वाभाव सत्त्वरूप नहीं परस्पर विरह व्याप्यत्वरूप सत्वा सत्वमानने से भी व्याहतिका अवसर नहीं। गोत्व अश्वत्व परस्पर विरह के व्याप्यहैं अर्थात् गोत्वके अभाववारे अश्वमें गोत्व नहीं रहता ऐसे ही अश्वत्वके अभावशाली गौमें अश्वत्व नहीं रहता दोनों का अभाव उष्ट्रमें रहता है इससे

सत्व और असत्वका पूर्वोक्त अर्थ नहीं बन सकता अब उनका अर्थ लिखते हैं किसी स्थान में जो प्रतीय मान नहीं है वह असत्व है और जिसका तीन कालमें बाधनहीं सो सत्व है इन दोनोंका अभाव साध्य करते हैं ऐसा कहना भी अयुक्त है असतका लक्षण ब्रह्म में अतिव्याप्त है कारण यह है कि ब्रह्म भी असंग है यदि उसे भी उक्त असत्व मानोंगे उसके लक्षण में सद्भिन्न त्व बिशेषण व्यर्थ होताहै शब्दा भासते तौ गगन कुसुम भी किसी स्थान में सत्प्रतीतिका बिषय हो सकता है उक्त सत्वाभाव तौ शून्यबादी भी जगतमें मानता ही है लाघवसे सत्वासत्वका परस्पर अभाव रूप मानना ही उचित है।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

स्वस्यत्यंताभावप्रतियोगिनि ब्रह्मण्यतिव्याप्तेः नच ज्ञाननिवर्त्यत्वं मिथ्यात्वं सेतुदर्शन निवर्त्य ब्रह्महत्यादेरिव सत्यस्य संसारस्य ब्रह्मज्ञाने ननिवृत्तेर्दृष्टत्वात् नापि सद्भिन्नत्वं मिथ्यात्वं सत्वं च प्रमाणसिद्धं प्रमाणं च दोषासहकृतज्ञानकारणत्वं घटादेरपि कृतदोषहीनप्रत्यक्षादि सिद्धत्वात् कल्पितदोषस्य ब्रह्मबोधकवेदेरि

संभवात् सर्वप्रमाणागम्येत्यदभिप्रेतेशुद्धे ऽतिव्याप्तं श्चेति मिथ्यात्वस्य मिथ्यात्वे प्रपंच: सत्य: स्याद्ब्रह्मवत् मिथ्यात्वस्य सत्यत्वेनैनाद्वैतहानिःतद्वदेव विश्वस्यापि सत्यत्वोपपत्त्या दृश्यत्वादिकमप्रयोजकं स्यात् दृश्यत्वं च नतावद्वृत्तिव्याप्यत्वं वेदांतजन्यवृत्तिविषये ब्रह्मणि व्यभिचारात् ।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सार्व त्रिकत्रैकालिक निषेध प्रतियोगित्वरूपमिथ्यात्व भी नहीं कहसकते जो निषेध तात्विक (सत्य) माना जाय तौ अद्वैत हानि है अतात्विक निषेध मानें तबभी सिद्ध साधन दोष है व्यवहारिक मानें तौ तात्विक सत्यका विरोधी न होने से अर्थान्तर दोष होजायगा निषेधको ब्रह्मस्वरूप मानने से कहे भये दोष का परिहार हो सकता है परन्तु जिस कालमें भ्रान्ति है उस कालमें निषेधका निश्चय नहीं है उसी भ्रम काल में निर्विशेष ब्रह्मस्वरूपका तौ निश्चय है फिर कैसे ब्रह्मस्वरूप होसकता है और भी दोष है कि जो स्वरूपसे निषेधक होंगे तौ असतकी समान प्रपञ्च भी मानना होगा अर्थात् जैसे गगन पुष्प असत है ऐसे ही

प्रपञ्च भी असत् कहना पड़ेगा इस लिये स्वरूप से निषेध नहीं कर सकते परमार्थिकत्व रूप से निषेधप्रतियोगता निर्धर्मक ब्रह्ममें भी है इससे परमार्थिक निषेधभी नहीं करसकते प्रपञ्चके अत्यन्ता–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

अन्यथा ब्रह्मपराणां वेदान्तानां वैयर्थ्यप्रसंगात् नापि जडत्वं हेतुः तद्भिन्नाज्ञानत्वं आत्मनि व्यभिचारात् तथाहि ज्ञानं स्वविषयं परविषयं वा नाद्यः स्वस्यानंगीकारात् नांत्यः मोक्षे पराभवात् ननु परिच्छिन्नत्वं हेतुः तच्च देशतः कालतो वस्तुतश्चेति त्रिविधं तत्र देशतः परिच्छिन्नत्वमत्यंताभावप्रतियोगित्वं कालतः परिच्छिन्नत्वं ध्वंसप्रतियोगित्वं वस्तुनः परिच्छिन्नत्वमन्योन्याभाव प्रतियोगित्वमिति तत्र आद्यं तयो ब्रह्मणि व्यभिचारात् मध्यमस्य ध्वंसकालादौ भावासिद्धेः सत्कारणबाधार्हत्वं अध्यस्त धिकदोषप्रयुक्तभानत्वं प्रतिभासमात्रशरीरत्वं चोपाधिः देहात्मैक्याद्यध्यासव्यापिसद्ध—

भाषा कांति प्रकाशिका

भाव का अधिकरण जो ब्रह्म उसमें जो प्रतोयमान है वह मिथ्या है ऐसे मिथ्याकाल क्षण नहीं कर सकते ब्रह्म में अति व्याप्ति है श्रुति कहै है वही ऊपर वही नीचे इत्यादि प्रतीतिगोचर उपाधियों से ब्रह्मको असङ्गत्व बोधन किया गया है जब ब्रह्म असङ्ग है तो

उस का अभाव सर्वत्र है उस अभावका प्रति योगी ब्रह्म ही है जिस की ज्ञान से निवृति होती है सोमिथ्या है यह भी मिथ्यात्व का लक्षण नहीं बन सकता जैसे ब्रह्म हत्या की निवृति सेतुदर्शनसे होती है ऐसे सत्य संसार की निवृत्ति ज्ञानसे दिखाई पड़ती है सतसे जो भिन्न है सो सब मिथ्या है यहभी कथन असत है क्योंकि उस में विचार होगा सत्वक्या है कदाचित कहैं कि जो प्रमाणों से सिद्ध है वही सत्व हैं प्रमाण- उसे कहते हैं कि जो दोष निरपेक्ष ज्ञान का कारण होय घटादिकभी दोष हीन प्रत्यक्षादिक प्रमाणोंसे सिद्ध है मिथ्यालक्षण ग्रस्त न हुआ-

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

बाधकभेदविषयकज्ञानेन बाध्ययोग्यत्वाच्च तत्साध्यव्याप्तिः नत्वसत्प्रकारकेति असत्त्वाधिकेति च विशेषणं व्यर्थं तद्भिन्नैवोपाधेः साध्यव्यापकत्वात् तावन्मात्रस्य तु साधनव्यापकत्वान्नोपाधिकत्व- मिति वाच्यम् विशिष्टाभावव्यातिरिक्तत्वेन वैयर्थ्याभावादिति सत्य- त्विरमिथ्यात्व पंचलक्षणीनिरासः

भाषाकान्तप्रकाशिका

कल्पित दोष तौ ब्रह्म बोधक वेद में और

है है समस्त प्रमाणोंका अगोचर आपके अभिमत जो शुद्ध ब्रह्म उसमें अतिव्याप्ति है मिथ्यात्व को जो मिथ्या कहैं तौ प्रपञ्च सत्य होना चाहिये ब्रह्मकी तरह यदि मिथ्यात्व को सत्य कहैं तौ अद्वैत हानि होजायगी ऐसे विश्वके भी सत्य होजाने पर मिथ्यात्वके साधक जो दृश्यत्वादि हेतु वे कार्यकारी न होयंगे दृश्यत्व उसको कहैं जो बृतिका विषय हो परन्तु इस प्रकार दृश्यत्व का निरूपण बनै नहीं ब्रह्ममें व्यभिचार आवै है कैसे कि ब्रह्म भी वेदान्त जन्यबृत्तिका विषय है मिथ्यात्व वहां रहै नहीं दृश्यत्व हेतु रह गया इसी रीतिसे व्यभिचार हुआ साध्यके अभाव वाले जो हेतु रहि जावै उसै व्यभिचार कहैं हैं यदि वेदान्त-जन्यबृति को विषय ब्रह्मको न मानै तो ब्रह्मके प्रतिपादन करने वाले वेदान्त बचन व्यर्थ होजायंगे। जड़त्व भी हेतु नहीं बनता यदि जड़त्व अज्ञान स्वरूप कहा जाय तौ आत्मामें व्यभिचार है कैसे कि ज्ञान को स्वविषयक मानौ कि पर

विषयक । स्वविषयक तौ आप को अङ्गीकार नहीं पर विषयक कहौ तौ मोक्ष में पर ही उपलब्ध नही होय । इसी तरह परिच्छिन्नत्वभी हेतु नहीं बनता यह परिच्छिन्नत्व देश व काल और वस्तु से होय है–

देश से परिच्छिन्नत्व सो होय है जोकि अत्यन्त अभाव का प्रतियोगी होय काल से परिच्छिन्नत्व सो होय है जो कि ध्वंस का प्रतियोगी होय वस्तु से परिच्छिन्नत्व सो है जो कि अन्योन्य भावका प्रतियोगी होय परन्तु इनतीनों प्रकार से ठीक नहीं बनै देश और वस्तुसे परिच्छिन्नत्व ब्रह्ममें व्यभिचारी है कैसे कि ब्रह्ममें मिथ्यात्व रूपजो साध्यसो तौरहताही नहीं कालसे परिच्छिन्नत्वभी नहीं कहसक्ते ध्वंस कालादिमें भागासिद्धि होयहै क्योंकि पक्षको एकदेश जोध्वंसादि उसमें कालसे परिच्छिन्नत्व नहीं रह सक्ता । अब उन मान में उपाधि दिखलावैं हैं सप्रकार कबुद्धि से बाध्य के योग्य होय और अध्यस्त से अधिक दोष प्रयुक्त

ज्ञानत्व और प्रतिभास मात्र शरीरत्व ये तीन उपाधि हैं। देह और आत्मा का ऐक्या ध्यास भी सप्रकारक भेद विषयक ज्ञान से वाध्यके योग्य है याते उपाधिसाध्य काव्यापकहो जाता है क्योंकि उपाधि वही है जो किसाध्यका व्यापक साधन की अव्याप्य होय यद्यपि सप्र-कारक और अध्यस्ताधिक इन दोनों विशेषणों के विना भी उपाधिसाध्यका व्यापक होजाता है परन्तु साधनका अव्यापक नहीं बन सक्ता किन्तु व्यापक ही होजाता है इस से उक्त दोनों विशेषण व्यर्थ हैं और उपाधिभी संगत नहीं होसकै तथापि विशिष्टाभावके अतिरिक्त मानने से दोनों विशेषण व्यर्थ नहीं होसक्ते उपाधिभी चरितार्थ होजाता है या प्रकार परि-कर सहित मिथ्यात्व पञ्चलक्षणी निरासकरी

अथ प्राकृतं निरूप्यते अप्राकृतं विकारशून्यं वस्तुस्वरूपं तु विशेषः भक्तजनैर्हरियेर्पितस्य प्राकृतस्यापि भोजन सामग्र्यादेः प्राकृ-तत्वं जायते इति अतएव प्राप्य प्राकृतः संसारोपयोगि इतिकेचित् वदंति वैकुंठादि गत शुकशारिका दीनामप्राकृति लौकिकशरीरादि

रूपम प्राकृतमेवा चेतनं तस्य ज्ञान जनकं इदमेव स्वप्रकाशरूपं शुद्ध सत्त्वद्रव्यमित्युच्यते अतस्य सुगंध पुष्पांजनोद्वर्तन वस्त्रभूषण विमान गोपुर चत्वर मंडपादि सर्वशुद्धसत्त्वद्रव्यात्मक मेव श्रीमद्भागवते । न वर्तते यत्ररजस्तमस्तयोः सत्त्वंचमिश्रं न च कालविक्रमः । नयत्र मायाकिमुता परेहरेरनुव्रतायत्र ।

भाषा कांति प्रकाशिका

ताके अंतर अप्राकृति निरूपण करें हैं ! अप्राकृत नाम विकार शून्य वस्तु तामें यह और विशेष है कि भक्तिजनों ने हरि को प्राकृत वस्तु भी प्रेम से अर्पण करी भोजन सामिग्री आदि सो भी अप्राकृत हो जाय है ऐसे जो कोई कहैं हैं सो भी ठीक है भगवत संवन्ध को अचिंत प्रभाव है याते अन्य भी अप्राकृत संसार वर्त्तं है वैकुंठादिक में जो तोता मैना आदि अप्राकृत लौकिक शरीरादि रूप के हैं सो अप्राकृत अचेतन है ताको ज्ञान की उत्पत्ति करवे वारी स्वयं प्रकाश शुद्ध सत्व द्रव्य वर्णन करी हैयाते सुगंध फूल अंजन उद्वर्त्तन वस्त्र भूषणादि विमान गोपुर चौराहे मंडपादि सब शुद्ध सत्व द्रव्य के हैं सोई श्रीमद्भागवत में जब ब्रह्मा जी को भगवान ने अपने लोक के दर्शन कराये

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

सुरा सुरार्चिताः श्यामावदाताः शतपत्रलोचनाः पिशंगवस्त्राः सुरुचः सुपेशसः॥ सर्वे चतुर्बाहव उन्मिषन्मणिप्रवेकनिष्काभरणाः सुवर्चसः॥ प्रवालवैदूर्य्य मृणालवर्च्चं सांपरिस्फुरत्कुण्डलमौलिमालिनः॥ भ्राजिष्णुभिर्यःपरितो विराजते लसद्विमानावलिभिर्महात्मनां॥ विद्योतमानप्रमदोत्तमाद्युभिः सविद्युदभ्रावलिभिर्यथानभः इति भागवते॥ प्रकृतिरिहकालः शुद्धसत्वविभागइतिकिलकथयित्वावमहानन्दं परमनात॥ कथयतिरमणीयं श्रं महाचार्य्यदेवः प्रवरपरमहंसस्वामिभावाधिशालो इतिश्री परमहंसवैष्णवाचार्य्य श्रीहरिव्यासदेवविरचिते सिद्धान्तरत्नाञ्जलौ द्वितीयपरिच्छेदः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तहां श्रीवैकुन्ठ को रूप वर्णन हैं जा वैकुंठ में रज तम नहीं तिन दोनों को मिलो भयो सहचर जड़ सत्व जहां नही तहां हरि के सेवक रज तम वाले असुर सत्व गुणी देवता जिन की वन्दना करैं रहैं काल को पराक्रम जहां नहीं सब को मूल माया ही जहां नहीं श्याम कांति कमल लोचन पीत वस्त्र सुन्दर मनोहर चार भुजा वाले प्रकाश मान मणिन के समूह की धुकधुकी भूषण पहरे तेज के पुंज बिराजे हैं। मूंगा की वैदूर्य्य मणि कमल नाल की सी कान्ति कुण्डल कानन में झलकें किरीटन की पंक्ती मस्तक पर ऐसे महात्मा प्रकाश मान जिन

पर बैठे उन विमानन की पंक्ति सेवैकुंठ में शोभा बिजुली समान चमकैं प्रमदा उत्तमा तिन की कांति प्रकाशमान तिन से वैकुण्ठ ऐसो दरसै जैसे बिजुली बादर सहित आकाश दरसै

दो० प्राकृति अचेतन काल पुन शुद्ध सत्त्व समुदाय
ये विभाग वर्णन किये श्री आचार्य राय ।।
ब्रह्मतत्व सबते परे सुन्दर परम अनूप।
स्वामिभाव हियधारके कहत आचार्य भूप ।।

इति श्री दासानुदास हंसदास कृत भाषा प्रबन्ध द्वितीय परिच्छेद समाप्तम्।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तृतीय परिच्छेद प्रारम्भ।

सुरचित शुभवेणी भूषितौ भूषिताभिरव्धि कृतपरहासौ नंदनंनौ जनान स्वान श्रुति भिरपि विमृग्यौ गोपिका नंदपालौ विमल कमल नेत्री नौमिभक्त्यैक नेत्री १ तत्रतावदात्मावारे द्रष्टव्य: श्रोतव्योमंत व्योनिदिध्यासितव्य इत्यादिना श्रवणादिकं च भक्तिसहकृत साधनत्वे नाभिहितं तत्र कोयं श्रवणादिविधि: त्रयोहिविधे: प्रकारा: अपूर्व विधि नियमविधि: परिसंख्या विधिश्चेति तत्र कालत्रयेपि कथमप्य प्राप्ति फलको विधिर पूर्व विधि: यथाव्रीहीन् प्रोक्षतीति प्रोक्षणस्य संस्कार —

भाषाकान्ति-प्रकाशिका ।

सुन्दर रूप अनूप हैं दोऊ भूषण की छवि अंगन मांहो । कर परिहास विलास भरे स्वजनन को आनन्द कराहीं । वेदहु ढूंढ थके नहि पाये श्रीराधा कृष्ण दिये गलवाहीं । अमल कमल से नेत्र बने वे प्रेमहि के आधीन सदाहीं । तामें श्रुति कहे है कि अरे आत्मा जो श्रीकृष्ण दर्शन करवे योग्य है वा दर्शन करवे को साधन श्रवण करनो मनन करनो और ध्यान है इत्यादि भक्ति सहित जो हरिचरित्र सुन्यो सो साधन विधान कियो तामें श्रवणादिकौन विधि है या विचार होवे पर तीन विधि के प्रकार हैं अपूर्व विधि नियम विधि परिसंख्या विधि तामें तीन काल जो वस्तु कैसे भी प्राप्त नहीं ता फल की विधि को अपूर्व विधि कहैं जैसे धान प्रोक्षण करै जैसे पानी के छींटा दे के संस्कार करै यह प्रोक्षण रूप संस्कार कर्म की

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

कर्मणो विधिं विनामानांतरेणाप्राप्तेः पक्षे प्राप्तस्याप्राप्तांशपूरि पूर्णो विधिर्नियमविधि यथा व्रीहीनवहन्तीति अत्र विध्यभावेपि पुरोडाश प्रकृति द्रव्याणांव्रीहीणांतन्दुल निष्पत्त्याक्षेपादेवावहनन प्राप्ति-

र्थंविध्यमोति न तत्रात्यर्थो विधिः किंत्वाक्षेपादेवावहनन प्राप्तौ तद्वदेव-
लोकावगत कारणत्वा विशेषान्नखदलनादिरपि (ओवाप्र यान्निति अथ-
हनना प्राप्तांशसंभवात्तदंश परिपूर्णफलकः द्वयोः शेषिणोरेकस्य शेष-
स्य वा एकस्मिन शेषिरिपेक्षुणोः शेषयोर्वा नित्य प्राप्तौ शेषांतरस्य
शेष्यं तरस्यवा।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

विधि विना श्रौर श्रौर प्रमाणों से अत्यंत प्राप्त नहीं है ताको यह अपूर्व विधि विधान करै है। एक पक्ष में जो प्राप्त है तामें अप्राप्त अंश को पूर्ण करै ताविधि को नियम विधि कहै हैं जैसे धान कूटै तहां विधि के विना ही पुरोडाश प्रकृति द्रव्य जो धान तिनको कूटनो प्राप्त भयो ताकी प्राप्ति में विधि नहीं है काहे से कि चांवल निकारवे के आक्षेप से ही कूटनो प्राप्त भयो किंतु नखों से छील के भी चांवल सिद्धि होंय हैं या पक्ष की प्राप्ति से कूटवे को अंश नहीं प्राप्त होय ता अंश की परिपूर्ण फलदारी नियम विधि है अर्थात् चांवल छर के ही निकारै नख से दलन न करै दो शेषी की नित्य प्राप्ति में अथवा शेष अन्तरवा शेषी अन्तर की निवृत्ति करवे वाली फल की तीसरी विधि परिसंख्या है

निवृत्तिफलकोविधिस्तृतीयः॥ यथाग्निचयने इमामगृभ्णन् रशनामृतस्येत्यश्वाभिधानीमादत्ते इत्यत्राश्वरशना ग्रहणवद् गर्दभरशनाग्रहणं चानुष्ठेयं तत्रइमामगृभ्णन्निति मंत्रो लिंगादेवरशनाग्रहणप्रकाशन सामर्थ्यकत्वाद्गर्दभरशनाग्रहणवदश्वरशनाग्रहणेऽपिनित्यं प्राप्नोतीति नतत्प्राप्त्यर्थोयंविधिः किंतु लिंगविशेषाद्गर्दभरशनाग्रहणेऽपिमंत्रः प्राप्नुयादितितन्निवृत्त्यर्थः अथवा ज्योतिष्टोमेश्रूयमाणा पत्नीः संयाजयन्ती त्यत्राग्न्यवाक्ये नश्रूयंत त्वेविहितेनतु त्वष्टाराद्यनोपकरणे प्राप्ते नपत्नीं रितिवाक्येनपत्नी संयाजभिन्न मुख वाक्सामि त्रियन्नुना विपुकर्षं परिसंख्यायते इत्यनुपूर्व पत्नीत्वं तावत्

भाषाकान्तिप्रकाशिका

अर्थात दो की प्राप्ति में एक की निषेध करने वाली सो परिसंख्या विधि है जैसे अग्नि चयन यज्ञ में यह डोरी ग्रहण करै यह एक मंत्र है अश्व की डोरी ग्रहण करै यह दूसरो मंत्र है एक घोड़ा दूसरो गदहा तामें पहिले मंत्र से दोनों डोरी पकड़नो प्राप्त भयो मंत्र को लिङ्ग डोरी पकड़ने की सामर्थ्य प्रकाश करै है तासे गदहा की डोरी की तरह घोड़ा की डोरी पकड़ नो नित्य प्राप्त है तासे अश्व रसना प्राप्ति के अर्थ यह विधि नहीं है किंतु घोड़ा के नाम लेवे से गर्दभ की डोरी पर यह मंत्र प्राप्त हो जाय ताकी निवृत्ति की विधि है जैसे अग्नि

ज्योमयाग के विषय में शय्वंता प्रायणीया सन्तिष्ठ तेन पत्नी संया जयंती ऐसो लिखो है ताको अर्थ यह है कि प्रायणीय नाम की इष्टि शय्वंन्त पाठ करके समाप्त करनी चाहिये फिर पत्नी संयाज का निषेध है यहां परशय्वन्ताया आदि वाक्य से शय्वंतत्व विधान किये से ताके उत्तर में होवे वाले जितने भी पत्नी संयाजादि अंग हैं सब को हीन करनो प्राप्त भयो फिर न पत्नी इत्यादि पीछे के दूसरे वाक्य से पत्नी संयाज का ही निषेध ठीक रहा या कारण ते न पत्नीः या वाक्य से पत्नी संयाज्य से न्यारे सूक्त वाक्य समिष्ठिय जुरादि में न करवे की व्यावृति करै हैं अर्थात् सूक्त इत्यादि करनो पत्नी संयाजन करनो यह वोध करै हैं यह तो पूर्व पक्ष की रीति से उदाहरण दियो नहीं तो

• अन्यथा संतिष्ठतेइत्यस्य करणा शाब्दस्य प्रत्यक्षत्वेन प्राप्ति पक्षिकं नयाकयानुरूपाच स्वार्थं त्याग परार्थ कल्पना प्रतिबाधादि दूषणंतदो पदुष्टा विधि रत्यंतमप्राप्तौ नियमः पाक्षिकेसति तत्रत्वन्यत्र च प्राप्तौ परिसंख्येतिनिर्णायतेयस्य शब्दतो अर्थतोवा अयोग व्यावृति फलं सन्निय मोविधिः नियम परिसंख्यानि विक फलक विधिस्त्वमपूर्व विधिःत्व तथामुदाहरण सांकर्येपि न क्षतिरितिनव्याः अथवा नाम वेदान्तग-

वाक्यानि भगवत्तत्त्व प्रतिपादकानि तानि तत्त्वदर्शिन आचार्याद्वाक्यार्थं ग्रहणं एवमाचार्योपदिष्टार्थस्यस्वात्मन्येवमेवयुक्तमितिहेतुतःप्रवेशनं

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तिष्ठतेयो श्रवण शास्त्र के प्रत्यक्ष होवे से प्राप्ति परिसंख्या हो जायगी जो वस्तु कबहूं नहीं प्राप्त भई ताके लिये अपूर्व विधि है पक्ष में नियम है अन्यत्र प्राप्ति में परिसंख्या गाई जाय है जो शब्द से अर्थ से प्रयोग को दूर करै सो नियम विधि है नियम परिसंख्या इन दोनों से न्यारी फलवारी अपूर्व विधि है यद्यपि इनके उदाहरणों को संकोच है तथापि हानि नहीं यह नवीन कहै हैं श्रवण ताको नाम है कि वेदान्त के वाक्य जिनमें भगवत्तत्त्व प्रति पादक है तिनको तत्त्वदर्शी आचार्य के वचन से अर्थ ग्रहण करनो और आचार्य के उपदेश किये भये अर्थ को यह युक्त हो है ऐसे जान के अपने मन के विषय प्रवेश करनो

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

मननं श्रुतस्यार्थस्यागमबलेनभावनानिदिध्यासनं एतादृश श्रवणादे प्राप्तत्वादपूर्वविधिरेवायंविचार्य्यं स्वयंब्रह्म यः परमात्मनोभगवतो जगज्जन्मस्थिति मोक्षलयकारणत्वंलक्षणं यतोवाइमानि भूतानिजायन्ते येन जातानिजीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्म-

न्मस्थिति मोक्षलयेष्वे कैककारणत्वंलक्षणमनन्यगा मित्वात् तथा चलक्षण चतुष्टयमेवेदं परस्पर निरपेक्षमिति तत्वं श्री रामानुजस्तु सृष्टि स्थिति प्रलयकारणात्वं समुदितमेक कमेवलक्षणमितिस्वभाष्ये आहतत्र व्यावर्त्याभावात् तदनुयायिनस्तुयत्प्रतियंतीति प्रलयः अभिसंविशं तीतिमोक्ष इति वदं

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

वाको नाम मनन है और फिर वाच्यर्थ को निरन्तर भाव नाकरनो सो ध्यान है ऐसो श्रवणादिक पहिले नहीं प्राप्त भयो तासे या को अपूर्वविधि कहैं विचार करवे योग्य जो ब्रह्म परमात्मा भगवानता को लक्षण जगतकी उत्पत्तिपालन मोक्षलय है सोई श्रुति ने कह्यो है जाते ये सब भूतानि उत्पन्न होंय है जाकर के जिये हैं जासेमोक्ष होय है जामें लय होंय है तामें जगत के जन्मस्थित मोक्षलय में एक एक कारण को लक्षण अनन्य गामी है तैसे ये चारौ लक्षण परस्पर निर्पेक्ष हैं यह तत्व है श्री रामानुजसृष्टि स्थिति प्रलय को कारणात्व एकही लक्षण है ऐसे अपनी भाष्य में कहते भये सो नहींहै काहे से कि व्यावर्त्यको अभाव है उन के

विशतीति नप्रलया नंतरमोक्षाधिकारिणो संभवात् मायावादिन-स्तु एकमेवलक्षणमिदमभिन्ननिमित्तोपादान तयाद्वितीयं ब्रह्मोपल क्षयति ब्रह्मणश्चोपादानत्वमद्वितीयकूटस्थ चैतन्यरूपस्य न परमाणु नामिवारंभकत्वरूपं नवाप्रकृतेरिवपरिणामत्वरूपं किंत्वविद्ययावियदादिप्रपंचरूपेणविवर्त्तमानत्वलक्षणं । वस्तुनस्तुतत्समसत्ताकोऽन्यथा भावः परिणामस्तदसमसत्ताको विवर्त्त इतिवा कारण समलक्षणोऽन्यथाभावः परिणामस्तद्विलक्षणोविवर्त्त इतिवा कारणाभिन्नं कार्यं परिणाम ।

अनुयायी प्रतियंति नाम प्रलयको अभि-संविशंति नाम मोक्षको बतावैं हैं सोभी नहीं बन सकै प्रलय के अनंतर मोक्षके अधिकारी कहांसे आवैं माया वादी तौ एकही यह लक्षण अभिन्न निमित्त उपादान ताकर के ब्रह्म को लक्षकरावैं हैं अद्वितीय कूटस्थ चैतन्यरूपब्रह्म को उपादानत्व परमाणू को तरह आरंभकत्व रूपसे नहीं है और जैसे प्रकृति परिमाण को प्राप्त होय तैसे भी नहीं है किन्तु अविद्या करके आकाशादिक प्रपंचरूप से विवर्त्तमानत्व लक्षण है वस्तु करके तासमसत्ता के अन्यथा भाव होवे को परिणाम कहैं ता असमसत्ताको विवर्त्तक हैं ऐसीभी है अथवा कारण समलक्षण

के अन्यथा भाव होवे को परिणाम कहैं तासे जो विलक्षणताको विवर्त्तक हैं अथवा कारण से अभिन्न जो कार्य

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तदभेदं विनैव तद्व्यतिरेकेण दुर्वचं कार्यं इति विवर्त इति वा विवर्तपरिणामयोर्विवेक इत्याहुः । तत्र धर्मान्तरमुपादाय व्यावर्तकस्वरूपोपलक्षणत्वस्य निर्विशेषेऽसंभवात्तदुक्तलक्षणस्य विवर्तस्य विकल्पासहत्वात् माध्वास्तु उत्पत्तिस्थितिसंहारनियतिज्ञानावृत्तिः । बंधमोक्षौ च पुरुषाद्यस्मात्सहरिरेकराडिति स्कांदोक्तया-त्मशब्दस्य यत इति सूत्रस्थादि पदेन नियत्त्याद्यर्थं विलक्षणानिर्वतीति लक्षणाद्वयं स्वीकर्त्तव्यमिति नामितव्यं यतो वेति श्रुतौ अनुक्तत्वात् तन्त्रान्तरेण लक्षणान्तराण्यपि वक्तुं शक्यत्वात्ता ।

भाषार्थप्रकाशिका

सो परिणाम है तासे अभेद बिना ही तासे व्यतिरेक कहिवे में न आवैं जो कार्य सो विवर्त है यह विवर्त्तपरिणाम दोनोंको विचार है । तामें यह कहनो है धर्मांतर को उठाय के व्यावर्तकस्वरूप को उपलक्षणपनो निर्विशेषमें नहीं बनै जाके लक्षण कहे ऐसे विवर्त्त में विकल्प नाम भेद सह्यो नहीं पड़े माध्वसम्प्रदायी उत्पत्तिस्थिति संहार नियत ज्ञान आवृत्ति बंध मोक्ष या जीव के जा पुरुष से होंय सो हरि एक ही विराजन वारो है ये स्कन्द पुराण

के कहे लक्षण (जन्मादिजाते) या सूत्र में जो आदि पद है ता आदि शब्द से नियतादि भी लक्षण ब्रह्म में हैं ऐसे लक्षण आठ स्वीकार करैं हैं तामें इतनो

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अथ यथोक्तचतुर्भिरेव लक्षणैर्लक्षयितस्य ब्रह्मणो निर्दोषत्वमनन्तानवद्यकल्याणगुणगणाकरत्वमुपास्यत्वं नित्यविग्रहं चाह स्वभावत इत्यादिना स्वभावतोऽपास्तसमस्तदोषमशेषकल्याणगुणैकराशिं। व्यूहाङ्गिनं ब्रह्म परं वरेण्यं ध्यायेम कृष्णं कमलेक्षणं हरिं य आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोकोऽविजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसंकल्पः यः सर्वज्ञः स सर्वं विन्दते यं देवदेवाश्च लोकाश्च सृजा इति नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विदधाति कामानतं दैवतानां परमं च दैवतं पतिं पतीनाम्

भाषाकान्तिप्रकाशिका

विचार है कि यतोवेति या श्रुति में नहीं है और दूसरे जो प्रमाण से ठीक करौ तौ और भी बहुत लक्षण कह सकै हैं अथ शब्द मंगल वाचक है जैसे कहे चार गुण तिन लक्षण से लक्ष्य कियो जो ब्रह्म ताको निर्दोष बतावैं हैं सो अनन्त सुन्दर कल्याण गुण गणों की खान है नित्य विग्रह है सो एक श्लोक से आचार्य देव वर्णन करैं हैं जाके स्वभाव से ही समस्त दोष दूर भये अशेष कल्याण गुणों

की एक राशि व्यूह जाके अंगमें रहै परमब्रह्म श्रेष्ठता को हम ध्यान करें हैं सो कमल नेत्र भक्तके मन हरवेवाले श्रीकृष्ण हैं जो आत्मा अपहत पाप्मा जाको जरा नहीं मृत्यु नहीं शोक नहीं भूक नहीं पिपासा नहीं सत्यकाम सत्यसंकल्प जो सब को ज्ञाता सो सब जानै सो देखतो भयो सो यह देवता देखती भई लोकन कोरचे तो भयो याप्रकार नित्यों को नित्यचैतनों को चेतन–

सिद्धांतरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

परमं परस्तात् विदामदेवं भुवनेशमीड्यं नतस्यकार्यं करणं च विद्यते आपोज्ञावजावीशानीशौ तमीश्वराणां परमं महेश्वरं नतत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते परास्य शक्ति र्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया चेत्याद्याः श्रुतिर्गोहेयगुणान् प्रतिषिध्य अनन्यापेक्षमहिमैश्वर्यस्य सत्यकामस्य प्रमुखान् कल्याणगुणगणान् स्वरूपवदेव प्रमाण: स्वाभाविकान् वदन्ति नचनिर्गुणवाक्यविरोध: प्राकृत हेयगुणविषयत्वात्तेषां निर्गुणं निरंजनं निष्कलं निःक्रियं शान्तं इत्यादीनां किञ्च समस्त हेय गुणरहितानां च निर्गुणवाक्यानां सगुणवाक्यानांच चिरसमवहनताश्मेत्यादि अविरास इत्यनेनैव

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जो एक बहुत को कामदेवै सबदेवतावोंको परम दैवत पतिनको भी पति परमसे पर स्तात सो भुवनको ईशस्तुति करवेयोग्यता को कार्य

कारण नहीं जानो जाय ता देवको हम जानैहैं एक अज्ञानी दूसरो सर्वज्ञ दोनो अजन्मा एक ईश दूसरो अनीश सोईश्वरोंको परम महेश्वर तांके समानही कोई नहीं अधिक कहां सेआवे ताकी नाना प्रकारकी पराशक्तिसुनी जायहैं वे स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रियादिक हैं इत्यादि श्रुति त्यागवे योग्यगुणोंको निषेध करके जो कोईकी अपेक्षा नकरै ऐसी महिमा ईश्वर्य वारे के सत्यसंकल्पादिप्रमुख कल्याण गुण समूहोंको ब्रह्मके स्वरूप भूतस्वाभाविक बतावैं हैं यामेंकोई शंका करैकि ब्रह्ममें तौ निर्गुण वाक्य प्रमाणित हैंगुणकैसे बनै तौ विरोध नहीं प्राकृत त्याज्य गुण कोनिषेधहै वेनिर्गुण वाक्य जैसे निर्गुण

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

गुणान् प्रतिषिध्यसत्यकामः सत्यसंकल्पः इति ब्रह्मणः कल्याणगुणान्विदधतीयं श्रुतिरेव विवेकं करोतीति सगुणनिर्गुण-वाक्ययो विरोधाभावाद्न्यतरस्यन मिथ्यात्वाशंकापि श्रीवाक्ष्माहात्म्य: यथत इत्यादिना ब्रह्मगुणानारभ्यते ये शतमित्यनुक्रमेण क्षेत्रज्ञानं दातिशयमुक्त्वा यतोवाचो निवर्तंते अप्राप्यमनसासह आनंदंब्रह्मणो विद्वानिति श्रुतेः ब्रह्मणः कल्याणगुणानंत्यमत्यादरेण ब्रवीति सोऽश्नुते सर्वान्कामान्सहब्रह्मणा विपश्चितेतिब्रह्मवेदन फलमयवाक्य-यद्वाक्यंपरस्य विपश्चितो ब्रह्मणो गुणानंत्यं वदति विपश्चिता ब्रह्मणा सहसर्वान् कामानश्नुते काम्यंत इति कामाः—

निरंजन निष्कल निष्क्रिया शांत इत्यादि समस्त त्यागवेयोग्य गुण तिन करके रहितनिर्गुण वाक्य व सगुण वाक्यों की विषय अपहत पाप्मा यह आदिमें और अपिपास यह अंतमें त्यागवे योग्य गुणोंको निषेध करके सत्य काम सत्य संकल्प येब्रह्मके कल्याणगुणोंकी बतावन वारी यह श्रुतिही विवेक करैहै सगुण निर्गुण दोनो प्रकारके वाक्यको विरोध नहींहै अन्य रीतिसे भीमिथ्यापने कीशंका नहीं याब्रह्मकेभय सेपवन चलै सूर्य उदयहोय अग्नि जरा वैहै, मृत्यु धावै है इत्यादि ब्रह्मके गुण आरंभ करैं है मनुष्योंके आनन्द से सौगुणो आनन्द क्रम से ऊपर वता वते भये क्षेत्रज्ञको आनन्द अतिशय कह्यो वाणी मन करके सहित जाको नहीं पायके लौट आवै सो ब्रह्मके सम्बन्ध को आनन्द जानवे वारी यहश्रुतिहै ऐसे ब्रह्मके अनंत

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

कल्याणगुणाः ब्रह्मणा सह तद्गुणा स्सर्वा नश्नुते इत्यर्थः ननु यस्या मतं तस्य मतं विज्ञातमविजानता मिति ब्रह्मणो ज्ञानाविषयत्वमुक्तमिति चेन्न ब्रह्मविदाप्नोति परं ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवतीति ज्ञानान्मो-

ओपदेशात् ज्ञानं चोपासनात्मकं उपास्यञ्चब्रह्म सगुणं तथाहि श्रुतयः वेदाहमेतंपुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् तमेव विद्वानमृत इह भवति नान्यः पंथा अय नाय विद्यते सर्वे निमेषा जज्ञिरे—

भाषाकान्तिप्रकाशिका

कल्याणगुण अति आदर से बतावैं हैं सो विपश्चित ब्रह्मके साथ सब काम भोगै है ब्रह्मजानबे के फल बतावन वारे वाक्य परम ब्रह्मके अनंतगुण बतावैं हैं ब्रह्म के साथ सब कामना को प्राप्त होय चाहे जांय तिनको नाम काम हैं सो ब्रह्मके कल्याणगुण हैं सो ब्रह्मके साथ यह ज्ञानी तिन सब कल्याण गुण को प्राप्त होय है तामें शंका है कि जाको मत नहीं ताही को मत है जिनने नहीं जान्यों वेई जानते भये या प्रकार ब्रह्म ज्ञान को विषय नहीं है ऐसे कहैं हैं सो नहीं ब्रह्मको जानन वारो पर को प्राप्त होय है ब्रह्म को जाननवारो ब्रह्म होय है ज्ञान से ही मोक्ष उपदेश करी है सो ज्ञान उपासन आत्मक है और उपास्य सगुणब्रह्म है तामें श्रुति प्रमाण हैं मैं ऐसे महांतपुरुष को जानतो भयो आदित्य वर्णहै तम से परे

ताही को जानके विद्वान अमृत को प्राप्तहोय है कोई और रास्तो मोक्ष का नहीं है सब पुरुष के निमेष से होते भये बिजुली—

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

विद्युतः पुरुषादधि इतन्ये शीकस्य न तस्य महद्यशः एनं विदुरमृतास्ते भवन्तीत्यादावनेन निर्विशेष ब्रह्मज्ञानादेवाविद्यानिवृत्तिरित्यपास्तं यतो वाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्यमनसा सहेति ब्रह्मणोऽनन्तस्यापरिमितगुणस्य वाङ्मनसयोरेतावदिति परिच्छेदायोग्यत्वस्य च श्रवणेनब्रह्मैतावदिति ब्रह्मपरिच्छेद ज्ञानवतां ब्रह्मावेदनमभि त्वेकमपरिच्छिन्नत्वाद्ब्रह्मणः ननुनेह नानास्ति किंचन मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति यत्र हि द्वैतमिव भवति तदितर इतरं पश्यति यत्र त्वस्य सर्वमात्मैवा—

भाषार्थप्रकाशिका ।

अधिष्ठाता पुरुषसे एशीक सो ताको बड़ो यश नहींया प्रकार जो जानते भये मोक्ष होतेभये इत्यादिक याते यह दिखायो कि निर्विशेष ब्रह्म के ज्ञान से अविद्या की निवृति होय है सो दूर कियो और जो वाणी मनकरके सहित नहीं प्राप्तहोके निवृत होयहै यह कह्योहै ताको अभि-प्राय यह है कि ब्रह्म अनंत है अपरमित गुण हैं मन वाणी समुझलेय कि इत्नो ब्रह्म है सो परिछेदनहीं हो सकै ताको सुनके जो ऐसे जानते भये कि ब्रह्मइत्नो परिछेद है उनके सम्बन्ध

में अविज्ञात नाम न जाननो अमत यह कह्यो काहेसे कि ब्रह्म अपरिछिन्न है तामें फिर शंका है कि यहां नानाप्रकार को कुछ नहीं है जोनाना प्रकार को देखै है सो मृत्युते मृत्युको प्राप्त होय है जब द्वैतकी तरह होय तब इतर इतर को देखै है जा समय याको सब आत्मां होतो भयो—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पृष्ठ ८

भूत्तत्केन कंपश्येत् तत्केनकं विजानीया द्वि तिभेदनिषेधोबहु धाद्दश्यते अतः कथं पार्थक्येन ईश्वर तत्वनिरूपणमितिचेत्र अत्रसर्व स्य जगतः ब्रम्हणो जातत्वात् तदन्तर्यामित्वेनतदात्मक त्वेनैकत्वा नुप्रियत्वेनाक नानात्वस्यैव निषेधात् ननुयदाह्येवैतस्मि नुदरमं तरंकुरुते अथतस्य भयंभवतीतिब्रम्हणि नानात्वंपश्यतोभयप्राप्तिश्रु ति सिद्धं ति चेतउच्यते ब्रम्हणिअंतर मथकाशोविच्छेदरूपबतकच महर्षिभि य न्मुहूर्त्तं क्षणं वापि वासुदेवोन चिंत्यते॥साहानिस्तन्महच्छिद्रं साभ्रां तस्साचविक्रियेत्यादि

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तब कौन करके कौनकोदेखैकौन करके कौनको जानै यह भेदको निषेध बहुधादीखै है फिर कैसे ईश्वर तत्व प्रथक निरूपण करबे योग्यहै ताको यह समाधान है कियह सब जगत ब्रह्मते उत्पन्न भयोहै भगवान सबके अन्तर्यामी हैं सब जगत तिनको आत्मक है अंतर्यामीप

नेसेतदात्मकत्वसे ऐक्यता है प्रत्यनीक नाना प्रकारको निषेध है फिरभी शंकाहै कि जासमय याब्रह्म केविषय उदर अंतर करैहै ताको भयहोय हैऐसे ब्रह्ममें नाना प्रकार देखवे वारे को भयकी प्राप्ति श्रुति से सिद्धहै ताको कहैहैं ब्रम्ह में अंतर नाम अवकाश व विच्छेद को है सोई यह ऋषिन ने कह्योहै जोमुहूर्त्त अथवा क्षण वासुदेव को न चिंतवन करै सोई बडीहानि और सोई वडो छिद्र है सोई भ्रांति सोईविक्रियाहै इत्यादि

सिद्धांतरत्नमालिकावृत्ति

नन्वेकमेवाद्वितीयं ब्रह्मेत्य द्वितीय पदंगुणतोपिसद्वितीयतामसहते अतः सर्वशाखा प्रत्ययन्यायेनैव कारण वाक्या नामद्वितीय वस्तु प्रतिपादन परत्व मभ्युपगमनी यं कारण तयोप लक्षितस्याद्वितीयस्यब्रम्हणो लक्षण मिदमुच्यते सत्यज्ञानमनंतंब्रम्हेतिअतोलिलक्षयिषितंब्रम्ह निर्गुण मेवेतिचेन्न जगत् कारणस्यब्रम्हणःस्वव्यतिरिक्ताधिष्ठानांतर निवारणे नाद्वितीयपदस्यतदैक्षत बहुस्यांप्रजायेयेतितत्तेजोसृजतेत्यादि विचित्र शक्तियोग प्रतिपादन परत्वात् सर्व शाखा प्रत्यय न्यायश्चात्र भवतो विपरीतफलः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

और भी वादी कीशंकाहैकिएकही निश्चय अद्वितीय ब्रम्हहै यह श्रुति कहेहै यास्थल में

अद्वितीय पदगुणाते भी द्वितीयता कोनहीसहे तासे एकशाखासे सब शाखा की पहिचानहो जाय या न्याय करके कारणके वाक्य अद्वितीय वस्तु को प्रति पादन करैं हैं ऐसे मानलेनो कारणता करके उपलक्षित जो अद्वितीयब्रह्मताके यहलक्षणहैं सत्यंज्ञान अनंत ब्रम्हेति याते जो ब्रम्ह को लक्ष्य करावै हैं सो ब्रम्ह निर्गुणहै ऐसे जो बादी कहै ताको कहे हैं सो नहीं जगतकोकारण जो ब्रम्हताके विना दूसरोअधिष्ठान नहीहै ताकेनिवारणमेंअद्वितीय पददियो ता समानकोई दूसरो नहीहैं सोदेख तो भयो बहुत होजाँव उत्पत्ति के अर्थ सो तेज रचतो भयो इत्यादि विचित्र शक्तियोग प्रति पादनके अर्थ अद्वितीय पद दियो

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

सर्वं शाखा प्रत्यय कारणार्थ च यिनं। सर्वज्ञ त्वादीनां गुणानां अन्यो-
प स हार हेतुत्वात् अतः कारण वाक्यस्था वाद्विसत्यं ज्ञानमनं
तब्रम्हेत्य नेनसगुण मेवप्रतिपाद्यते किंचसत्यं ज्ञानमनंतंब्रम्हे त्यत्र
सामा नाधि करण्यानेक विशेषण विशिष्टं कार्थं विधान च्युत्पन्ना
विनति विशेष वस्तुसिद्धिः भिन्नप्रवृत्ति निमित्तानांशब्दा नामेकस्मिन्न
र्थेवृत्तिः सामाना धिकरण्यं इतिशाब्दिकाः तत्र सत्य ज्ञानादिपदानु
ख्यार्थेषु येषक विनर्थे पदानां वृत्ती निमित्तभेदो वस्याश्रयणं यद्

निखनत्वम इत्यादि वाक्ये ष्वपि सामाना धिकरण्यन निर्विशेष वस्त्वै क्यपरंनत्वं पदयोः सविशेषाभि धायित्वात्

भाषा कांति प्रकाशिका

तुम्हारी शाखा प्रत्यय न्याय यो स्थलमें विपरीत फलको दाता भयो सवशाखा के विषय कारण मेंप्राप्त भये जोसर्वज्ञत्वादि गुण तिनको उप संहार भयो याते कारणके वाक्य स्वभावते भी सत्यज्ञान अनंत ब्रह्म यहहै याकरके सगुणको ही प्रतिपादन करैं हैंऔर सत्यज्ञान अनंतब्रम्ह में सामानाधिकरण्य अनेक विशेषण करके विशिष्ट जो एकार्थता को विधान है ताकी व्युत्पत्ति करके भी निर्विशेष वस्तु सिद्ध नहीं होय शब्दके जानन वारे न्यारी न्यारी प्रवृत्ति केनिमित्त वारे शब्दोंको एक अर्थमें लगायवेको सामानाधिकरण्य कहैहैं तहां सत्य ज्ञानादिपद जोहै तिनमुख्य अर्थ और गुणों करकेएकअर्थ मेंजो उन पदों कोलगायो जायतौताके निमित्त अवश्य भेदको आश्रय लेनो होयगो। तत्वमसि (सोतूहै) इत्यादि

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

तत्पदमनन्यगोचरमनंतविशेषणविशिष्टं जगत्कारणं ब्रह्म प्रतिपादयति त्वं पदं च संसारित्वविशिष्टं जीवात्मानं तत्त्वं पदस्य निर्विशेषस्वरूपपरत्वे स्वार्थः परित्यक्तः स्यात् एवं च सामानाधिकरण्यमुख्ययोस्तत्त्वमिति द्वयोरपि पदयोर्मुख्यार्थपरित्यागे न लक्षणा च समाश्रयणीया सर्वेष्वपि वेदांतवाक्येषु समानाधिकरणा निर्विशेषु तत्तद्विशेषणविशिष्टस्यैव ब्रह्मणोऽभिधानात् यथानीलोत्पलमानयेत्युक्ते नीलमादिविशिष्टमेवानीयते तथेति ज्ञेयं किंच सर्वेषां प्रमाणानां सविशेषवस्तु विषयत्वान्निर्विशेषे प्रमाणाभावः तत्स्वानुभव सिद्धं तदिति वाच्यं अनुभवानामपि इदमहमदर्शमितिके नचितद्विशेषण

भाषाकांतिप्रकाशिका

वाक्य के विषयमें भी जो सामानाधिकरण्य तानिर्विशेष वस्तु में एक्य को नही बतावै हैं तत और त्वं ये दोनो पद सविशेषकोविधान करैहैं तामें ततजोपद सोअन्यको गोचरनहीअनंतादि विशेषण वारे जगतके कारण ब्रम्ह कोप्रतिपादन करैहैं त्वं जोतूसो संसारी जीवात्मा को बतावैहै तत्त्वं इन दोनो पदोंको जोनिर्विशेष स्वरूप में लगावोतौ स्वार्थ हीछूटजाय याप्रकार इन दोनों पदको सामानाधिकरण जोकरोगे तौ मुख्य अर्थ को छोड़के लक्षणा को आश्रय लेनो पड़ेगो वेदांत वाक्यके विषय तिन तिन विशेषण विशिष्ट ब्रम्ह मेंही सामानाधिककरण्य

होयहै जैसे कोईने कह्योकि नीलकमल लावो तौ नीलेरंग कोकमल लावेहैं तैसेयाप्रकरणमें जाननो और सब प्रमाण सविशेष वस्तु कोही प्रतिपादन करै हैं

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

विषयत्वात् न च तत्र शब्दः प्रमाणं शब्दस्यपद वाक्य रूपेण प्रवृत्या निर्विशेषे भिधानस्य सामर्थ्या भावात् प्रकृति प्रत्यय योगेन-हिपदत्वं पदसमुदायो वाक्यं तस्यानेक पदार्थ संसर्ग विशेषाभिधा-यित्वेननिर्विशेष वस्तु प्रतिपादना सामर्थ्यात् तथाहिनहि निर्धर्मके-वस्तु निवाक्यस्य प्रामाण्यं संभवति वाक्यंहिपदार्थ ज्ञानद्वारा बोध-कं पदार्थ ज्ञानं च गृहीत संगति केभ्यः पदेभ्यो भु(?)यभवति संगति ग्रहस्च वाक्यार्थ ज्ञानात्पूर्वंमेव प्रम.णां तरोपस्थिति वृद्ध व्यवहारादि ना भवति न चात्र निर्धर्मके ब्रह्मणि प्रमाणां तरं प्रवर्तते

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जो कहौ कि मत होय निर्विशेष में प्रमाण अपने अनुभव ते सिद्धि है तौ अनुभवों को भी जैसे यह मैं देख तो भयो तौ कोई विशेषण वारो ही विषय है ता निर्विशेष में शब्द भी प्रमाण नहीं है शब्द की वाक्य रूप से प्रवृत्ति होय है तासे निर्विशेष के अभिधान में शब्द की सामर्थ्य नहीं है प्रकृति प्रत्यय के योग करके पद कह्यो जाय है पद समूहको वाक्य कहैं सो वाक्य पदार्थ को संसर्ग विशेष जामें ताको

विधान करै हैं निर्विशेष वस्तु को नहीं विधानकरसकै तासे निर्धर्मक वस्तु के विषय वाक्य नहीं प्रमाण होसकै वाक्य पदार्थ के ज्ञान द्वारा बोध करावै है पदार्थ को ज्ञान गृहण करी जो संगति ताके पदों की वृत्ति करके होय है संगति गृहण करनी वाक्य अर्थ के ज्ञान से पहिले दूसरे प्रमाण अर्थात उपस्थित भये जो वृद्धों के व्यवहारादि तिन कर के होय है या निर्धर्मक ब्रह्म में प्रमाण अन्तर की सामर्थ्य नहीं तैसेही

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

तथाहि नतावत्प्रत्यक्षं तत्र प्रमाणं तस्य निर्विकल्प सविकल्प भेदभिन्नत्वात् तत्र निर्विकल्पकं नाम केनचिद्विशेषेण वियुक्तस्य ग्रहणं न सर्व विशेष रहितस्य सविकल्पकं तु सविशेष विषयमेवज्ञात्यादि अनेक पदार्थ विशिष्ट विषयत्वात् अत एक जातीय द्रव्येषु प्रथम पिण्ड ग्रहणं निर्विकल्पकं द्वितीयादि पिण्ड ग्रहणं सविकल्पकमित्युच्यते नाप्यनुमानं तस्य प्रत्यक्षादि दृष्ट संबंध विशिष्ट विषयत्वात् नेन्द्रियाणि चानुमानं इतिश्रुतेश्च भावरूपत्वेना भावा गोचरत्वात् यु शाश्वत यादि वच्छास्त्रा देवतदुपलब्धि नेतरेति चेन्न । वैषम्याद्युदाहरणीयाद्योनां शब्द शक्य तावच्छेदकधर्मवत्वाच्चित्त्व सर्व धर्मातीतेनेन पद वृत्य विषय स्यात्

भाषाकौमुदीप्रकाशिका ।

न तामें प्रत्यक्ष प्रमाण हो सकै है प्रत्यक्ष प्रमाण में निर्विकल्प सविकल्प दो भेद न्यारे२ हैं तामें निर्विकल्प ताको कहैं कि कोई एक

विशेषण से वियुक्त होय सब विशेषण से रहित न होय और सविकल्प तौ सविशेष को कहैं अर्थात जाति आदिक अनेक पदार्थ से विशिष्ट होय याते एक जाति के द्रव्य के विषय पहले पिण्ड-मात्र ग्रहण करनो निर्विकल्प है दूसरे जाति आदि सहित पिन्ड ग्रहण करनो ताको सविकल्पक हैं ता निर्धर्मक ब्रह्म में अनुमान भी नहीं बन सकै अनुमान तौ प्रत्यक्षादि में जो देख्यो सुन्यो है ताके सम्बन्ध विशिष्ट को विषय करै है वा ब्रह्म में इन्द्री और अनुमान नहीं पहुँचै यह श्रुति भी है तहां वादी कहै हैं कि भाव रूप से अभाव अगोचर भी ले लैनो जैसे यूप आवहलन करवे योग्य है अर्थात यूप को देव-ता सूर्य्य आवाहन करवे योग्यहै तहां यूप से

सिद्धान्तवाक्मति पूर्वार्द्ध

तथाहि पदवृत्तिनाद्वेधा मुख्या अमुख्याचतत्रमुख्यासामान्य विशिष्टव्यक्ति विषयास्माच्छब्दादय मर्थो बोधव्य इतीश्वरेच्छारूपः संकेत इतितार्किकाः सामान्यमात्रविषयोयथापि कजपदस्या पयमशक्तेः कुमुदपद्मयोरविशिष्टत्वेपि भूरिप्रयोग पद्मास्यपद्मे नियमोपपत्तेरि-त्याहुः अमुख्यापिद्विविधालक्षणा गौणी च तत्रशक्य संबंधेलक्षणा यथागंगायां घोष इत्यत्रप्रवाहशक्तस्य गंगापदस्यतत्संबंधेनतीरे वृत्तिर्लक्षणा साक्षाच्छक्त्यवृत्तिर्योपि परंपरयापदवृत्तित्वमिति नविरोधः अत्रचोह श्यान्वयानुपपत्तिर्वा—

आदित्य को ग्रहण है तैसे ही शास्त्र से निर्विशेष की उपस्थिति है ताको कहैं हैं सो नहीं विषम है यूपाहवनीयादि शब्दकी वाच्यता अवच्छेदक है आदित्य धर्मवारो है यह निर्विशेष ब्रह्म सब धर्म से अतीत है तामें पद की वृत्ति नहीं पहुंचै पदकी वृत्ति दो प्रकार की मुख्या जघन्या तामें मुख्या ताको कहैं कि सामान्य व्यक्तिमेंया शब्द से यह अर्थ जानवे योग्य है ईश्वरकी इच्छारूप संकेत यह तार्किक कहैं सामान्य मात्र योग है जैसे पंकज पदकी अवयव शक्ति कुमुद पद्म इन दोनों में है कोई में विशेषता नहीं है पर बहुत प्रयोग पंकज शब्द को पद्म में ही है यह नियम है जघन्या भी दो प्रकार की लक्षणा गौणी तामें शक्य के संबंध वारी लक्षणायथा गंगामेंघोष यहां प्रवाह जाको शक्तऐसे गंगापदकी ताको संबंधी किनारो तामें वृत्तिभई अर्थात वीच प्रवाह में गांव कैसे होय-

सिद्धान्त रत्नावली

अंयथावामंचाकोशंतीत्यत्रमंचशक्तस्य मंचपदस्य मंचसंबन्धे पुरुषेपुवृत्तिः शक्यवृत्तिलक्ष्यमाण गुण संबंधोगौणीयथा सिंहो-माणवक इत्यत्रसिंह पदस्य सिंहवृत्ति शौर्यादिगुणलक्षणयातद्वति-मानवकेवृत्तिरिति अतएव लक्षणा गौणीतोबलवती गौण्या वृत्ति द्वयात्मकत्वात्तदुक्तं अभिधे याविनाभूत प्रतीतिर्लक्षणोच्यते ॥ लक्ष्यमाणगुणैर्योगादुवृत्ते रिष्टातुगौणतेति व्यंजनाख्या परावृत्तिरित्य लंकारिकाः तेतुगौणीलक्षणा मध्यंतर्भाव्य मुख्यालक्षणाव्यंजना चेतित्रैविध्यमाचक्षते व्यंजनाचय त्रगतोस्तमर्क इति।

भाषा कांति प्रकाशिका

तासे संबंध को जो कनारो तामें गांव है याकी सक्षातशक्य वृति होवे पर भी परंपरा करके पदकोवृति पनो भयो कुछ विरोध नही यास्थल में उद्देश जो प्रवाह ताकी अन्वय की उपपत्ति नहीं है यह बीज है अथवा जैसे मंच चिल्लाय हैं या स्थल में मंच शक्तिकी मंच पदकी मंच पर बैठे जो पुरुष तिन में वृति है अर्थात मंच पर बैठे जो पुरुष वे चिल्लाय रहे हैं शक्तकी वृतिव देखे गये जो गुण तिन के संबंधते गौणी बोली जाय है जैसे यह मनुष्य सिंह है यास्थलमें सिंह पदसे सिंहकी वृति शौर्यादि गुण वा मनुष्य में देखके तामें वृत्तिकरी याते लक्षणा गौणीते वलवान है यामें

दो वृत्ति हैं सोई कह्यो है जो विधान करनो है ताके नहीं विना भूत की प्रतीति लक्षणा उच्चारण करै है लक्ष्यमाण गुणों के योगते गौणी वृत्ति वाञ्छित है एक व्यंजना नामको और वृत्ति अलंकार वारे कहैं हैं–

सिद्धांतरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

वाक्य प्रयोगानंतरदृश्यमाना इतिपण्यान्य प्रसार्य्यतामिति संध्योपास्यतामित्यादि बहूनां बहुविधार्थ प्रत्ययो भवति तत्र च न शक्ति नवा लक्षणा किंतु शब्दस्यैवान्वय व्यतिरेकाभ्यामपरा व्यञ्जनाख्या वृत्तिराश्रयणी येति वदंति यत्तु यौगिको योगरूढश्च शब्दः स्यादौपचारिकः मुख्योलाक्षणिको गौणः शब्दः षोढानिगद्यते इतिवैयाकरणैः षड्विध मुक्तं तन्मुख्य जघन्य योरवांतर भेदमादायपयोजनीयं तथा हि मुख्यो रूढः यौगिको योगरूढ इत्येकं त्रिकं मुख्यायां लाक्षणिकः औपचारिको गौण इत्यपरं त्रिकं जघन्यायां

भाषाकान्तिप्रकाशिक

वेता को गौणी लक्षणा के मध्य में अंतर्भावना करके मुख्या लक्षणा व्यञ्जना यह तीन प्रकार को वर्णन करैं हैं तामें व्यञ्जना कहै हैं कोई ने यह वचन कह्यो कि सूर्य्य अस्त भयो बटोही दूर मत जाय बनिया दुकान बढ़ावैं, ब्राह्मण संध्या उपासना करैं, बहुतों को बहुत प्रकार के अर्थ की प्रतीति होय है तामें शक्ति

नहीं लक्षणा भी नहीं किंतु शब्द को ही अन्वयव्यतिरेक करके अपराव्यञ्जना नामकी वृत्ति आश्रय करने योग्य है ऐसे कहे हैं और छय प्रकार को शब्द यौगिक, योगरूढ, औपचारिक मुख्या लाक्षिणिक, गौण, व्यैयाकरणी कहे हैं सो मुख्य जघन्या इन दोनों के अवांतर भेद में योजना करने योग्य हैं तैसे ही मुख्य रूढ, यौगिक, योगरूढ यह एक त्रिगड्डा मुख्या के विषय लाक्षिणिक, औपचारिक, गौण यह अपर तीन जघन्या के विषय हैं ।

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

लक्षणा पिभि त्रिधा अजहत्स्वार्था जहदजहत्स्वार्था जहत्स्वार्था चेति तत्राद्या वाच्या अर्थापरित्यागे नैयान्यत्रोपलंभाना शक्तितु तथा सर्वं जघन्यातो यत यतो यथा काकेभ्यो दधिरक्षतामिति लोके उपघातक रयेन काकपदस्य काकतदि तरेषु वृत्तिः यथाचाजहलिंगद आलोच्यता अधिटश व्यक्य मंत्री पथेयेष्टका सुवृत्तिः अग्निमंत्रा बाहुल्ये नेति यथा वाशोषोभावत्तो स्वत्राशोण गमन लक्षणस्य वाक्यर्थस्य विरुद्ध त्वा स्वदपरि त्यागेन तत्राश्रया स्वाहितु वृत्तिः केचित्तु शोणो धावती त्यादिनो वाहर णंतावाक्य संबंधेन तत्रापि मुख्य त्वो पप त्तेः अतएव चतुष्ट यीशब्दानांवृत्तिरिति महाभष्यकारै रुक्तं चतुष्टय बजाति

भाषाकान्तिप्रकाशिका

लक्षणा भी तीन प्रकार की है अजहत्स्वार्था (स्वार्थ नहीं छोड्यो) जहदजहत्स्वार्था

कुछ स्वार्थ छोड्यो कुछ नहीं छोड्यो जहत्स्वार्था (सब स्वार्थ छोड़ दियो) तामें पहले अजहत्स्वार्था वाच्य को अर्थ नहीं परित्यागकर के अन्यत्रभी तुल्य शक्तिसे वर्तमान जैसे कौवावों ते दही की रक्षा करो या प्रकार लोक में नष्ट करवे वाले काक पद की काक से इतर बिल्ली आदि में भी वृत्ति भई अथवा जैसे अग्नि को धारण करै या अग्नि शब्द को मंत्र करके युक्त जो ईंटैं तिनके विषय वृत्ति है अग्नि के मंत्र बाहुल्य करके जैसे शोणा नामलाल धावैंहै शोणा जो लाल रंग ताको दौड़ना नहीं बनै तासे गमन लक्षण जो वाक्य को अर्थ सो विरुद्ध है ताको नहीं त्याग करके ताके आश्रय अश्वादिके विषय वृत्ति भई कोई शोणा धावै है इत्यादि करके उदाहरण तादात्म्य संबंध में बतावैं हैं

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

गुणक्रिया द्रव्य स्वरूपं तत्र गौरित्या दीजातिः शुक्लो नीलइत्या दौगुणः चलइत्यादौक्रियाडित्थइत्यादौ द्रव्य स्वरूपमेव लक्षणांगीकारेचतद्विरुध्येते त्याहुः जहदजहत्स्वार्था शक्यैक देश परित्यागे न शक्यैक देशे वृत्तिरियमपि जहल्लक्षणातो गौणीतश्चबलवती वाक्यैक देशान्वया यथा सोयं देवदत्त इत्यादौ अत्रहितरकालवैशिष्ट्ये तत्काल

वैशिष्ट्ययोर्युगपदन्वये विरोधात्तदुपलक्षित देवदत्त स्वरूप मेव शक्यैकदेश लक्षणया पदाभ्यां मुख्याप्यते इयमेव भागत्यागलक्षणेत्युच्यते
भाषाकांतिप्रकाशिका ।

तामें भी मुख्यपने की प्राप्ति है याही ते चार शब्दों की वृत्ति महाभाष्य कारों ने कही है जाति, गुण, क्रिया, द्रव्य को स्वरूप तामें गौ इत्यादि विषय जाति शुक्ल नील इत्यादि में गुण चलनो यामें क्रियाडित्थ इत्यादि में द्रव्य स्वरूप है या लक्षणा के अंगीकार करवे से विरोध होय है यह कहते भये जहदजत्स्वार्था यामें शक्य को एक देश परित्याग करके शक्य के एक देश में वृत्ति है लक्षणा और गौणी ते यह बलवान है वाक्य के एक देश में या को अन्वय है जैसे सोई यह देवदत्त है या प्रकरण में पहिले काल में देख्यो देवदत्त नवीन योवन पुष्टशरीरादि वे विशेषण त्याग देने या कालकी वृद्ध अवस्था दुर्बलता सो भी त्याग देनो दोनों विशेषण एक काल में अन्वय करवे में विरोध पड़ै है देवदत्त को पिंड मात्र लेनो शक्य के एक देशमें लक्षणा करके दोनों पद स्थापन होंय हैं.

यह भागत्याग लक्षणा कही जाय है जहत्स्वार्था कोतो वाच्यअर्थ को सब अंश त्यागके अन्यत्र में वृत्ति है जैसे गंगा में गांव

सिद्धान्तवाक्यावलि पूर्वार्द्ध

जहत्स्वार्थातु वाच्यार्थस्य सर्वांशत्यागेनान्यत्र वृत्तिः यथागंगायां घोष इत्यादौ इयंचगौणातो बलवती सर्वलक्षणा तौदुर्बलेतरवृत्ति संभवेनाद्रियते सर्वमुख्यार्थबाधात् इति शब्द वृत्तयःनिरूपिताःआसामेकतरापि नाद्वितीये ब्रह्मणिभवितुमर्हतितत्रा दौरूढेरसंभवउच्यतेशक्तिग्रहस्तु कथचित्प्रवृत्तिलिंगानुमानात यथा घटमानयेति वाक्य श्रवणसमनंतरं कश्चित्कंबुग्रीवादिमंतमर्थ मानयतितस्या नयनक्रिया प्रत्यक्षत उपलभ्य तत्कारण त्वेनतस्य वृत्तिमनुमानेनतस्याः वृत्तेः स्वकृतिसिद्धत्वेन प्रवर्त्तक ज्ञानजन्यत्व मनु मिनोतिनतज्ज्ञान शब्दान्वय व्यतिरेकानु विधायित्वात्कारणांतरस्य चानुपलब्धेस्तस्यश

भाषाकान्तिप्रकाशिका

यह गौणीसे बलवती सब लक्षणासे दुर्बल हैं याकी वृत्ति इतर में जाय है तासे नहीं आदर करी जाय है सब मुख्य अर्थको बाधा करै है ये शब्द की वृत्तिनिरूपण करीं इन में से एक भी अद्वितीय ब्रह्ममें नहीं घटै, तामें पहिले रूढि को असम्भव होनो कहैं हैं शक्तिको ग्रहण कहूं कहूं प्रवृत्ति को चिन्ह ताके अनुमानते होय है जैसे कही कि घट लावो यह बात सुनके कोई कंबुग्रीवादि वारो एक अर्थ लावै है कोई दूसरो घटलाय-

वेकी क्रिया प्रत्यक्ष देखके वा कारणता की कृति अनुमान करै है ताकी कृति से अपनी कृति के दर्शन करकेज्ञान उत्पन्न होनो अनुमान करै है सो ज्ञान शब्द के अन्वयव्यतिरेक से विधान भयो और कुछ कारण तो है ही नहीं तौ घटकी लायवे की जो कर्तव्यता—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

इत्थमेव घटकर्मानयन कर्तव्यता प्रतिपादने सामर्थ्यंकल्पयति तत्रावापोद्वापाभ्यां प्रत्येक सामर्थ्यं क्रमेण निश्चिनोति इति शक्तिग्रह-क्रमः एवं दिष्ट्याभव तैभद्रं पुत्रस्तेजातः इत्यादि वाक्य श्रवणा-नन्तरं श्रोतुर्मुखविकासादिलिंगेन हर्षमनुमायतस्यचकारणां तरानु-पस्थितेः पुत्रजन्मनश्चमानां तरेण ज्ञातत्वात्तज्जन्यतां निश्चित्यतज्ज्ञा नं अन्वय व्यतिरेकाभ्यामिदंज्ञानजनकमितिकल्पयित्वा क्रमेणपूर्व-वत् प्रतिपदशक्तिग्रहतद्वन्यत्रकमप्रज्ञानस्य प्रवृत्त्यादिजनकत्वा भावा न्नानांतरगो चरत्वाच्चनतत्रशक्तिग्रहावसरः क्वचिदुपमानाच्छक्ति ग्रहः यथागौस्तद्वद्गवय ।

भाषार्थप्रकाशिका

ताके प्रतिपादन में शब्द की सामर्थ्य कल्पना करै है तामें लेजायवे लेआयवे से एक एक में क्रम करके सामर्थ्य निश्चय करै है या प्रकार शक्तिग्रहकी क्रम है याही प्रकार कोई ने कह्यो मंगल होय कल्यान बढै तुम्हारे पुत्र उत्पन्न भयो इत्यादि वाक्य सुने पीछे

सुनवे वारे को मुख विकाश भयो ताते ताको हर्ष अनुमान कियो, वा हर्ष को कारण दूसरो तौ हैही नहीं पुत्र को जन्म शब्द के सिवाय और प्रमाण से तौ जान्यो नहीं ताको जन्म निश्चय करके ता ज्ञानके प्रति अन्वय व्यतिरेक ते यह शब्द ही ज्ञान उत्पन्न करवे वालो है ऐसे कल्पना करके क्रम से पहिलेकी तरह शक्तिग्रह होय है तारीति से या ब्रह्मज्ञान में प्रवृत्यादि को उत्पन्न होनो नहीं बनै प्रमाणांतर को गोचर नहींतौ शक्तिग्रह को अवसर कहां है–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

इति वाक्यं श्रुतवतो नागरिकस्य कदाचिदरण्य गमना नंतर गो सदृश व्यक्त्यंतर दर्शने पूर्वश्रुत वाक्यार्थ स्मरणेन गो सादृश्याद्वय पदनिश्चयवत्कचिद्वै धर्म्यादप्यधिकार भवति दीर्घशृंगं कठोर कंटका शिनमित्यादिविशिष्ट वाक्य श्रुत वतस्तादृश व्यक्ति दर्शने पूर्ववत् करभपदवाच्य त्वनिश्चयः तदुभयं ब्रह्मणिन संभवति साधर्म्य वैधर्म्य शून्य त्वात्प्रमाणांतरा योगाच्च कश्चिदास वाक्यात् यथार्थकत्वी नादि ज्ञान यत् पदवाच्य इति तद्व्युत्पत्ति नर्त भवति उद्देश्यांशोप स्थापक पदा भावात् कचित्प्रसिद्धार्थ पद सामा नाधिकरण्यात् यथेह सह कार तरौ पिकः कौति निकटस्थ प्रत्यक्ष प्रसिद्ध पिकपद वा च्यत्व निश्चयः

भाषा कांति प्रकाशिका

कहूं उपमानते भी शक्तिग्रह है जैसे गौ

के समान गवय यह वाक्य सुनवे वारो नगर वासी कोई समय बनमें गयो तहां गौ समान दूसरी व्यक्ति देखी जाको दरशन करके पहिलो सुन्यो जो वाक्य अर्थनाको स्मरण करके गो समान गवय यह पद निश्चय करै है कहूं वैधर्म्य सो भी शक्तिग्रह होय है जैसे ऊंट को धिक्कार है लंबी नार वारो कठोर कंटक खायवे वारो इत्यादि निंदा वाक्य कोईने सुने और फिर तैसी व्यक्ति देखी तौ पहिले की तरह ऊंट पद वाच्य वारो निश्चय होय है सो दोनों ब्रह्म में सम्भव नहीं न कोई के साधर्म्य है न वैधर्म्य है न प्रमाण अंतर यामें योग पावै है कबहूं आप्त शब्द से जैसे कंबुग्रीवादि मानघट पद वाच्य सो भी वहांसम्भव नहीं काहेसे कि उद्देश अंशको स्थापन करवेवारो पद नहीं है कहूं प्रसिद्ध अर्थ के पद के समानाधिकरणयते जैसे आम्रके वृक्षपर कोयल बोल रही है बोलवेवारी प्रत्यक्ष प्रसिद्ध—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पद्धति

यथा वज्रहस्तः सहस्राक्षः पुरन्दर इत्यादौ वज्रहस्ताद्याकृति विशिष्टपुरंदरादि पदवाच्यत्वाध्यत्व सायस्ताद्रूपिनेह सम्भवन्ति

निर्विकल्पेनब्रह्मण्यर्वस्यापि पदस्या प्रसिद्धार्थत्वात् क्वचिद्वाक्यशे षाद्यथा यववराहादि शब्दानां पदान्यथा औषधयोम्लायन्त्यथैता मोद-मानास्तिष्ठन्तिवराहं मनुधावन्तीत्यादिवाक्यशेषात्कंगुकंकादि व्यावृत्त्यावाच्यार्थ विशेष निश्चयः यथावास्वर्गयूपाहवनीयादि शब्दा-नांयन्नदुःखेनसंभिन्नमित्यादि वाक्यशेषादलौकिकार्थ विशेष निर्णयः तद्वदपि ब्रह्मणिनसंभवतिवाक्यशेषस्यापि ब्रह्मविषयत्वासंभवात् नचब्रह्मविषयप्रातिपदमिति परमपुरुषार्थ साधनं—

भाषाकान्तिप्रकाशिका

तामें पिकपद निश्चय भयो जैसे वज्र हाथ में जाके ऐसो हजार नेत्र वारो पुरंदर (इन्द्र) इत्यादि में वज्र हाथमें हजार नेत्र जाके ऐसी सूरत बारे में पुरंदर पद निश्चय भयो तैसे भी ब्रह्म में सम्भव नहीं निर्विकल्प ताब्रह्म में सब पदों का अर्थ प्रसिद्ध नहीं है कहूं वाक्य शेषसे भी जैसे यववराहादि शब्दों के पद अन्य औषधि कुम्हलाय गईं ये हरी भरी मोदमानतिष्टैं हैं वाराह के पीछे दौडैं हैं इत्यादि वाक्य शेषतेकंगुकंकादि की व्यावृति करके वाच्य अर्थको विशेष निश्चय होय हैं अर्थात अन्याकंगु वाराह के पीछे कंक जैसे स्वर्ग के यूप आहवन करवे योग्य है जो दुख करके न्यारो नहीं इत्यादि वाक्य शेवते अलौ—

किक अर्थ निर्णय होय है तैसे भी ब्रह्म में सम्भव नही वाक्य शेष को भी ब्रह्म विषय नहीं होसकै जो वादी ऐसे कहैं कि ब्रह्म को जाननवारो मोक्षको प्राप्त होय है परम पुर्षार्थको साधन ब्रह्म ज्ञान है–

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

ब्रह्मज्ञान मित्यभिहिते किंतद्ब्रह्मेत्या कांक्षायां सत्यं ज्ञान मनंतंब्रह्म इति ब्रह्म लक्षणमुपदिशति तथाचसत्यादि पदोपस्थापिता द्वितीये वस्तुन्येव ब्रह्मपद शक्तिग्रहोभविष्यति इतिवाच्यंसत्यादिपदेभ्योपिनिर्विकल्पोपस्थिते रसम्भवात्तत्रापि वाक्य शेषांतरानुधावनेन व्यवस्थाशक्येनसमं सम्बंधाग्रहान्न लक्षणापि नहि लक्षणायैवलक्ष्यस्वरूपोपस्थितिः तस्याः स्मारकत्वात् स्मरणस्य चपूर्वंज्ञानजन्यत्वनियमात् किंचनाजहत्स्वार्थाविशिष्टोपस्थितिः प्रसंगात् तत्वमस्यादिवाक्ये--

भाषाकान्ति प्रकाशिका

याप्रकार के कहवे पर पूछी जाय कि सो ब्रह्म कौन है तब सत्य ज्ञान अनंत यह ब्रह्म के लक्षण उपदेश करै हैं तब सत्यादि पद से उपस्थापित जो अद्वितीयवस्तु तामें ब्रह्म पद की शक्तिग्रह होयगी ताको कहैं कि ऐसो मतकहो सत्यादिपदों करके निर्विकल्प की उपस्थिति सम्भव नही है तहां भी वाक्य शेष के अंतर के अनुधावन में व्यवस्था है

शक्यके साथ संबंध नहोवे से लक्षणाभी नहींहोसकै लक्षणामें लक्ष्यस्वरूप की उपस्थापति नहीं बनै लक्षणा स्मरणकरावै है स्मरण पूर्व ज्ञानसे जन्मै यह नियमहै अजहत्स्वार्थासे उपस्थिति कोप्रसंग नहींबनै तत्वमस्यादि के वाक्य विरोध से अन्वय की प्राप्ति नहीं होय

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

विरोधेनानन्वयापत्तेः नापि जहदजहत्स्वार्था तस्याः शक्य संबंधवति प्रमाणान्तरोपस्थिते देवदत्ते संभवः प्रमाणान्तरानुपस्थिते सर्व संबंधशून्येऽनवकाशा एतएवनजहत्स्वार्थापि गङ्गायां कारेवा गंगापदलक्ष्यस्य तीरस्या गंगात्वपरत्वादि पदलक्ष्यस्या सत्यत्वादिः स्याद्वा च्यत्वस्य सर्वात्मना परित्यागात् ना विरोधो तत्र संभवति सर्वं पादूष्य शून्यत्वात्मायो पादनते प्रश्नादिगुणयोगे न गौण्यत्वीकारः नापि व्यंजना वृत्ति स्तत्र संभवति तस्यानिः संबंधे अप्रसगात् तस्मात्रि विशेषे वृत्तिमात्राऽयोगात्रनिर्विशेषे पद विषयो वाक्य विषयो चोप नियम्मानं ममतुमते शक्ता पाकुत द्विविध भेद सिद्धान्ति द्विधेपदि तमेवनिर्वि शेषमितिनास्त्यत्रलितपुर्न्दी

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जहदजहत्स्वार्था भी नहीं बनै सो शक्य के संबंध धारी है प्रमाण अंतर से उपस्थित जो देवदत्त तामें संभव है प्रमाण अंतर से जाकी उपस्थिति नहीं सब संबंध से शून्य तामें या लक्षणा को अवकाश कहां है जहत्स्वार्था भी नहीं बनै ताके अंगीकार करवे से गंगा पद को

लक्ष्य जो तीर ताको जैसे गंगापनों नहीं है तैसे सत्यादि पद को लक्ष्य जो ब्रह्म ताको असत्य-त्वादि होयगो काहे से कि वाच्य अर्थ को सर्वात्मा त्याग है गौणी भी संभव नहीं है सब साद्दृश्य से शून्य है माया वाद के मत में प्रभ्वादि गुण को योग ब्रह्म में है नहीं, ता करके गौणी स्वीकार नहीं व्यञ्जना वृत्ति भी तामे नहीं संभव है विना संबंध के सो भी नहीं पसरै तासे निर्विशेष में वृत्ति मात्र की योग्यता नही निर्विशेष में पद की विधि करके वाक्यकी विधि-करके उपनिषद प्रमाण नहीं मेरे मत में तो प्राकृत-अप्राकृत दो प्रकार के भेद से भिन्न

भाषाकान्तिप्रकाशिक

प्रकृतिमनुसराम: विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि इत्यादि निगतेर्विष्णोरअधिमानोन जातोदेवमहिम्नः परमन्तमाये ति सहस्रधामहिमानः सहस्र इत्यादि श्रुतेरनन्तरेभ्यश्च ब्रह्मणोऽनन्तकल्याण गुणैकराशित्वं सिद्धं व्यूहाङ्गिनमिति वासुदेव प्रद्युम्नानिरुद्धसंकर्षण रूपसमुदायो व्यूहः तस्याङ्गिनं वर्यं ध्यायेमहत्यर्थः यथोक्तं श्रीभागवते वासुदेवः संकर्षणः प्रद्युम्नः पुरुषः स्वयं अनिरुद्ध इति ब्रह्मनामूर्त्तिर्व्यूहोऽभिधीयते सविश्वस्तैजसप्राज्ञ तुरीयइति वृत्तिभिः अर्थेन्द्रियाशयज्ञानैर्भगवान् परिभाव्यते—

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जो अचेतन विशेषता से रहित सोई निर्वि

शेष है तासे हमारी प्रतिबंदी नाम बंधन नहीं है अब अपने प्रकरणमें चलै हैं विष्णुभगवान के पराक्रम सोऊ न कह सकै जो पृथ्वी के रजके कणिका गिन लेय हेविष्णु जो तुम्हारी महिमा को अंत पावै सो न जन्म्यो न जन्मैगो आपकी महिमा सहस्रधा नाम अनंत है इत्यादिक श्रुति अंतरोंसे ब्रह्म अनंत कल्याण गुण को राशि है यह सिद्ध भयो वासुदेव प्रद्युम्न अनिरुद्ध संकर्षण रूप ये व्यूह जाके अंग हैं ता अंगी को हम ध्यान करैं हैं जैसे श्री मद्भागवत में कह्यो है ब्रह्मन वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न स्वयंपुरुष अनिरुद्ध ये व्यूह मूर्त्ति कही जायं हैं विश्व तैजस प्राज्ञ तुरीय इन वृत्तियों करके अर्थ इन्द्री आशय ज्ञान करके भगवान ही भावना किये जाय हैं

सिद्धांतरत्नमालिपुस्तौ

अंगोपांगायुधाकल्पैर्भगवांस्तच्चतुष्टयं । बिभर्त्ति स्म चतुर्मूर्त्तिर्भगवान् हरिरीश्वर इति अत्रेदं बोध्यं वासुदेवो विश्वो जागरणाभिमानी सत्वाधिष्ठातृत्वात् प्रद्युम्नस्तैजसः स्वप्नाभिमानी रजोधिष्ठातृत्वात् संकर्षणः प्राज्ञः सुषुप्त्यभिमानी तमोधिष्ठातृत्वात् त्रिषु गत्वा ज्ञानत्वादिषु निर्विकारत्वेनानुगतत्वाद निरुद्धस्तुरीयो जागरणादिषु

एक रूपात्मतत्वं एवं तत्तदधिष्ठित् सत्वादि तोजागर्त्ति स्वप्न सुषुप्त-यो भवन्तीत्यर्थः प्रमाणं श्रीभागवते दृष्टव्यं अथ प्रधानेश्वरः प्रद्युम्नः अनिरुद्धस्तु समष्टि देहांतरात्मा ब्रम्हाण्डांतर्यामी पुरुषाख्यःव्यष्ट्यां तरात्मातुवासुदेवःयथोक्तं प्रथमंमहतःसृष्टिद्वितीयंत्वंडसंस्थितंतृतियं

भाषा कांति प्रकाशिका

अंग उपांग आयुध आकल्प करके भगवान हरि ईश्वर चतुर्मूर्ति चारौं को धारण करैं हैं इति यामैं ऐसो जानवे योग्य हैं वासुदेव विश्व जागर्त्ति अभिमानी सत्वके अधिष्ठाता प्रद्युम्न तैजस स्वप्न अभिमानी रज के अधिष्ठाता संकर्षण प्राज्ञ सुषुप्ति के अभिमानी तम के अधिष्ठाता अनिरुद्ध तुरीय जागर्त्तादि अवस्था में निर्विकार करके अनुगत हैं और सब जागरणादि अवस्था में जिनको एक रूप आत्मा को तत्व है या प्रकार तिन तिन अधिष्ठाता सहित सत्वादिक से जागर्त्ति स्वप्न सुषुप्ति होय है प्रमाण श्रीभागवत में देखो ताके अंतर प्रधान के ईश्वर प्रद्युम्न हैं अनिरुद्ध समष्टि देह के अंतरात्मा ब्रह्माण्ड के अन्तर्यामी पुरुष उनको नाम है व्यष्टि के अंतरात्मा वासुदेव हैं सोई कह्यो है प्रथम महत की सृष्टि दूसरी अण्ड की

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

सर्वं भूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यत इति सर्वोत्तमोऽनन्यापेक्ष महिमैश्वर्यः श्रीकृष्ण एव स्वयं रूपः तस्य वासुदेव प्रद्युम्नानिरुद्ध संकर्षण रूपो व्यूहश्चतुः करणं अतः सर्वेषां चित्त बुद्धिमनोऽहंकारा णामधिष्ठातृत्वं व्यूहस्यश्रूयते यानि अस्मदादिचित्ताद्यधिदैवतानि तानि भगवतश्चित्तादीनि यथा दर्पणे बिम्बाङ्गानि प्रतिबिम्बे यथास्थान मेव प्रतीयन्ते तथैव भगवतोऽपि चित्तादिस्थाना यथा वासुदेवाद्यङ्गानि विश्वस्मिन् यथास्थानमेव चित्ताद्यधिष्ठातृत्वेन श्रूयते चन्द्ररुद्रादीनां रूपान्तरत्वेन तद्दृष्टान्ताच्च

भाषाकान्तिप्रकाशिका

संस्थिति तीसरी सब भूतों में स्थिति तिनको जानके संसार से छूटै है सब से उत्तम जाकी महिमा ईश्वर्य कोई की अपेक्षा नहीं करै सो श्रीकृष्ण स्वयं रूप हैं तिनके वासुदेव प्रद्युम्न अनिरुद्ध संकर्षण व्यूह चार करण हैं यातें सबोंके चित्त बुद्धिमन अहंकारों के अधिष्ठातापनो व्यूहों को सुन्यो जाय है और जो हमारे सब के चित्तादिकों के अधिदैवत हैं सोई भगवान के चित्तादिकों के हैं जैसे दर्पण में बिंबके अंगप्रति बिंबमें यथास्थानमें प्रतीत होंय है तैसे ही भगवत के चित्तादि में स्थित वासुदेवादिक अंग या विश्व में यथा स्थानपर चित्तादिकोंके अधिष्ठाता सुनेजाय हैं। भगवान

के अंग में चन्द्ररुद्रादिक रूपांतर भगवान के अंश हैं—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

विरोधः इति तत्रार्थविवेकः भूतेभ्यः प्राणिनः श्रेष्ठास्तेभ्योवैमनुजाः खलु मनुजेभ्योमराः सर्वदेवेभ्यश्चतुराननः ब्रम्हणः शंकरः श्रेष्ठस्तस्मा-द्विष्णुरेवहि तस्माच्छ्रेष्ठः शेषशायी तस्माच्छ्रेष्ठो विराड्विभुः तस्माच्छ्रेष्ठोहिविज्ञेयोमहाविष्णुर्महाविराट। तस्माच्छ्रेष्ठः प्रधानेशः पुरुषाख्योगुणात्मकः तस्परोब्रह्मविज्ञेयोवासुदेवःपरात्परः परमात्मा परंज्योतिर्निरीहोनिर्गुणोविभुः तदधिष्ठाता कृतिमानस्य ब्रह्माचारी समस्तचिन् भावनीयश्च सर्वेषांगुणागुणविवर्जितः कृष्णाख्यं परब्रह्-मनिर्व्यनित्यगुणाश्रयः सर्वैश्वर्यसंयुतः साक्षात् सर्वमाधुर्यवानस्य इतितत्वलागरोक्तः श्वसिद्धांतरीत्यापिसर्वस्वरूपश्रेष्ठत्वेन—

भावार्थदीपप्रकाशिका

तातै कुछ विरोध नहीं अब ऐसो विचार करौ कि सब भूतों से प्राणधारी श्रेष्ठ हैं, तिनसे मनुष्य श्रेष्ठ तिन मनुष्यों से देवता श्रेष्ठ हैं, सब देवतावों में ब्रह्मा श्रेष्ठ हैं, ब्रम्हाजी से महादेव जी, तिनसे परे विष्णु, तिन से श्रेष्ठ शेषशायी, तिन से श्रेष्ठ विराट्विभुतिन से श्रेष्ठ महाविष्णु महाविराट, तिनसे परे प्रधानके ईश पुरुष जिनको नाम गुणात्मक तिन से परे ब्रम्ह वासुदेव परते परे जानवे योग्य हैं, सोई वासुदेव परमात्मा परंज्योति चेष्टा रहित निर्गुण विभु हैं। तिनके

अधिष्ठाता कृतिमान अपनी स्वच्छन्द इच्छा से आचरण करवेवारे समस्त को जानैं सब करके भावना करवे योग्यगुण अगुणसे वर्जित श्रीकृष्ण नामके परब्रम्ह नित्य नित्य गुण के आश्रय सर्व ईश्वर्य युक्तसाक्षात सब माधुर्य्यसे पूर्ण स्वयं आप हैं—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

स्वयं भगवतः श्रीकृष्णस्यांतरंग स्वाच्चतुर्णामिनियम्यत्वं तुल्य कं अतःश्रीकृष्णस्तेषामधिष्ठातातैःसेव्यश्च ब्रह्मादिवत्वसु व सुदेवादि द्वारानियम्यास्तदंशत्वात् भूतादीनांच ब्रम्हादिद्वारा नियम्यत्वमिति अतश्च व्यूहांविस्त्वेनसर्वप्रधानोशेषकल्याण गुणौकराशि श्रीकृष्णएव स्वयंभगवान चतार्थनिसिद्ध अवतारो नाम निज संकल्प पूर्वक भक्त जनाधीन व्यक्तिकृतविग्रहः अवताराखिधाः लीलावताराः पुरुषावतार गुणावताराश्च तत्रलीलावताराः चतुः सननारद वाराहमत्स्ययज्ञ—

भाषा कांति प्रकाशिका

या तत्व सागर के सिद्धांत से भी सब स्वरूप से श्रेष्ठ ता स्वयं भगवान श्रीकृष्णको है वेचार व्यूह अंतरंग है और नियम्य हैं याते श्रीकृष्ण तिनके सेव्य और अधिष्ठाताहैं ब्रह्मादिक वासुदेवादिक के द्वारा नियम न किये जाय हैं काहेसे कि तिनके अंश हैं भूतादिकों के नियम न करवेवारे ब्रह्मादिक हैं याते व्यूह

जिनके अंगते भये वे सब से प्रधान अशेष कल्याण गुणों की राशि श्रीकृष्ण हैं सोई स्वयं भगवान अवतारी यह सिद्ध भयो अवतार नाम निज संकल्प पूर्वक भक्तजन के आधीन विग्रह प्रकट करनो तामें अवतार तीन प्रकार के हैं लीला अवतार, गुणावतार तामें लीला अवतार यह हैं चार संकादिक, नारद, वाराह, मत्स्य, यज्ञ—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

नर नारायण कपिल दत्त हयशीर्ष हंस पृश्निगर्भ ऋषभदेव पृथु नृसिंह कूर्म धन्वन्तरि मोहनी वामन परशुराम रघुनाथ व्यास बलभद्र हय ग्रीव कृष्णबुद्धकल्कीत्यादयः लीलावतारा आपिचतुर्विधाः आवेशावताराः प्राभावावताराः विभावावताराः स्वरूपावताराश्चेति तत्रावेशावतारा द्विविधाः स्वांशावेशावतारा शक्त्यावेशावताराश्चेति तत्रांशावताराः कपिलपरशुरामादयः शक्त्यावेशावतारास्तु यत्रयत्रैकशक्ति संचारमात्रंतेच चतुःसननारद पृथुप्रभृतयः अधिकशक्ति संचारे च प्रभावाव तारत्वमेव चतुःसनादीनां प्रभावावतारत्वं यत्राधिकशक्ति संचारः ते चहंसऋषभधन्वंतरि मोहनी व्यासादयः ततोऽप्यधिक संचारे येषुतेविभवावतारा—

भाषार्थदीपकाशिका।

नर, नारायण, कपिलदत्त, हय ग्रीव हंस पृश्निगर्भ, ऋषभ, पृथु, नृसिंह, कूर्म, धन्वंतरि, मोहनी वामन परशुराम रघुनाथ व्यास बलभद्र हयग्रीव कृष्ण बुद्ध कल्कीत्यादयः लीलावतार

भी चार प्रकार के आवेश अवतार प्रभ-
वावतार विभवावतार:स्वरूपावतार तामें आवेश
अवतार दो प्रकार के अपने अंश के अवतार
शक्ति के आवेश के अवतार तामें अंशावतार
कपिल पशुरामादिक शक्ति 'आवेशावतारों' में
जिनमें एक २ शक्ति संचार मात्र है। वे चार
सनकादि नारद पृथुआदिक अधिक शक्ति स
ञ्चार जिनमें उनको प्रभावतार में गिन लेनो
चतुः सनादि प्रभावावतार में हैं विशेष अधिक
शक्ति सञ्चार जिनमें वे हंस ऋषभ धन्वंतरि
मोहनी व्यासादिक तासे भी अधिक सञ्चार
जिनमें वे विभव अवतार हैं जैसे

यथा मत्स्य कूर्म नरनारायण वाराह हयग्रीव पृश्निगर्भ बल-
भद्रप्रभृतयः सर्वतोप्याधिक्याः स्वरूपावतारा: तेतु नृसिंहो रामः कृष्ण
इत्येते षड्गुणस्वरूपावतारो नाम सर्वस्वरूपश्रेष्ठः सर्वमाधुर्यवान स्वय-
मेव भगवानखिलेश्वरः इतरसजातीयतया स्वरूपं प्रकटयन् विराजमा
न इति गूढं परब्रह्म मनुष्य लिंगमित्यादि प्रमाणात् श्रीकृष्ण एव तुरीय
ए भगवांस्तस्मादधिकः समस्तकोपि नास्तीत्युक्तमभवस्मात् वैकुण्ठ-
नाथस्तु श्रीकृष्णस्य विलासः तुल्यशक्तिप्राविस्त्वात् अथ पुरुषावताराः
ते त्रयः पृथक्पुरुषो महत्स्रष्टा कारणार्णवशायी प्रकृत्यन्तर्यामीस प्रद्यु-
म्नांशोपि महाविराडन्तर्यामित्वेन संकर्षणांशस्तस्यानंतत्वात् द्वितीयः

मत्स्य कूर्म नर नारायण वाराह हयग्रीव पृश्णि गर्भ बलभद्र यज्ञादिक सबसे अधिक स्वरूप अवतार हैं ये श्री नृसिंह रामकृष्ण यद्वा स्वरूप अवतार नाम सब स्वरूप से श्रेष्ठ सब माधुर्यवान् स्वयं भगवान् अखिल के ईश्वर इतर सजाति में मिलके स्वरूप प्रगट करके विराजमान हैं शुद्ध परम ब्रह्म। मनुष्य लिंग इत्यादि प्रमाण ते तासे श्रीकृष्ण ही स्वयं भगवान सब से अधिक हैं। तिनके कोई बराबर नहीं अधिक कहां से होयगो सो पहिले कहि आये हैं। वैकुण्ठ नाथ तो श्रीकृष्ण के विलास हैं, उनके तुल्य शक्ति धारण करैं हैं। ताके अंतर पुरुषावतार वर्णन करैं हैं। वे तीन हैं प्रथम पुरुष महत्स्रष्टा कारणार्णव में शयन करैं। प्रकृति के अन्तर्यामी महत्सृष्ट के अंश हैं तो भी विराट के अंतर्यामी पने से संकर्षण के अंश हैं, सो अनंत हैं दूसरे

पुरुषोगर्भोदशायी अनिरुद्धांशोऽपि समष्टिविराडन्तर्यामित्वेन प्रद्युम्नांशः कामस्तस्य गर्भधारणासामर्थ्यात् अतएव प्रधानेश इत्युच्यते तृतीयः पुरुषः क्षीरोदशायी व्यष्टिविराडन्तर्यामी अनिरुद्धांशः समष्टिदेहान्तरात्मा अथ व्यष्ट्यन्तर्यामी तु वासुदेवांशः पुरुषाख्यश्च तुर्यः अथ गुणावताराः गुणे सत्त्वादिषु अवताराः गुणावताराः सत्त्व गुणे विष्णुः पालनकर्ता स वासुदेव एव स च लक्ष्मीद्वारा पालयति तथोक्तं श्रीशुकेन। श्रीस्वाधूताः सकरुणेन निरीक्षणेन यत्र स्थितैधयत साधिपतींस्त्रिलोकानित्यादि रजोगुणे ब्रह्मा सृष्टिकर्ता गर्भोदशायीनाभिपद्मोद्भवः प्रद्युम्नांशश्च स्वयमेवेंद्रोयम

भाषा कांति प्रकाशिका

पुरुष गर्भोदशायी अनिरुद्ध के अंश भी हैं पर समष्टि विराड के अंतर्यामी होवे से प्रद्युम्न के अंश हैं, काम तिन को अंश है, ताको गर्भ धारणकी सामर्थ्य नहीं है तीसरे पुरुष क्षीरोदशायी व्यष्टि विराडंतर्यामी अनिरुद्धांशः समष्टि देहके अंतरात्मा और व्यष्टि के अन्तर्यामी तौ वासुदेव के अंश पुरुष नाम के चौथे हैं ताके पीछे गुणों के अवतार वर्णन करै हैं सत्वादि गुणों के विषय अवतार वे गुणावतार कहें जाय है तामें सत्व गुण के विषय विष्णु पालन कर्ता सो वासुदेव ही हैं। लक्ष्मी जी के द्वारा पालन करैं हैं, सोई श्री शुकदेव जी ने कह्यो है लक्ष्मीजी

अपनी करुणा की चितवन से देख के जहां स्थित होंय सहित अधिपतियों के त्रिलोकन को बढ़ावैं हैं रजोगुण के ब्रह्मा सृष्टि कर्ता गर्भो दशायी की नाभि-कमल से उत्पन्न प्रद्युम्न के अंश हैं जैसे कबहूं स्वयं यज्ञ भगवान ही इन्द्र होते भये

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

इति तत्त्वमेव ब्रह्मापि कस्मिंश्चित्कल्पे भवती तिलत्व यदि तु कस्मिंश्चित्कल्पेनाद्दृशपुण्यकारी जीवएव ब्रह्मास्तर्हि भगवत् प्रद्युम्नस्य सृष्टि शक्ति प्रवेशेन आवेशावतार एव ब्रह्मा, तथापि इन्द्रुशोरस्य कूटस्थ स्याखिलात्मनः गृह्यंस्तु ग्रामिसृष्टोह्यमंशंस्तैर्वामिन्योदित इत्यादि प्रमाणात् किंचसत्यलोकांतः समष्टिविराट्स्वामी ब्रह्मापरन विग्रहः प्राकृता स्वब्रह्मेत्युच्यते ह्यन्यजीवः सुष्मोहिरण्यगर्भोयमा ब्रह्म अस्यांतर्गमोत्थीपत्वमय तमोगुणोरुद्रः संहारकर्ता सलरूपगो शश्च भ्रू जन्मास्त्वयं स हर्तारुद्रः संकर्षणांशक इति प्रमाणात् किंचा-यंस्तद्राशिवोनिर्गुणश्चेत् तदाप्तगुणाशिवस्यांशो अतएवास्य—

भावाकान्तिप्रकाशिका

तैसे कोई कल्प में ब्रह्मा भी होंय यह तत्त्व है और जो कोई कल्प में ऐसो पुण्यकारी कोई जीव ही ब्रह्मा होय तौ भगवान् प्रद्युम्न की सृष्टि करवे की शक्ति प्रवेश होवे से आवेशावतार ब्रह्मा है सो श्रीभागवत में कह्यो सो जो द्रष्टा ईश कूटस्थ अखिल को आत्मा ताको

मैं रचो भयो ताके रचे भये को मैं रचौं हूं, ताकी चितवन को प्रेरो भयो इत्यादि प्रमाणों से सत्यलोक के भीतर समष्टि विराट स्थान ब्रह्मा को विग्रह है, सो प्राकृत बोलो जाय है। याकोजीव सूक्ष्महिरण्य गर्भ यहभीब्रह्माहै, ताको अन्तर्यामी ईश्वरहै। तमोगुणमें रुद्र संहारकरबे वाले रुद्रसंकर्षण के अंशहैं। भृकुटी से जन्म सबके संहार कर्ता संकर्षणके अंश यहप्रमाणहैं, जो ये सदाशिव निर्गुण हैं तौ सगुण शिव के अंशी हैं, तासे इन को विष्णु के साथ समानता है, केवल पालनादि धर्म में नतु स्वरूप में

सिद्धांतरत्नांजलिपूर्वार्द्ध

विष्णुनासाम्य माधिक्यं च विरंचितः अथ श्रीब्रह्मरुद्रमूर्तीनां भक्ति प्रवर्त्तकत्वादाचार्यत्वमपि बोधव्यं किंचसनक श्री ब्रह्मरुद्राः वैष्णवाः क्षितिपावनाः इत्यादि पाद्मे याः प्रोक्तावेदांत भाष्याणामाचार्य्याः पद्मजादिभिश्चेति श्रीभागवते चत्वारःसंप्रदाय प्रवर्त्तका चाभ्योउक्ता

भाषाकान्तिप्रकाशिका

ब्रह्मा से अधिक हैं और श्री ब्रह्मरुद्र ये भक्ति भी प्रवर्त्त करैं हैं, इन को आचार्य भी जानने योग्य हैं। श्रीसनक श्रीरुद्र ब्रह्म ये वैष्णव पृथ्वी को पवित्र करैं हैं, यह पद्मपुराण में

लिख्यो है श्रीमद्भागवत में चार संप्रदाय प्रवर्तक आचार्य्य लिखे हैं वेदतंत्र करके ब्रह्मादि आचार्यौंने वर्णन कियो है–

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अथसर्वंखल्विदंब्रह्मेत्यादि वाक्यैः सर्वव्यापकंब्रह्मेतिनिश्चितं तच्चद्विविधं अंतर्यामी बहिर्यामीभेदात् अंतर्यामि चेतनामांतः स्थित्वा-प्रेरकत्वंय आत्मनितिष्ठन्नित्यादि श्रुतेःईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जु-नतिष्ठतीत्यादि स्मृतेश्च अयंचांतर्यामीश्वरः उपासकानामपरोक्षी-भिर्वति यथोक्तं श्रीभागवते अंतर्बहिश्चामलमब्जनेत्रं स्वपुरुषेच्छानुग्र-हीतरूपं पीतवस्त्रवश्रीललनाललामंतुरंस्फुरत्कुंडल मंडिता ननमिति ज्ञानिनांतुनामात्र रूपेणप्रतिभासते अतिभावनयाचिधुरस्यमून-भायया अपरोक्षवत् परोक्षस्याभावस्यापि ब्रह्मणः अपरोक्षभवति तथांतर्यामी द्विविधः चेतनांतर्यामी अचेतनांतर्यामी—

भाषा कांति प्रकाशिका

और भी कहैं हैं श्रुति के वाक्य हैं कि यह सब विश्व ब्रह्म है तासे सबमें व्यापक ब्रह्म है यह ठीक भयो सो दो प्रकार को अंतर्यामी जो अंतर में प्रेरणा करै एक दूसरो बहिर्यामी जो बाहिरमें प्रेरणा करै तामें ये प्रमाण हैं जो आत्मा में तिष्टै इत्यादिक श्रुति श्रीगीता में भी है हे अर्जुन ईश्वर सब भूतों के हृद्देश में तिष्टै है माया के चरख पर चढाय के सब भूतों को घुमावै है यह अंतर्यामी ईश्वर उपा–

सकों को दर्शन भी देय है सो श्री भागवत में दिति से कश्यपने कह्यो अंतरमें बाहिर में जो कमलदल लोचन अपने भक्तकी इच्छा से जो रूप प्रगट करे तेरो नाती लक्ष्मी ललना को जो मुकट रूप कुन्डल मन्डित मुखारविन्द को दर्शन करैगो ज्ञानियों को तौ तावन्मात्र रूप से भासे है जैसे कोई की अति प्यारी स्त्री मरगई ताको वियोग विरहमें अति उत्कट भावना जो बंधजाय ताको जैसे सर्वत्र स्त्रीकी स्फुरणा होय है तैसे परोक्ष स्वभाव भी ब्रह्म अपरोक्ष होय है—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

चेति तत्र चेतनांतर्याम्युक्तः अचेतनांतर्यामी यथः पृथव्यांति-ष्ठन्नित्यादि श्रुत्यानु संधेयः। बहिर्यामी त्वंतुबहिः स्थित्वा नियामक त्वं तच्च श्रीगुरुचरणारविन्दे प्रसिद्धमेव यथोक्तमुद्धवेन। यौतर्बहिस्त नुभृतामशुभं विधुन्वन्नाचार्य चैत्यवपुषा स्वगतिंव्यनक्तीत्यादि अथम-न्वंतरावतारा। ऋषभधर्म्म सेतु विष्वक्सेनाजित वामन वैकुण्ठहरि सत्यसेन यज्ञविभूबृहद्भानु सत्त्वायण योगेश्वराः अथयुगावताराः शुक्ल रक्तपीतकृष्णाः अर्चावतारो द्विविधः आराधितस्वयं व्यक्ति भेदात् भक्तजनैः पूजत्वेन आराध्यमंदिरादौ स्थापितोयः सआराधितार्चाव-तार इत्युच्यते। गोपालप्रतिमांकुर्याद्वेणुवादनतत्परां

भाषार्थांतिप्रकाशिका।

सो अन्तर्यामी दो प्रकार चेतनांतर्यामी

अचेतनांतर्यामी तामें चेतनांतर्यामी तौ कहि आये अचेतन अन्तर्यामी में प्रमाण जो पृथ्वी के विषयतिष्टै इत्यादिकश्रुति अनुसन्धान कर लेन बाहिर के शिक्षा देवे वाले श्रीगुरु के चरण कमल प्रसिद्ध ही हैं सोई श्रीमद्भागवत में उद्धव जी ने कह्यो है जो तनुधारियोंके अन्तर बाहिर अशुभ नाशकरत आचार्य सु चैतन्यवपु होके अपनी गति प्रगट करैं हैं अथ मन्वन्तर अवतार वर्णन करैं हैं ऋषभ धर्म सेतु बिष्वक्सेन अजित बामन वैकुण्ठ सत्यसेन यज्ञ विभु वृहद्भानु ये सब योगेश्वर हैं अथ युगावतार बर्णन करैं हैं शुक्ल रक्त पीतकृष्ण अब अर्चावतार कहें हैं सो दो प्रकार के एक आराधित दूसरे स्वयं व्यक्ति भक्तजनों ने पूजाके लिये आराधन करके मन्दिरादि में स्थापन किये उनको आराधित अर्चावतारकहें हैं ताको प्रमाण कहैं हैं वेणु बजाय वे में तत्पर ऐसी गोपाल की प्रतिमा करै

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्धे

वहीपीठो घनश्यामो द्विभुजो मुरलीं स्थितामित्यादिप्रमाणात्
आराधकभक्तजनाधीनाखिलात्म संस्थितिरेवार्चावतार स्वभावः श्री-

लादिभेदेन नानाविधस्थानमप्यथा तथाश्रीमद्भागवते शैलीदारुमयीलौ-
ही लेप्या लेख्या च सैकती । मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता
चलाचलेति द्विविधा प्रतिष्ठा जीवमन्दिरमिति स्थिरायामचलायां न
कृष्णस्याह्वानविसर्जने अस्थायत्वाद चर्येनन्नलायांस्याच्च भवेत् ।
लेप्यं सैकतयोश्चैव शालिग्रामे न सर्वथा । शैलीकाष्ठमयीलौहीहार्दी
मणिमयी शुभि । स्नान भूषादिकं देयं सर्वथा हरिवल्लभं । लेप्या ले-
ख्यासिकता सुनश्चुदेवं यथार्हतः

भाषाकांतिप्रकाशिका ।

मोरपंख को आपीड़ घनश्याम दो भुजा उंचे में स्थित इत्यादिक प्रमाणते अर्चाअव-तार को स्वभाव है कि आराधन करवे वाले भक्तजन के आधीन सब आत्मा की स्थिति राखैं हैं शैलादि भेदकरके हरि के अधिष्ठान आठ प्रकारके हैं सोई श्री भागवत में हैं शैली (पाषाणकी)दारु(काष्ठकी)लौही(सुवर्णादिक) लेप्यकी चित्र लिखी बालूकी मनमें बनावै मणि की ये आठ प्रकार की प्रतिमा हैं। एक चला दूसरी अचला दो प्रकारकी जीवमन्दिर की प्रतिष्ठा है चला जो सर्वत्र गमन करै अचला जो एक मन्दिर में स्थित कहूं न जाय सकै तामें अचला में श्रीकृष्णको बुलावनोभी नहीं विदाकरनो भी नहीं विश्वास के तार-

तम्य से चला में आवाहन विसर्जन होय भी, नहीं भी होय, लेप्या व सैकती में दोनों हैं शालिग्राम में सर्वथा आवाहन विसर्जन है ही नहीं। पाषाण वारी काष्टवारी सुवर्णवारी मनो-मयी मणिमयी के विषय स्नान भूषणादिक

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

सुलेप्य लेख्ययोःकार्यं परिमार्जनमेवहि सैकतायांतुसर्वंतद्वि-नास्नानसमर्हणं अथस्वयंव्यक्तः सालिग्रामः स्वयंव्यक्तिरनादि सिद्ध-एवतु सालग्रामेपिभगवानाविर्भूतोयथाहरिः नतथान्यत्रसूर्यादौ वैकु-ण्ठेषुस्थलेषुवा: शिलास्वामलकीतुल्यासूक्ष्माचक्रातीयथाभवेत् तस्यामेव सदावासम् श्रियासहयसाम्यहं सालिग्रामे.त्रयोदेवोदेवोऽद्य।ऽऽवर्तीभवः उभयोः संगमोयत्रतत्रसन्निहितोहरिः नतथारमतेलक्ष्मानतथास्वपुरे-हरिः सालिग्रामेशिलाचक्रे यथासरमतेहरिः

भाषा कांति प्रकाशिका

सर्वथा हरि प्यारे को देने योग है। लेप्या लेख्या सिकता के विषय यथा योग पूजा कर वेयोग है। लेप्य लेख्य इन दोनों में परिमार्जन योग्य है स्नान नहीं सैकतामें विना स्नान सब होसकै। अब स्वयं जो व्यक्तहैं तिनको वर्णन करें हैं। सालिग्राम भगवान अनादि सिद्ध स्वयं व्यक्तिसाक्षात हैं जैसे सालिग्राममें भगवानको प्रागट्यहै तैसे और सब स्थलसूर्यादि वैकुंठादि

में नहीं है आमला के बराबर शिला अत्यन्त सूक्ष्म जो होय, हे ब्रह्मन! ताके विषय में सदा लक्ष्मी सहित वसौं हौं यह भगवान ने कह्यो सालिग्राम में देव प्रगट भये द्वारावती में प्रगट भये दोनों संगम जहां हैं तहां हरि निकट ही रहैं हैं और भी कहैं हैं तैसे लक्ष्मी के साथ आप हरि रमण नहीं करैं अपने पुरमें तैसे नहीं रमैं शालिग्राम शिला में जैसे रमैं हैं—

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

अथातोब्रह्मजिज्ञासा विजिज्ञासस्वतद्ब्रह्मेति वदन्तितत्त्वविदस्तत्त्वंयज्ज्ञानमद्वयं ब्रह्मेतिपरमात्मेति भगवानितिशब्द्यते इत्यादौ प्रसिद्धेन ब्रह्मशब्देन श्री कृष्णंविशिनष्टि ब्रह्मेति यत्रस्वरूपेणगुणैश्च बृहत्वं सब्रह्मशब्दस्यमुख्यार्थः अयमर्थः बृहिबृंहत्याविति धातोरौणादिकेनमन प्रत्ययेन ब्रह्मपदस्यव्युत्पन्नत्वाद्योगवृत्त्याबृहद्वाचकत्वेनस्य बृहत्त्वसंकोचाभावात् देशकालवस्तु गुणपरिच्छेदशून्यत्वंपर्य्यवस्यतीत्यतोब्रह्मशब्दः भगवत्येवमुख्यवृत्त्याइति बृंहतोह्यस्मिन्गुणाइति श्रुतेश्च—

भाषा कांति प्रकाशिका

अब श्रीमदाचार्य देव ने श्रीकृष्ण को परब्रह्म व भगवान स्वयं जो वर्णन कियो ताकी पुष्टीके प्रमाण दिखावैं हैं तामें पहिले सूत्रक-हैं अथनाम कर्म करके पुण्य करके संचित जो लोकस्वर्गादिक तिनको नाश जाने ताके

पीछे तिन में अक्षय सुख नहीं है याकारणाते ब्रह्मको जिज्ञासा करनी सो ब्रह्म है ताकी जिज्ञासा करो। श्रीमद्भागवत में भी है तत्व के जाननवारे जातत्व को अद्वय ज्ञान बतावैं हैं सो ब्रह्मपरमात्मा भगवान इन शब्दों से बोल्योजाय है इत्यादि प्रमाणों से श्रीकृष्ण को ही वर्णन करैं हैं। जोस्वरूप गुणों करके बढ्यो होय सोई ब्रह्म शब्द को मुख्यार्थ है बृहिधातु बृद्धि के विषय औणादि गण से मनुप्रत्यय करके ब्रह्मपद की व्युत्पत्तिभयी योग बृत्ति करके भी बृहत कहवे से ताको संकोच नहीं यह ठीक भयो देश से परिछेदन ही काल करके वस्तु करके परिच्छेदनहीं गुण करके परिछेद नहीं याते ब्रम्ह शब्द भगवत-

श्रीकृष्णगमत्वमुख्यवृत्तः अन्यानस्यौपचारिकः यथयादृतनवदृतीति-न्यायेन ब्रह्मेति शब्द्यते ब्रह्मणोहि प्रतिष्ठाहं। पूर्वैतरस्य ब्रह्मणोऽकलित्वये-त्यादौभगवद्धि प्रहृत्रभावायण्ब्रह्मशब्दार्थस्योक्तेश्च ब्रह्म परमात्मा भगवदच्छब्दानांसामानाधिकरण्योक्तेश्च शुद्धेमहाविभूत्याख्ये परेब्रह्म-णिशब्द्यते मैत्रेयभगवच्छब्दः सर्वकारणकारणे संभर्तेतितथाभर्ता भ-काराऽर्थोद्वयान्वितं नेतागमयिता स्रष्टागकारार्थः तथाषुनैश्वर्यस्यसम ग्रस्यवीर्यस्ययशसःश्रियःज्ञानवैराग्ययोश्चैवषण्णांभगइतीरणा।वसंति-

अमूनानिभूतात्मनोखिलात्मनि सचभूतेष्वशेषेषुवकारार्थः ततोऽव्ययः ज्ञानशक्तिबलैश्वर्यवीर्य ।

भाषाकान्तिप्रकाशिक

में ही मुख्य वर्त्तैं है वढ़े होंय जाके विषय गुण यह श्रुति है सो श्रीकृष्ण ही में मुख्य ब्रह्म भगवान शब्द वर्तें है औरों में उपचारमात्रहैजाके नखकीज्योतिपरब्रह्मशब्दसेवोली जाय है सोई गीताजीमें कह्यो ब्रह्मकी प्रतिष्ठा मैं हूं श्री मद्भागवत में अक्रूरजी ने कह्यो जाके नखमन्डल की कांति करके पहिले बहुत तरते भये भगवद्विग्रहकी प्रभा को ब्रम्ह शब्द बोलें हैं ब्रम्ह परमात्मा भगवान शब्दों का सामानाधिकरण्य भी कह्यो है हे मैत्रेय भगवत शब्द शुद्ध महाविभूति के पति परब्रम्ह सब कारणके कारण के विषय बोल्यो जाय है भरण करवे वालो, पोषण करवे वालों ये दो 'भ'कारके अर्थ हैं।ले जायवे वारो, प्राप्त करायवे वालो हे मुने यह 'ग'कार को अर्थ है।समग्रऐश्वर्य-वीर्य-यश-श्री-ज्ञान-वैराग्य इन छ:को भगवान बोलैंहैं। ताभूतात्मा अखिलात्मा के विषय सब भूत वसैं

हैं और सौ समग्रभूतों में वसै यह वकारको अर्थ अव्यय है–

सिद्धांतरत्नांजलिपूर्वार्द्ध

तेजांस्यशेषतः भगवच्छब्दवाच्यानि विनाहेयैर्गुणादिभिः एवमेषमहाशब्दोमैत्रेय भगवानिति परमब्रह्म भूतस्य वासुदेवस्यनान्यगः तत्रपूज्यपदार्थोक्तिपरिभाषासमन्वितः शब्दोयंनोपचारेणह्यन्यत्रह्युपचारतः समस्ताः शक्तयश्चैतानृपयत्रप्रतिष्ठिताः तद्विश्वरूपवैरूप्यरूपमन्यद्धरेर्महत् समस्तशक्तिरूपाणितत्करोतिजनेश्वरः देवतिर्यङ्मनुष्याख्याचेष्टावन्तिस्वलीलया जगतामुपकारायनसाकर्मनिमित्तजा चेष्टातस्याप्रमेयस्यव्यापिकाव्याहतात्मिकेति वैष्णवेपराशरः ।

भाषाकान्तिप्रकाशिका

ज्ञान शक्ति बल ऐश्वर्य वीर्य तेज यह सब भगवत नाम से बोले जाय हैं त्यागवे योग्य कोई गुण नहीं है याप्रकार हे मैत्रेय यह भगवान महाशब्द परमब्रह्म भूतवासुदेव के नाम में प्राप्त भयो तामें पूज्यपादकी अर्थ उक्तिसे परिभाषा–सहित यह शब्द उपचार सहित कृष्णमें नहीं है औरों में उपचारते हैं हे नृप सब शक्ति जामें प्रतिष्ठित हैं सोई विश्वरूपवैरूप्य अन्य हरि को महतरूप हैं सोजनेश्वर सब रूप शक्तिदेवता पशुमनुष्य रूपकी अपनी लीला से करै है और सो लीला जगत के उपकार के अर्थ हैं कर्म के

निमित्त से नहीं है ताअप्रमेयकी चेष्टा व्यापिका व्याहृतात्मिका है यह बृहद्वैष्णव में पाराशर जी ने कह्यो—

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

एतत् सर्वमभिप्रेत्योक्तं श्रीभागवते अथापियत्पादनखावसृष्टं जगद्विरंचयोपहृताहणांभः । सेशंपुनात्यन्यतमोमुकुन्दात्कोनामलोके भगवत्पदार्थ इति एवमोंकारोपिभगवद्वाचकएव रक्षणार्थस्यावतेः खलुरूपमेतत् अवतेष्टिलोपश्चेतिसूत्रात् ओमिति ब्रह्मेत्यादि श्रुतेः एवंचतिसृणांव्याहृतीनांषष्ठं त्रयात्मकोंकार व्याख्यानरूपत्वात् तासामपिभगवद्वाचकत्वमेव तथाहि भूरितिबहुत्वार्थस्यभवतेः रूपिरूपमेतत् इममेवार्थंभगवानाचार्योप्याहपरमिति परंपूर्णमित्यर्थः पूर्णत्वादि निमित्तमुपादायभूरादयः शब्दाभगवति प्रवर्त्तते इत्याशयः एवमविभागाज्जगत उत्पादनात्प्रभुव—

भाषा कांति प्रकाशिका

यही अभिप्रायसे श्रीमद्भागवत में कह्यो अथ जाके चरण नख से निकलो गंगाजल जगत गुरू ब्रह्मा जा की पूजा करैं, सो महादेव सहित सब को पवित्र करै तो ऐसे मकुन्द से अन्यतम और कौन लोक में भगवतपदार्थ है याही प्रकार ऊंकार भी भगवद्वाचक है अव धातु रक्षणके अर्थमें है ताको यह रूप है अवति कोटि नाम स्वरांत लोप होवे से ओं भयो ओं

यह ब्रह्म को नाम श्रुति में भी है याही रीति से तीन व्याहृति को वर्ण त्रयात्मक ओंकार रूप व्याख्या है तिनमें भी भगवान वाच्य हैं तथा भू यह बहुत अर्थ में है भवतिकोक्कपि प्रत्यय से यह रूप भयो यही अर्थ श्रीमदाचार्य्य भगवान ने भी कह्यो परं नाम पूर्ण पूर्णादिनि मित्त को लेके भूरादिक शब्द भी भगवान में वर्त्तें हैं याप्रकार अविभागते जगत के उत्पादन करवेते भुवः

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

अंतर्भाविण्यर्थस्य भवतेरेव कप्रत्ययरूप सुखरूपस्त्वशब्दः स्वशब्दो हि सुखवाची यद्दुःखेनसंभिन्नंनचग्रस्तमनन्तरं अभिलाषोपनीतं च तत्पदंस्वः पदास्पदमित्यादौप्रसिद्धः एवंगायत्र्याप्रतिपाद्योऽपिभगवानेव तथाहि जगत्प्रसवहेतुत्वात् सविता भगवानेव भरणगमनयोगेन भर्गशब्दार्थोभगवानपतेनगायत्र्यायोभर्गोनोअस्माकंधियः प्रचोदयात् प्रेरयेत्तस्यसवितुर्देवस्यतद्वरेण्यंवरंधीमहि चिन्तयाम इति भर्गात्मकः सविताप्रतिपाद्योदृश्यते तत्कथंभगवत्परत्वमित्यपास्तं ध्येयः सदासवितृमंडलमध्यवर्ती त्यागमविरोधाच्च पेत्रपुरुषसूक्ते विभगवानेवप्रति पाद्यः तथाचश्रुतिः

भाषा कांति प्रकाशिका

अंत भाविणि अर्थ भवते को कप्रत्यय रूप है सुखरूपस्व स्वशब्द सुखवाची है जो

दुख करके भिदो नहीं जो पीछे ग्रस्यो नहीं नहीं जो अभिलाषा को प्राप्त करावै ताको पद सुखपद कोस्थान है इत्यादि प्रसिद्ध है याहीरीति से गायत्री में भी प्रत्पाद्य भगवान हैं तथाहि जगत के उत्पत्ति के हेतु से सविता भगवान हैं भरण गमन के योग करके भर्ग शब्द को अर्थ भगवान हैं गायत्री के विषय जो भर्ग है सो हमारी बुद्धि को प्रेरणा करौ तासविता देवता को हम श्रेष्ठ रूप से चितवन करैं है कोई जो या अर्थ से शंका करैं है कि भर्ग नाम सूर्य को है तो गायत्री भगवत पर कैसे होयगी तौ ऊपरके सिद्धांतसे समाधान भयो जो भर्ग नाम भगवानको न होय तौ आगम में लिख्यो है कि सविता मन्डल के बीच में वर्त्तैं सो ध्यान करवे योग्य है तासे बिरोध होय ऐसे ही पुरुष सूक्त में भी भगवान प्रति पाद्य हैं सोई श्रुति में लिख्यो है

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

सर्वाणपुरुषः सर्वाङ्गपुरुषं परिशयोनैनर्किंचनसंवृत्तमिति

आवृतमज्ञानमित्यर्थः सर्ववेदार्थत्वंभगवतः सिद्धंसर्ववेदाय पदमामनंतीत्यादिश्रुतेः

सो निश्चय यहपुरुष सबपुरोंके विषय शयनकरैहै वासे कुछ छिपो नहीं सबवेदको अर्थ भी भगवत पर प्रसिद्धहै सबवेद जाके चरण को मनन करैहैं इत्यादि श्रुति भीहै अबयह विचारहैकि जिन श्री कृष्णको ऊपरमें प्रतिपादन कियो सो कौनहैंसोई आचार्य भगवान वर्णन करैहैं? शान्ति कान्ति गुणों के मन्दिर स्थिति सृष्टि लयमोक्षकेकारण व्यापक परम सत्य अंशीऐसे नन्द घरके प्रकाशक-रवेवाले तिनको दन्डवत करौहौं श्रीभगवतनाम के कौमुदी कारोंने कृष्ण शब्दको तमालसमान श्याम कान्ति यशोदा के स्तन पान करवे वालेपर ब्रह्म में रूढ बतायोहै प्राचुर्य करके तामेंही प्रयोग करवेसे प्रथमप्रतीतियशोदासुतमेंही होयहैयद्यपि प्रसिद्ध शास्त्रमें वसुदेव देवकी के बेटा हैं सोई लिख्योहै २ वसुदेव के बेटा देव कंसचाणूरके मर्दन करवे वाले देवकीके परमानन्दरुपरोसे कृष्णाजगत

गुरु को दन्डवत्त करौहौं तथापि विशेष अभिप्राय नन्द के आत्मज परहैसोईश्री शुकदेवजीनेश्रीभागवतमे वर्णनकियो

भाषाकांतिप्रकाशिका

नन्द१ तौ अपने आत्मजके उत्पन्न भयेमें बड़ोउदार मन जिनको अहलाद जन्म्यो इत्यादि उत्पन्न होनो और आत्मजत्व रूप से उत्पन्न होनो और भी यशोदा सुत पशुप अंगजनन्द सूनना वल्लभी नन्दन इत्यादिक नन्दके बेटा में प्रयोग बहुत हैं शास्त्र सिद्धांत से भी नन्द आत्मज में प्रयोग बहुत हैं पर जो सिद्धांत सुगम रीति से विना कष्ट कल्पना सबके हृदय में आपात करके मोद बढावै सोठीक है भगवान श्री कृष्णा कोई के पति पुत्रादिक नहीं हैं जो हृढ करके उन से जो संबंध बांधै ताको ताही रीतिसे सुख विधान करैं हैं देवकी के पुत्र

१—शान्तिकान्तिगुणमन्दिरं हरिं स्थैमसुहिलय मोक्षकारणं ॥
व्यापिनंपरम सत्य मंशिनं श्रीमिनन्दनसुहृत्वंदिनं प्रभुं ।
२—वसुदेव सुतंदेवंकंसचाणूरमर्दनं ॥ देवकीपरमानन्दं वन्दकृ-
ष्णजगद्गुरुं ।

होवे में भी दृष्टांत दियो कि जैसे पूर्व दिशा में चन्द्रमा उदय होय श्रीवसुदेव देवकी को पुत्र भावतौ है पर ऐश्वर्य मिलो है श्रीकृष्ण २ महाराजने ही कह्यो कि तुमने मो में ब्रह्म भाव और पुत्र भाव बारम्बार कियो सो तम मेरी परागतिको प्राप्तहोउगे जन्म समय में (विदतोसि भवान साक्षात् पुरुषःप्रकृतेपरः)इत्यादि स्तुति करनो भी प्रसिद्ध है तासे उनको पुत्र भाव दृढ नहीं श्रीकृष्ण मानेके पुत्र हैं ब्रह्माजीकी नासिका से वाराहजी प्रगट भये पर उन के पुत्र नहीं स्तम्भसे नृसिंहजीको प्राघट है पर स्तम्भनन्दन नहीं उत्तराके उदर में जायवे से भी परीक्षत के भैया नहीं भये कारण यह कि उनने माने नहीं तासे श्री नन्दयशोदा ही पक्को पुत्रभाव करते भये तासे नन्दात्मज–

श्रीभगवतेनन्द १ स्त्वात्मजोत्पन्नेजाताह्लादोमहामनाः
श्री भागवतेर युवांमांपुत्रभावेन ब्रह्मभावेन चासकृत् ॥
चिंतयन्तौकृतस्नेहौयास्येथेमद्गतिपरां ।

में कोई प्रकारको संदेह नहीं सोई ग्रंथकारको पूज्य पाद श्रीगुरुदेव भट्टजी महाराज ने कह्यो वसौ मेरे नयनन में दोऊ चन्द। गौर वरण वृषभानु नन्दनी श्याम वरण नद नन्द ॥ श्री आचार्य ग्रंथकार श्रीकृष्ण को स्वरूप सर्वैश्व र्यमान व माधुर्य्यवान ऊपर वर्णन कर आये हैं जाको जैसो भाव ताकौ तैसे रूप से दरसैं हैं प्राघट समय व्रज मथुरा द्वारका तीन प्रका र को लीला है। व्रजवासी मात्र को माधुर्य शुद्ध को भाव है ईश्वर्य कबहू भास जाय है पुरवासियों को सर्वदा ईश्वर्य ज्ञान है माधुर्य कबहूं कबहूं उदय होय है ऐश्वर्य नाम प्रभुता को है तासे संकोच भय संभ्रमादि होय हैमाधुर्य नाम वंधु समान जानै शील गुण रूप लीला वयस मनकी हरवे वाली हैं तासे शुद्धद्दढ़ प्रीति होय है ऐश्वर्य माधुर्य दोनों एक अधिष्ठान में प्राप्त भये से जो होयहै ताके उदाहरण दिखा- वै जब कंसको मारके श्रीकृष्ण१ देवकी वसु-

देवके पास आये और वन्दना भी माता पिता को करी पर वे जगदीश्वर जानके गोद लेके आलिंगन नहीं करते भये और प्रभुताके लक्षण कंस मारणादिक हृदय में धरके शंकित होते भये भगवानने विचार कियो कि दुर्लभ मेरेपुत्र पनेके सुखसे ये वंचित होय हैं ऐसे विचारके अपनी २ वैष्णवी योगमाया कृपा रूपा ऐश्वर्य की ढांकवेवारी विस्तार करते भये तासे ३ वसुदेव देवकी मोहित होके गोद लेके आलिंगन करते भये ।

परमानन्द पाय के अश्रूजलसे सींचते भये ऐश्वर्य अनुसन्धान में भगवान दूर होय जांयहैं माधुर्य अनुसन्धान में छाती से लगै तैसे ही श्रीअर्जुन विश्वरूप दर्शन करके बोले मैंने ३ आपको सखा मानके जो अपराध कियो है आप

१-श्रीमद्भागवते देवकी वसुदेवश्च विज्ञाय जगदीश्वरौ ॥ कृतसंवन्दनौ पुत्रौ सस्वजाते नशङ्कितौ ॥ २ पितरावुपलब्धार्थौ विदित्वा पुरुषोत्तम. ॥ माभूदितिनिजांमायांततानजनमोहनीं ॥ इतिमायामनुष्यस्यहरेर्विश्वात्मनोगिरा मोहितावङ्कमारोप्य परिष्वज्यापतुर्मुदम् ।

३—श्रीमद्गीतासु अदृष्टपूर्वंहृषितोऽस्मिदृष्ट्वा भयेनच-प्रव्यथितंमनोमे तदेवमेदर्शय देवरूपं प्रसीददेवेशजगन्निवास ।

की महिमा नहीं जानी आप क्षमा करौ पहिले जो कबहू नहीं देखो ऐसो यह रूप देखके बड़े भयसे मेरो मन कांपै है मेरे ऊपर प्रसन्न होकर पहिलोही रूप दर्शन करावो फिर मनुष्य रूप देखके बोले हेजनार्दन १ यह सौम्य मनुष्यरूप देखके मैं सुखी भयो भय संभ्रम सब जाते भये याही प्रकार यशोदा जी को भी माटी खायवेके मिष विश्वरूप दिखायो २ तो बेटा सेभी वैराग्य करवे लगी जब ३ अपनी सच्चिदानन्द शक्ति योग माया फैलाई तब पुत्र के स्नेह से भरी बेटा को गोदमें लेके सो ऐश्वर्य भूल जाती भयीं ब्रज के सब भाववारे भक्तोंको माधुर्यमय ज्ञान है जब कोई असुर कृष्ण से द्वेष करवे को आवै और वाको भगवान मारदेंय तौ श्रीकृष्णा के हाथ से असुरोंको मरनो अनुसन्धान करके परस्पर विचार करै कि ४हमारो कोई पुरानो तप है कि नारायण भगवानको पूजन हमने कियो कि कुवां

वावरी खुदाई कि यज्ञ दानादि किये कि सबको भलो कियो जो बालककी जीनेकी आशा

नहीं रही फेर अपने बन्धुवों को आयके सुखदेतो भयो वडो मंगल है कोई पूछे कि असुर कैसे मर गयो ताको सीधो सिद्धान्त है ५ हिंसक अपने पापसे आप मर गयो बेटा हमारो साधू समता करके भय से छूट गयो और जो कोई अद्भुत पराक्रम को काम गोवर्धनादि धारण देखैं तामें गर्गा चार्य के बचन से समाधान होजाय कि नन्द ६ यह तुम्हारो बेटा नारायण समान कीर्त्ति अनुभाव गुणों में होयगो याको तुम पालन करौ यह वात्सल्यवारेनको वर्णनकियो

१—दृष्ट्वेदंमानुषंरूपं तवसौम्यजनार्दन ॥ इदानीमस्मिसं-वृत्तः सचेतः प्रकृतिं गतः ।

२—श्रीमद्भागवते अहंममासौपतिरेष मेसुतोव्रजेश्वरस्या खिलवित्तपासती ॥ गोप्यश्चगोपाः सहगोधनाश्च मेयन्मायेत्थं कुमतिः समेगतिः ।

३—इत्थं विदिततत्त्वायांगोपिकायांस ईश्वरः ॥ वैष्णवं व्यत-नोन्मायां पुत्रस्नेहमयींविभुः ॥ सद्योनष्ट स्मृति गोपीसारोप्यारोह-मात्मजमिति ।

४—किंतस्तपश्चीर्णमथोव्रजार्चनं पुरैष्टदत्तमुतभूतसौहृदम यत्सम्परेतः पुनरेवबालकोदिष्ट्यास्वबन्धूनप्रणयन्नु पस्थितः

५—श्रीमद्भागवते हिंस्रः स्वपापेनविहिंसितः खलः साधु-समत्वेनभयाद्विमुच्यते ।

६—दशमे तस्मान्नन्दात्मजोऽयं तेनारायणसमोगुणैः ॥ श्रिया कीर्त्यानुभावेनगो पायस्व समाहितः ।

सखा सब माधुर्य्यमें भरे हैं शुकदेवजीने कह्यो १ श्री दामां से हारे भगवान कृष्ण अपनी पीठपर चढ़ावते भये और कांत भाव वारिन को तौ श्री परीक्षत जी के प्रश्नमें ही प्रसिद्ध है २गोपी कृष्ण को केवल कांत जानती भयीं ब्रह्म नहीं जानती भयीं। कोई वादी शंका करै यह ऐश्वर्य ज्ञानको आवरण माया कार्य अज्ञान को प्राप्त करावै है ताके लिये कहैं है परम ऐश्वर्यादि ज्ञानवारों को भी जब प्रीति प्रबल बढ़ै तब ऐश्वर्य ज्ञान तिरस्कार पावै है श्रीदेवहूती कपिलदेव जी के

३उपदेश से सब तत्त्व जानतीं भयीं पर बेटा कपिलदेव के गये पर विरह से ऐसी व्याकुल भयीं जैसे वत्सला गौबछरा विना जो वसुदेव देवकी भगवान के जन्म समय महातत्व प्रतपादक स्तुति करते भये सोई बोले ४ तुम्हारे हेतु से हम

१—दशमे उवाह भगवान कृष्णो श्रीदामानं पराजितः।
२—कृष्णं विदुः परंकांतं नतुब्रह्म तथामुने।
३—तृतीयस्कंध श्रीभागवत वनंप्रव्रजितेपत्यावपत्यविरहातुरा ज्ञाततत्वापि अभूत्नष्टे वत्से गौरिववत्सलेति।
४—दशमे समुद्विजेभवद्धेतोकं स्यादहमघोरधीः।

अधीर बुद्धि कंससे बहुत उद्वेग पावै हैं १सर्वज्ञ बलदेवजी ने जब सुनो कि अकेले श्रीकृष्ण रुक्मिणीके हरिवे को गये हैं तौ बड़ीसेना लेके स्नेहसे भरे भये कुन्दनपुर आवते भये २युधिष्ठिरजी श्रीकृष्णके तत्त्व जानने वाले द्वारिका जाती समय चतुरङ्गनीसेना संगकर देते भयेतासे माधुर्य ऐश्वर्य को आच्छादन करले सो परम प्रेम को कार्य है ब्रह्मज्ञान जासे नीचे रहे तहां माया कहां पहुंचै इन माधुर्य भाव वारों को सब से श्रेष्ठ भी बताये हैं गिरराज धारणके अंतमें सब ब्रजबासियों ने जब श्री कृष्णसे पूछी कि तुम कौन हो यक्षराक्षसदेव गंधर्व कोई हो तब भगवानने कह्यो कि जो तुमको मेरे सम्बन्ध से लज्जा न हो तौ मैं तुम्हारो बान्धव जनम्यो हौं तामें बात्सल्य वारी यशोदा को शुकदेवजी बोले

१—दशमे श्रुत्वैतद्भगवान् पमेति कृष्णं चैकंगतंहर्तुं कन्यां कलहशंकितः बलेनमहतासार्द्धंभ्रातृस्नेहपरिप्लुतः त्वरितः कुण्डिनं प्रायाद् गजाश्वरथपत्तिभिः।

२—दशमे अजातशत्रुः पृतनां गोपीथायमधुद्विषः॥ परेभ्यः शङ्कितः स्नेहात्प्रायुङ्क्त चतुरङ्गणी।

१ यह गोपिका के बेटा कृष्ण जैसे भक्तिवारेन को सुख पूर्वक मिलैं हैं तैसे ज्ञानियोंको-औआत्मभूतनको नहीं मिलें और यसोदा के तौ बेटा ही हैं सख्यरस वारिनको भाग्य श्रीमद्भागवत में है२ जिन श्रीकृष्णकी चरणरज बहुत कष्ट करके मन जिनने बश कियो ऐसे योगियों को भी दुर्लभ है सो उन बालकोंके नेत्रन के आगे विराजै अहोब्रज के सखावों के का भाग्य वर्णन करैं कान्त३ भाव वारियोंकी महिमा लक्ष्मी जी से भी अधिक श्रीउद्धवजी ने वर्णनकरी याप्रकार परम स्नेह वारे ब्रजभक्त हैं तासे दृढ पुत्र भाव श्रीनन्दयशोदा के होवे से उन्हींके पुत्रहैं अब उन्हीं श्रीकृष्णके आचार्य निम्बार्क भगवान जन्मकर्मादि वर्णन करैं हैं

१—दशमे नायं सुखापो भगवान् देहिनां गोपिकासुतः ज्ञानिनां चात्मभूतानां यथा भक्तिमतामिह ।

२—श्रीमद्भागवते दशमस्कंधे यत्पादपांसुर्बहुजन्मकृच्छ्रतो धृतात्मभिर्योगिभिरप्यलभ्यः । स एव यद्दृग्विषयः स्वयं स्थितः किं वर्ण्यते दिष्टमहो व्रजौकसां ।

३—दशमे नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्तरतेः प्रसादः स्वर्योषितां नलिनगन्धरुचां कुतोऽन्याः ।

जन्मकर्म१ गुणरूपयौवन कवि आपके दिव्य बतावैं हैं आपचित मंगलके स्थान हौ यहवेद को वादपायो जाय है गीताजीमें भी भगवान ने कह्यो २जन्मकर्मगुणरूप मेरे दिव्य हैं ऐसे जोतत्व करके मोको जानै सो देह छोड़ के मोकोप्राप्त होय संसारमें नहीं आवै जन्म१ कर्म२ गुण३ रूप४ यौवन५ नाम६ लीला७ धाम८ इत्यादि तामें पहिले जन्म वर्णन करै हैं श्री वसुदेवके घर श्री नन्दके घर

वसुदेवकेघर जैसेश्रीमद्भागवतमें ३आधीरातउत्कट अंधकारमे जबसबजनोंकी उत्कट याचना भयी तासमय सबहृदयरूपीगुहामें बिराजैजोविष्णूदेव रूपीदेवकीकेविषयप्रगटभये जैसेपूर्णचन्द्रमापूर्व

१—श्री निम्बार्क वाक्य जन्मकर्म गुणरूपयौवनं दिव्यमेवकचयो वर्ततेने ॥ श्रौतवादुपलभ्यते तथा चानिर्विशेषं चन्मंगलालये ।

२—श्रीमद्गीतासु जन्मकर्मचमेदिव्यमेवंयोवेत्तितत्त्वत ॥ त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्मनैतिमामेति सोऽर्जुन ।

३—श्रीमद्भागवतेदशमे निशीथेतमउद्भूते जायमानेजनार्दने देवक्यां देवरूपिण्यां विष्णुःसर्वगुहाशयः ॥ आविरासीद्यथा प्राच्यां दिशीन्दुरिवपुष्कलः ।

दिशामें प्रगटहोय २ नन्दके घरमें तहांही श्री भागवतमे गोपियोंने जबयशोदाके सुतउत्पन्न भयोयहसुनी बड़ेहर्षको प्राप्तहोके बस्त्रभूषणअंजनादिकसे अपनीआत्मा कोभूषित करतीभयी नवीनकुंकुमकी परागतासे मुखकी शोभा अथवा नवीनकुंकुमके परागकीसी मुखकमल कीकांति जिनकोबधाई समयकीभेटलेके बडी जल्दी नन्दघर जातीभयीपुष्टनितम्व चलायमान कुच जिनके अब रूप वर्णन करैं हैं रूपनामविग्रह जो सच्चिदानन्द घनतामें सुन्दर रमणीय अंगों का यथावत निवेश और शोभा तामे पहिले भगवद्विग्रहसच्चिदरूप है ताको सिद्धांत श्रुति स्मृतिके प्रमाणसे श्रीमदाचार्य ग्रंथ कर्तावर्णन करैं हैं और जो मायासे भ्रम पायके अन्यथा विवाद करैं है उन को निरास भी है

---

२ दशमे गोप्यश्चाकर्ण्य मुदिता यशोदायाः सुतोद्भवम। आत्मानं भूषयांचक्रुर्वस्त्राकल्पां जनादिभिः नवकुङ्कुमकिञ्जल्कमुख पङ्कज भूतयः। वलिभिस्त्वरितं जग्मुः पृथुश्रोण्यश्चलत्कुचाः

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अथविग्रहस्य नित्यत्वेश्रुतयः आदित्य वर्णं तमसः परस्तात् यदा पश्यः पश्यतेरुक्मवर्णं ऋतं सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्ण पिंगलम् विश्वतश्चक्षुः सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् पादोऽस्य विश्वा भूतानित्रिपादस्या मृतंदिवि। तस्माद्विराडजायत वेदाहमेतं पुरुषं महांत यएषोंतरादित्ये हिरण्मयः पुरुषोदृश्यते एकोनारायणा सीन्नब्रह्मा न च शंकरः पुराकल्पायायेस्वकृत मुदरी कृत्यविकृति शेते य थोर्णनाभिः सृजते गृह्णते चेत्याद्याः एवं चावतार विग्रहाः सर्वेपि नित्याएव तथाहि अंतरतः कूर्मपर्यंतं इत्यारभ्य पूर्वमेवाहमिहा समति तत्पुरुषस्यपुरुषत्व मिति च श्रुतेः किंचआनन्दरूपम मृतंयद्विभातिआ

भाषाकांतिप्रकाशिका।

भगवद्विग्रहके नित्यतामें श्रुति आदित्य वरणातमसे परे जा समय देखवे वारो सुवर्ण वर्ण ऋतसत्य परब्रह्म पुरुष कृष्णा पिंगलकोदेखै है सब ओर चक्षु हजारों सीसको पुरुष हजारों नेत्र हजारों पांव चरण में जाके विश्व के भूत मात्र त्रिपादको अमृतस्वर्गमें तासेविराड उत्पन्न भयो या महांत पुरुषको मैं जानूं हूं आदित्यके अंतर यह हिरण्मय पुरुष दीखै है एक पहिले नारायण हीरहे नब्रह्मा नमहादेव पहिले कल्पके अंत में सब विकार को उदरमें धरके सोवै है जैसे मकड़ी जाला रचै और निगलै इत्यादिक याहीप्रकार

अवतार विग्रह भी सबनित्य हैं तैसे ही अंतरते कूर्मपर्यंत आरंभ करके पहिलेमें ही यहांहो सोपुरुष को पुरुषपनो है यह श्रुति आनन्द रूप अमृत जो प्रकाश पावै है नखतें लेके सब आनन्दरूप है कौन आत्मक भगवान है यह प्रश्न होतसंते

सिद्धांतरत्नमालिपूर्वार्द्ध

प्रणवात्मत्वमेवानन्दः किमात्मको भगवान् ज्ञानात्मक ऐश्वर्यात्मक इत्यादि श्रुतेर्भेदाभावेपि अहिकुण्डलन्यायेन विग्रहवत्त्वोपपत्तिः एवं प्र संख्याकानां श्रीगोपीनां रासमण्डले एकस्मिन्नेवक्षणे श्रीकृष्णस्या नेक दर्शनादेकस्यापि तस्या वतारिण अनेक रूपवत्त्वोपपत्तिः । यत्तु चन्द्रमण्डलगता मृत लक्षुा तत्या पे न चेतनेतरानधिष्ठित भौतिक देह समवेतत्व मित्यवतार विग्रहेष्वयं विशेषइति स्वीकृत्य दध्यौ ब्रह्म पर विष प्रविश्य यमुनाजल मित्यारभ्य सतुरान पतिक्लदेत्यंत विष्णु पुराणं चोदाहृत्य इति मामनुरूप देहकर्थांचिता । प्राकृतदेह परमेश्वर ज्ञानमक्रूरस्य जातं इदं च दिव्य रूपं कदाचिदक्रूरोद्धवादि प्रथम भागवतैर्दृश्यते

भाषाकान्तिप्रकाशिका

ज्ञानात्मक ऐश्वर्यात्मक यह उत्तर है इत्यादि श्रुति करके यद्यपि देह देहीमें भेद नहीं है तथापि सर्प कुन्डलन्याय करके विग्रहकी उपपत्ति है जब कुन्डल आकार सर्प रह्यो तब कुछ अन्य वस्तु मिलाई नहीं गयीं जासे कुण्डल प्रतीतभयो सर्पको शरीर मात्रहै जब सर्प लम्बो भयो कुण्डल नरह्यो तब कुछ यामेसे निकर न गयो ऐसे ही असं

रूप्य श्रीगोपियों के रासमण्डलमें एकही क्षणमें एक हीकृष्ण के अनेक रूपदर्शन होते भये साक्षात अवतारी श्रीकृष्ण से अनेकरूप होजानो असंभव नहीं है और कोई एकको ऐसो प्रलाप है कि जैसे चन्द्रमन्डलमें अमृत को संघात है ता न्यायसे भगवानके सिवाय चेतन तौ और है नहीं परभौतिक देहको अवतार विग्रह में मिलाप है यह विशेष है यह स्वीकार करके हे विप्र अक्रूर यमुना जल में प्रवेश

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

भौतिकतुसर्वैरिलिकस्यचित्प्रलापः तदसत् श्रीमद्भागवतादि विरोधात् तथाहि अस्यापि देववपुर्षोमदनुग्रहस्यस्वेच्छामयस्यनतु भूतमयस्यकोपि नेशोमहित्ववसितुमनसांतरेणसाक्षात्तवैव किमुतात्मसुखानुभूतेरिति वृहद्वैष्णवेच योवेत्तिभौतिकंदेहंकृष्णस्यपरमात्मन ससर्वस्माद्बहिः कार्यः श्रौतस्मार्तविधानतः मुखंतस्यावलोक्यापि सचैलंस्नान माचरेत इति महाभारतेपि नभूत संघ स स्थानोदेहोस्य परमात्मनइति ।

भाषाकान्तिप्रकाशिक

होके परब्रह्मको ध्यान करतो भयो यहां ते आरम्भ करके सो दानपति या अंतपर्य्यंत विष्णु पुराण को उदाहरण करकें मनुष्य देह से वंचित नहीं अप्राकृत देह परमेश्वर ज्ञान

अक्रूर को उत्पन्न भयो इति यह दिव्य रूप कबहूं अक्रूर उद्धवादिक परमभागवतोंकी दिखाई पड़े हैं भौतिक देह सब देखैं हैं यह उन को कहनो असत है श्रीमद्भागवतादिक से विरोध पडे है सोई दशमस्कन्द में ब्रह्माजी बोले हे देव मेरे ऊपर कृपा करके जो यह अवतार वपु आपने प्रकाश कियो यह स्वभक्तों की इच्छा मय है भूतमय नहीं है कोई भी अथवा ब्रह्मा भी मन अंतर करके याही की महिमा जानवे को सामर्थ्य नहींहै। यहवपु शुद्ध सत्वमय अर्थात चिदानन्द है, तब फिर अपने सुखको अनुभव जामें ऐसे आप अवतारी की महिमा न जान सकै ताकोका कहनो। बृहद्वैष्णवमें भीजो कोई कृष्ण परमात्मा को भौतिक देह जाने है, सो सब श्रौत स्मार्त विधानते बाहिर करवे योग्य जो वैष्णव

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

प्राकृतत्वस्योपाधित्वाच्च नमेतंगोविंदंसच्चिदानन्दविग्रह सन सो पुरुषः काशंनाभिध्याने प्रतिष्ठितं दुर्दर्शमतिगंभीरमजंस्यामचि- न्मात्रद इत्यादि श्रुतिभ्यश्च।

ताको मुख देख लेय तौ सचैलस्नान करै। महाभारत में भी इन परमात्मा को देह भूतों के समूह को नही है १ताहीं श्रीअङ्कके उद्देश्य से शुकदेवजीने कह्यो जाको अंतर नहीं बाहिर नहीं जाको पूर्व नहीं पश्चिम नहीं पूर्वपश्चिम बाहर भीतर जगत जामें और जगतरूप जोता अव्यक्त मनुष्याकार अधोक्षज को जैसे कोई प्राकृत को बांधै तैसे बांधलियो या श्लोक से अप्राकृतता सिद्ध है प्रेम पराधीन चिदानन्द को प्रेम से यशोदा ने बांध लियो। श्रुति में भी है गोविन्द सच्चिदानन्द विग्रह अतसी पुष्प सो वरण नाभिस्थानमें प्रतिष्ठित दुर्दर्श अतिगंभीर अजन्मा श्याम विशारद इन प्रमाणों से कोई सन्देह नहीं।

रूप दो प्रकारको मथुरा द्वारिका में चतु-र्भुज व्रजमें दोभुज तामें पहिलो मथुरामें जन्म

१—श्रीमद्भागवत नचान्तर्न बहिर्यस्य न पूर्वं नापिचापरं ॥ पूर्वापरं बहिश्चान्तर्जगतो यो जगच्च यः तंमत्वा ॥ त्मजमव्यक्तं मर्त्य-लिङ्ग मधोक्षजम् ॥ गोपिको लूखलेदाम्ना बबन्ध प्राकृतंयथा ।

१ ताश्चद्भुत बालको वसुदेव जी दखते भये कमलवत नेत्र जाके चार भुजा शंख चक्र गदा आयुध उठाये श्री वत्सको चिन्ह गले से कौस्तुभकी शोभा पीतवस्त्र निवीड वादरसो सौभग महा अमोल वैदूर्य्यमणि के किरीट कुन्डलतिन की सहस्र कांति केशों पर पडी उदार कांची कंकणादि करके विरोचमान विराजमान है द्विभुजयथा भागवतेदशमे२मोरको मुकुट नटवर वपु कानन में कर्णिका सुवर्णवत चटकीलो पीताम्बर पांच वरणों के फूलों की माला वै जयन्ती पहिरे वेणु के छेदों को अधर- सुधा से पूरते गोप-सखा कीर्ति गावें तिन के समूह को संग लिये अपने चरण के सुख देवे वाले बृन्दावन में प्रवेश होतेभये श्री अंगके लक्षण वर्णनकरें

१—श्रीमद्भागवतेदशमे तमद्भुतबालकमं बुजे क्षणंचतुर्भुजं शंखगदार्युदायुधम् श्रीवत्सलक्ष्मं गलशोभिकौस्तुभंपीताम्बरं सान्द्रपयोदसौभगम् महार्हवैदूर्य किरीट कुन्डल त्विषापरिष्वक्त सहस्रकुन्तलम् उदामकांच्यं गदक कणादिभिर्विरोचमानंवसुदेवरोक्षत ।

२—द्विभुजयथातत्रैव बर्हापीडंनटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारंविभ्रद्वासः कनिककपिशंवैजयन्तीच मालाम् रन्ध्रान्वेणोरधरसुधयापूरयन्गोपवृन्दैः बृन्दारण्यं स्वपदरमणं प्राविशद्गीतकीर्त्तिः ।

श्रीकृष्णाके श्रीअङ्गमें बत्तीस महतलक्षण हैं श्री अङ्गके सात स्थान में रक्तिमां(ललाई) छय अंग में तुङ्गता(उचाई) तीन अङ्गमें विस्तार तीन अङ्गमें खर्वता(छुटाई)तीनअंगमेंगम्भीरता पांच अंगमें दीर्घता पांच स्थानमें सूक्ष्मता सोई कात्यायनसंहिता में नेत्रके अंतमें हाथ चरण के तलमें तालूजिह्वा अधरोष्ठ नखइन सातस्थान में ललाई वक्षस्थल स्कंध नख नासिकाकटि मुख इनछय स्थलमें उचाई नासा भुज नेत्र हनु (कपोलकोपरिभाग)जानु इन पांच अंगमें दीर्घता त्वचा केश लोमदांत हाथो के अंगुरी के पर्व इन पांच स्थल में सूक्ष्मता तथा वक्षस्थल भालकटि इन तीन अंग में विस्तार ग्रीवाजंघा तथा शिश्न इन तीन अंगमें खर्वता छुटाई नाभि स्वर बुद्धि इन तीन अंगमें गम्भीरता ये बत्तीस लक्षण महतपने के कृष्णाके श्री अंग में है

३—तथाकात्यायने अक्ष्यंतहस्तांघ्रितलेषुतालुजिह्वाधरोष्ठेषु-नखेषुशोण्यं वक्षः स्कन्धक घननखेषुना साकट्याननेषून्नमताक्ष्यप्य दीर्घजानुचक्षुर्हनुनासिकासुदैर्घ्यं तथा सूक्ष्मतदोपलक्ष्याः त्वक्केशदंतां गुलिहस्तांगानाम्पर्व पृथ्वीवक्षसिभालकट्योः तानसग्रीवान्खर्वतयान् सुकाग्रीवाचजंघाचतथाचमेहनं नाभिः स्वरसत्वः गम्भीरांगश्रीराधा-त्रयादेतानिसुलक्षणानि।

भाषा कांति प्रकाशिका

१दशममे हस्त कमल की शोभा अक्रूरने वर्णन करी जाहस्तकमलकी इन्द्रपूजा करते भये और बलि महाराज जाकी पूजा करके तीन जगत की इन्द्रता पावते भये मुमुक्षुवोंको संसार भय दूर करवे वालो सकामियोंको अभ्युदय देवे वालो और रासक्रीडाके विहार में सौगन्धिक कमल कीसी सुगंधी जामें आवैं ऐसे करकमल गोपियों के मुखको श्रमजल पोछैं २तहां ही चरण कमल वरणन कियो जाचरण कमलको ब्रह्मा महादेवादिक देवता अर्चन करैं ऐसे परम ऐश्वर्य वारो लक्ष्मी देवी पूजा करैं यह अतिशय सौभाग जाको मुनि भागवतों के सहित अर्चन करैं ऐसो परमपुषार्थ रूप है औरसखावोंसहित जो चरण गाय चरायवे जाय यह

१—श्रीमद्भागवते दशमे । समर्हणंयत्र निधाय कौशिकस्तथा बलिश्चाप जगत्त्रयेन्द्रतां । यद्वाविहारे व्रजयोषितां श्रमंस्पर्शेनसौगंधिक गंध्यपानुदत्

२—तत्रैव यदर्चितं ब्रह्म भवादिभिः सुरैः श्रियाचदेव्यामुनिभिः ससात्वतैः गोचारणायानुचरैश्चरद्वनेयद्गोपिकानां कुचकुंकुमाङ्कित

दयालता वर्णन करी और जो गोपियों के कुच कुमकुम करके अंकित यह माधुरी कही सो चरण प्रेम मात्र से सुलभ हैं चरणचिन्ह यथा दक्षिण चरणमें ग्यारह ध्वजा१ पद्म२ वज्र३ अंकुश४ यव५ स्वस्तीक६ ऊर्द्धरेखा७ अष्टकोण८ शंख९ चक्र१० छत्र११ वामचरण में आठ त्रिकोण१ कलश२ अर्द्धचन्द३ अम्बर४ गोष्पद५ मत्स्य६ जम्बूफल७ इन्द्रधनुष दोनोंचरणमें१९

१चरणरजकी महिमा वर्णन करैं हैं श्री मद्भागवत दशममे श्रीलक्ष्मी जिनने वक्षस्थल में स्थान पायो तुलसी सहित जिन के चरण कमल रजकी चाहना करै और दास सब सेवन करैं जालक्ष्मीकी कृपा कटाक्षके अर्थ और देवता प्रयास करैं हैं गोपी कहैं हैं तैसेही हम भी तुम्हारे चरण रजकी प्रपन्न हैं अब कर्म वर्णन करैं २एकदशमेकर्म पुण्य प्राप्त करायवेवाले तत्काल

२—श्रीमद्भागवते एकादशे कर्माणि पुण्यनिवहानि सुमंगलानि गायज्जगत्कलिमलापहराणि कृत्वा। कालात्मनानिवसताय दुदेव गेहे पिण्डारकं स मगमन्मुनयो निसृष्टाः

१ श्रीर्यत्पदांबुज रजश्चकमे तुलस्या लब्ध्वापि वक्षसिपदं किलभृत्यजुष्टं। यस्याः स्ववीक्षण कृतेन्यसुर प्रयासस्तद्वद्वयंचतवपाद रजः प्रपन्नः

सुख देवे वाले कलियुग के मल हरवेवाले सब जगत गावै ऐसो करके कालात्माभगवान यदु देव उग्रसेन के घर वशते भये और मुनिपिंडा कर्में बसते भये अश्व मेधादिक कर्म पुण्य उत्पन्न करें परतत्काल सुख नहीं होय पुत्र लालनादि से ततकाल सुख होय परपाप नष्ट नहीं होय प्रायश्चित्तादिकों से पाप नष्ट होय पर दुर्वासना नहीं जाय भगवत कीर्तनादिक से ततकाल पुण्य होय सुख होय सब पाप नष्ट होय समूल वासना जाय और सो भजन रूपी पुण्य नाशमान नहीं सोई १ दशम के अंत में शुकदेवजीने कह्यो या प्रकार हरिने अपने भक्ति धर्म रक्षाके अर्थलीला मूर्ति प्रगट करी और ताके अनुरूप विडम्वन कियो वेकर्म

हरि के संसारी कर्मों के नाश करवे वाले हैं तासे जाके उन के चरणों के आनन्द लेवे की इच्छा होय तो पदूत्तम के गुण कर्म सुनै वे

१—दशमे । इत्थंपरस्य निजधर्मरिरक्षयात्त लीलातनोस्तदनुरूपविडम्बनानि । कर्माणि कर्मकषणानि यदूत्तमस्यश्रूयादमुष्यपद योरनुवृत्ति मिच्छन्

कर्म जैसे गिरधारण अघविदारणादि इन एक एक में परमाद्भुतता भरी है अघासुर के पेट में भोजन के छीके लेके सब सखा सहित आप गये पर जठरा अग्निसे सखादिकोंको का चर्चा भोजन की सामिग्री भी न विगडी योगियों के ध्यान में न आवै सो साक्षात पेट में गये असुर की ज्योति श्री अंग में प्राप्त भई ऐसे सब कर्म अलौकिक आत्मा की महिमा को प्रगट करैं हैं गुण यथा प्रथम स्कन्धमें पृथ्वी जीने वरणानकिये १सत्यनाम यथार्थ बोलनो २शौचअर्थातशुद्धता ३दयापरायोदुखनसह्यो जाय ४क्षांतिनामक्रोध आये पर भी चित्त संयम करलेनो ५त्यागनाम मांगवे वाले को हाथ से देनो ६संतोष नाम अलं-बुद्धि ७आर्जवनामसरल स्वभाव ८शमनाम मन निश्चल करनो ९दम नाम बाहिर की इन्द्री निश्चल करनो १०तप नाम अपनो धर्म आच-रण करनो ११साम्य नाम जाके वैरी मित्र न

१-श्रीभागवते प्रथमस्कन्धे। सत्यं शौचंदया शान्तिस्त्यागः सन्तोषआर्जवम्। शमोदमस्तपो साम्यंतितिक्षोपरितिः श्रुतं। ज्ञान विरक्ति ऐश्वर्य्य शौर्यतेजोबलस्मृति

होय १२तितिक्षापरायो अपराध सहनो १३ उपरतिनाम मिलती वस्तुमें उदासीनता १४श्रुते शास्त्रको विचार १५ज्ञानआत्म विषयः १६विरक्ति नाम तृष्णा न होनी १७ऐश्वर्यनाम सबकोनियम न करनो १८शौर्य संग्रामको उत्साह १९ तेज नाम प्रभाव २० वलनाम दक्ष होय स्मृत नाम करवेयोग कर्मको अनुसन्धान

स्वातंत्र्यं कोईके२२आधीन न होनो २३ कौशलं अर्थात क्रियाकी निपुणाता २४कांति नाम सौन्दर्य२५धैर्यनामव्याकुल न होनो २६ मार्द्दव नाम चित्त कठोर न होनो २७प्रागल्भ्य नाम अतिशय प्रतिभाको है २८प्रश्रयनाम नम्रता २९शील नाम सुन्दर सुभाव ३०सहनाम मनकी पुष्टता ३१ओज नाम ज्ञानइन्द्री की पुष्टता ३२वल नाम कर्मइन्द्रीकी पुष्टता ३३भग नाम भोग मिलनो ३४ गाम्भीरता क्षोभ न होनो ३५ स्थैर्य्य नाम चंचल न होनो ३६आस्तिक्यनाम श्रद्धा ३७कीर्त्ति नाम यश ३८मान अर्थात पूज्य-पनो ३९अनहंकृति नाम गर्व न होनो ये और भी

महागुण जिनकी बड़े बड़े महत चाहना वारे प्राप्तिकी इच्छा करैं हैं सो श्रीकृष्णमें नित्य वसै हैं दया में शरणागतको पालन और भक्त सुहृदय ताभी आयगयी वलमें दुष्कर और क्षिप्रकारी पनो भी आयो तेजमें प्रताप व प्रभावभी आय गयो कांति में नारीगण को मन हरनो भी आगयो मार्दवमें प्रेम के वश होनो भी आयगयो प्रगल्भ्यमें वावदूकपनो प्रश्रय में लज्ज्या मान देनो भी आयगयो तथा मीठो बोलनो शीलमें साधुवों को आश्रय देनो भी आयगयो आस्तिक्य-में शास्त्र चक्षूपनोभी आयो और भी गुण वैरिन को मारके गतिदेनो आत्माराम मुनियोंको आक र्षण करनो यह है जगतके पालनादिक पहिले कहि आये हैं १सुधर्माध्ववोधमें लिखा है किऔर जीवमें येगुण दुरावेश हैं होंय तौ कहूं आभासमात्र होय और कृष्ण में सूर्य समान प्रकाश पावैं है

स्वातंत्र्य कौशलंकांति धैर्यमार्दवमेवच । प्रागल्भ्यं प्रश्रयशीलं सहओजोबलं भगः । गांभीर्यं स्थैर्य्य मास्तिक्य कीर्तिमानोऽनहंकृति एतेचान्ये च भगवन्नित्या यत्र महागुणाः । प्रार्थ्यामहत्त्व मिच्छद्भि-र्नवियंतिस्मकर्हिचित् । सुधर्माध्ववोधे । २गुणीनामीदुरावेशाज्जीवे-ष्वाभासिताः क्वचित् । सूर्या इव प्रकाशंते तस्मिन् सर्वेश्वरेश्वरे

ब्रज के नटवर वेषमें द्वारिकादि रूप से माधुरी विशेष है तासे लीला विलाससे पूर्णतमता नन्दनन्दन को है। वेणु बजानो और प्रेमसे प्यारियोंके वश व आधीन होनो यह ब्रज के ठाकुर में अनोखोपनो है। यद्यपि मथुरा द्वारिका ब्रज में एक ही स्वरूप की लीला है पर जहांके भक्तों को जैसो प्रेम तैसी ही माधुरी प्रकाशै है। अब उत्कृष्ट गुणोंके उदाहरण दिखावैं हैं १कानोंको प्यारो गुण सहित वाक्यता को मीठो बोलनो व वावदूक कहैं दशममें गोपी कहैं हैं हे कमल लोचन तुम्हारी मधुर गिरा और मनोहर वाक्य बड़े बुद्धिमानों के मन हरैं अथवा अज्ञान कोभी मन खैंचलेंय तासे हम विधिकरी अर्थात टहलनी मोहित भयी तासे हमको अधरामृत प्यावो २ दक्ष दुष्कर अर्थात कोई पर न होसकै ऐसा कर्म

१- श्रीमद्भागवते दशमे मधुरया गिरावल्गुवाक्यया बुधमनोज्ञया पुष्करेक्षण: । विधिकरीरिमावीर मुह्यतरधरसीधुनाप्याययस्व न:

२- तत्रैव उत्तरार्द्धे दशमे यानियोधैः प्रयुक्तानि शस्त्राणि च कुरूद्वह । हरिस्तान्यच्छिनत्तीक्ष्णैः शरैरेकैकशस्त्रिभिः

पैलेपाराशर वाक्यं । रासमण्डल बन्धोऽपि कृष्णपार्श्वं मत्जिता । गोपीजनेन नैवा भूदेक स्थान स्थिरात्मना

करै और जल्दी करै ताको दक्ष कहैं नरकासुर के संग्राममें ताके योधाबों ने जोजो शस्त्र चलाये उन के चलाये पीछे आपने चक्र चलायो ताको माथो काटके फिर तीन तीन तीक्षण बाणों से बे शस्त्र बीचमें ही काट दिये आपके पास तक नहीं आवन पाये पाराशर जीने कह्यो रासमें श्री कृष्ण ऐसे जल्दी नृत्य करते भये कि एक ही कृष्ण सब रास मण्डलीकी गोपियों को अपने अपने निकट प्रतीत होते भये

१कृतज्ञ थोड़ी भी सेवाकरी भयी को जो बहुत मानलेय सो कृतज्ञ है महाभारत में श्रीकृष्ण बोले कि जा समय द्रोपदी को दूशासन ने वस्त्र खैंचो मैं दूर रह्यो द्वारिका में टेर सुनी यद्यपि वस्त्र बढ़ायके उनकी लाज रखदीनी तौ भी हे गोविंद यह ऊंचे स्वरसे बुलायवेको ऋण मेरे हृदय में बढ़ रह्यो है कोई रीतिसे निकरै नहीं

१—महाभारते ऋणमेतं प्रवृद्धंमे हृदयान्नाप सर्पति । यद्गोवि न्देति चुक्रोश कृष्णामां दूरवासिनं

१वशी जाने इन्द्री जीत राखीं ताको वशी कहैं सोई भागवत के प्रथम स्कंध में लिखो है श्री कृष्णा की स्त्रीद्वारिका में पटरानी यद्यपि अति-शय प्रभाववारी तौभी तिनके गम्भीर भावकी सूचन करनवारी निर्मल मनोहर हास और लज्जया की चितवन जासे काम से रहित श्रीमहादेवने भी वश होके अपनो धनुष त्याग कियो पर वे उत्तम स्त्री अपनी विभ्रमादि चेष्टा के द्वारा श्रीकृष्ण की इन्द्रीमथन करवेको समर्थ नही होतीभयी

२समः रागद्वेषसे जो छुट्यो होय ताको सम कहैं दशममें नागपत्नी बोलती भयीं हे श्रीकृष्णा या अपराधी काली पर जो तुमने दन्ड कियो सो न्याय ही भयो काहेसे कि आप को अवतार दुष्टोंको दन्डके अर्थ है और आप की शत्रु व पुत्रमें समानदृष्टि है दन्डभी देवो

१—वशी श्रीभागवते प्रथमस्कन्दे। उद्दाम भाव पिशुनामल वल्गुहास व्रीडावलोक निहतो मदनोऽपियासां। संमुह्यचापमजहात् प्रमदुत्तमास्ता यस्येन्द्रियं विमथितं कुहकैर्नशेकुः

२— सम श्रीमद्भागवते दशमे न्याय्योहिदण्डः कृतकिल्बिषे ऽस्मिंस्तवावतारः खलनिग्रहाय। रिपोःसुतानामपि तुल्यदृष्टिर्धत्सेदमं फलमेवानुशंसन

तौ भी लाभही होय है १दया आश्चर्यको बात है पूतना स्तनमें विष लगायके श्रीकृष्णाकेमार वेके अर्थपान करावती भयी यद्यपि महाखोटी है पर ताको भी आपधाय की गति देते भये तौ उनसे विशेष और कौन दयालू है जाकी हम शरण जावैं २सुहृत सुहृत दो प्रकारको एक तो भक्तके १वचन की रक्षा करनो दूसरो भक्तोंको सुलभता तामें पहिले भक्त वचनकी रक्षा श्री भागवत के प्रथम स्कन्धमें भीष्मजी बोले कि अपनी वेदरूप प्रतिज्ञाछोड़केमैंने जोप्रतिज्ञा करी कि श्रीकृष्णाको शस्त्र ग्रहण कराय देवें ताको सत्य करते भये रथसे नीचे कूद के रथ को पैहा अथवा चक्र हाथमें लेके जैसे हाथीके मारवे को सिंह आवै मेरे वधको आवते भये तासमय पृथ्वी चलायमान होती भयी पीताम्बर उतरगयो

१—दया तृतीयस्कन्दे अहोबकीयंस्तनकालकूटं जिघांसया पाययदप्यसाध्वी । लेभेगतिंधात्र्युचितां ततोऽन्यंकं वादयालुं शरणं व्रजेम

२सुहृत भक्तवचन रक्षा प्रथम स्कन्दे । स्वनिगम मपहाय मत्प्रतिज्ञामृतमधि कर्तुमवप्लुतोरथस्थः धृतरथ चरणो भ्याश्चलद्गुर्हरि रिवहंतुमिभंगतोत्तरीयः

भक्तसुलभ विष्णुधर्म में १तुलसीदलमात्रसे और एक चुल्लू जल प्रदान करवेसे भक्तवत्सल हरि अपने भक्तोंको अपनी आत्मापर्यंत वेच देंयहैं २भक्तोंकीरक्षा श्रीअर्जुन श्रीयुधिष्ठिर जी से बोले कि जो दुर्वासाऋषि दस हजार चेलों की पंक्तिलेके भोजन करैं सोहमारेवैरि योंके पठाये आये तब श्रीकृष्ण वन में आके वाभयंकर भयसे हमारी रक्षा करते भये अर्थात निमंत्रण करके भोजन करायवेकी वा वन में हमारी सामर्थ्य नहीं रही द्रौपदी भोजन कर चुकी वास्थाली सूर्यकी दीभयी जामें द्रौपदी के भोजन करें पीछे वादिन एकदाना न निकरै सो टोकनी मंजगयी श्रीकृष्णने वाईटोकनीमें एक शाक को पत्तालगोदिखायो द्रौपदी के हाथसे वाशाक के पत्ता को संकल्प पढ़वायके

विष्णुधर्मे तुलसीदलमात्रेण जलस्य चुलकेनच । विक्रीणीतेस्व मात्मानंभक्तेभ्यो भक्तवत्सलः

२— भक्तारक्षा प्रथम स्कन्धे श्री भागवते । योनोजुगोप वनमेत्य दुरन्तकृच्छ्राद् दुर्वाससोऽरिविहिता दयुताग्रभुग्यः शाकान्नशि ष्टमुपयुज्य यतस्त्रिलोकीं तृप्ताममंस्त सलिले विनिमग्नसंघः

विश्वात्माभगवान पूर्ण होजाय यहमंत्र द्रोपदीजी से कहवायके आप हाथमें लेके भोजन करगये तौ दुर्वासा सहित सबके पेट ऐसे भर गयेकि जल में स्नान करैं जो मुनिगण को समूह सो अपनी तौ का बात सब त्रिलोकीको तृप्त मानते भये

१ऐश्वर्य तृतीयस्कन्दने स्वयंत्रिलोकीके अधीश जिनके बराबर कोई नहीं अतिशयकोई कहांसे आवै अपने स्वाराज्य लक्ष्मीसे समस्त काम प्राप्तभये भेंटके देवे वाले ब्रह्मादिक लोक पाल अपनी किरीटकी कोटि से सदा चरण चौकी को दन्डवत करैं २व्यूहनाम अवतार जाके अंग है सौ श्रीजयदेव कृत गीत गोविन्दमें मत्स्य रूपसे वेद उद्धार किये कच्छप

१— ऐश्वर्य श्रीमद्भागवते तृतीय । स्वयन्त्व साम्याति श यस्त्र्यधीशः स्वाराज्य लक्ष्म्याप्तसमस्तकामः । बलिंहरद्भिश्चिरलोक पालैः किरीट कोटीडित पादपीठः

२- व्यूहाङ्गी गीतगोविन्दे । वेदानुद्धरते जगन्निवहते भूगो लमुद्बिभ्रते। दैत्य दारयते बलिंछलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते। पौलस्त्यं जयतेहलंकलयते कारुण्य मातन्वते म्लेच्छान्मूर्च्छयतेदशाकृतिकृते कृ ष्णाय तुभ्यंनमः

रूपसे पीठ पर पर्वत धारण कियो वाराहरूप से पृथ्वी उद्धार करी नृसिंहरूपसे हिरण्यकश्यप को वक्षस्थल फाड्यो वावनरूपसे बलको छल्यो परशरामरूप से क्षत्री नाश किये रामरूप से रावण मारो बुद्धरूप से पशूवों पर कृपा करी बलराम रूप से हल गृहण कियो कल्किरूप से म्लेच्छ संहार किये ऐसे दशरूप धारणकरवे वाले कृष्ण तुम्हारे अर्थ नमस्कार है सब १ अवतारों के ऊपर विराजै सो अवतारी जानौ सोई श्री भागवत प्रथम स्कन्द में कही जो२ ये अवतार वर्णन किये कोई पुरुष नारायणके अंश हैं कोई कला हैं और श्रीकृष्ण तौ स्वयं भगवान अवतारी हैं सोई ब्रह्मसंहितामें रामादि मूर्तिमें कला नियम करके बसते भये

२और भुवन में नाना प्रकारके अवतार करते किंतु कृष्णरूप तौ स्वयं परं पुरुष आप

१— सर्वावतार राज्यष्टि। सर्वावतार राज्यष्टिरवताय व लभ्यते। श्रीभागवते एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान स्वयं

२—ब्रह्मसंहितायां। रामादि मूर्त्तिषुकला नियमेन तिष्ठन् नानाव तार मकरोद्भुवनेषु किंतु। कृष्णः स्वयं सम भवत्परमः पुमान्यो गोविन्दमादि पुरुषं तमहं भजामि

ही होते भये ऐसे गोविन्दआदि पुरुषकों में भजन करों हौं १ विरक्तव उपरति प्रथम स्कंद में श्री कृष्ण प्रकृतिके प्रपंचमें रहकेभी ताके गुणों से अलग रहैं यह ईश को ईश्वर्य है व्यतिरेक में दृष्टान्त है प्रकृति आश्रय वाली बुद्धिको जैसे जीवको ज्ञान योग्य पावैं है तैसे नहीं अथवा आश्रय जो भागवत तिनकी बुद्धि प्रपंचमें पड़ी भी प्रकृति के गुणों में जैसे नहीं लगे तैसे नहीं लगे जिनको स्त्री प्रेम के मोह से अपनो अनुव्रत नाम टहलुवामानती भयी और स्त्री लम्पट जानती भयीं अपने भर्ताको प्रमाण नहीं जानके ईश्वर को अपनी मतिके अनुसार जानती भयीं एकादशस्कंधमें२ भगवान विश्व की आत्मा लोक वेद के रस्ता में चलैं द्वारिका में रहिके सब विषयसेवन करैं पर

१— विरक्ति उपरति श्रीभागवते प्रथम स्कन्धे। एतदीशनमीशस्य प्रकृतिस्थोऽपि तद्गुणैः नयुज्यते सदात्मस्थैर्यथा बुद्धिस्तदाश्रया तमेनिरेऽबला मौढ्यात् स्त्रैणंचानु व्रतंरहः। अप्रमाण विदोभर्तु रीश्वरं मतयो यथा

२—एकादशे भगवानपि विश्वात्मा लोकवेदपथानुगः कामान् सिषेवेद्वारवत्यामसक्तः सांख्यमाश्रित इति

निराशक्तसांख्य ज्ञानके आश्रय होके सेवन करैं तासे भगवानस्वरूपानन्द से परिपूर्ण कोई के बश नहीं पर प्रेम के बश हैं

१ सुन्दरता तंत्रमें है श्री कृष्णको थोड़ीं जवानीको प्रारम्भ भयो तब अरुण मुख और अंग के विकार प्रकाश होतेही पंचशर(बाण) जाके ऐसे काम को थोड़ा संभ्रम प्रगट होतो भयो तौ हरि व्रज अंगनावों के मन हर लेते भये सोई गोपाल सहस्र नाम में२फूले नील कमलसी कांति जाकी ऐसो सुन्दर मुख चन्द्र मोर पक्ष को मुकट प्यारो श्री वत्स चिन्ह उदार कौस्तुभ धारण करैं सुन्दर पीताम्बर गोपियों के नेत्र कमल से जामूर्तिकी पूजा होय गैय्यागोपों के समूह जिन के ओर पास श्रीकृष्ण

१—सौन्दर्य तंत्रे। संजाततारुण्य मनागुपक्रम आरुण्य वक्रोनिवृत्तांगविक्रियः आचिर्भवत्पंचशराल्य संभ्रमो गोष्टांगनानांमन आहरद्धरिः

२—गोपालसहस्रनामे फुल्लेन्दीवरकान्ति मिन्दु वदनं बर्हावतं स प्रियं। श्रीवत्सांक मुदार कौस्तुभ धरं पीताम्बरंसुन्दरं गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनो गो-गोपसंघावृत गोविन्दं कलवेणु वादन परं दिव्यांग भूषं भजे।

मनोहर वेणु बजायवे में तत्पर तिनको मैं भजन करौं

भाषाकान्तिप्रकाशिका

क्षण क्षण मे जाको नवींन नवीन रूपको दरशन होय सोई रूप परमरमणीय कहावै सोई श्रीभागवत प्रथमस्कन्दमें १ यद्यपि श्रीकृष्ण अपनी पटरानियोंके सर्वदा एकान्तमें निकट रहैं तथापि उनके चरण कमल क्षण क्षणमें नवीन नवीन लगैं उनचरण कमलसे कौनस्त्रीको उपरामहोयगो महा चंचल भी लक्ष्मी जिनको कबहूं नहीं छोडै २ प्रेमवश्यता पहिले कहिआये और भी कहैंहैं दशममें सखाब्राह्मण प्यारे सुदामा तिनके अंग संगकरके भगवान ऐसे आनन्दको प्राप्तभये कि कमल नेत्रोंसे महाप्रीतिकरके आंसू छोड़ते भये आत्मारामसुनियों के मनआकर्षण

१—क्षणं क्षण यन्नवता मुपैतितद्रूप भजते रमणीरतायाः। प्रथमस्कंद यद्यप्यसौपार्श्वगतोरहोगतस्तथापि ।तस्यांघ्रियुगं नवंनवं पदे पदे काविरमेत्तत्पदाच्चलापि यच्छ्रीनजहाति कर्हिचित् ।

२-प्रेम वश्यता दशमे सख्यु प्रियस्य विप्रर्षेरङ्गसङ्गातिनिर्वृतः प्रीतोव्यमुञ्चदब्बिन्दूनेत्राभ्यां पुष्करेक्षणः

करै १तामें पहिले श्रीसनकादिक चरण कमलकी तुलसीकीसुगंधीसे आकर्षित भये सोई श्रीभागवत की तृतीयस्कंदमें प्रसिद्ध है२लीला गुणसे शुकदेव जीको आकर्षण कियो सोई द्वतीयस्कन्दमें परीक्षतजीसे शाप कहते भये कि मैं निर्गुणमें परिनिष्ठ रह्यो पर उत्तमश्लोक की लीला ने चित्त गृहण करलियो तासे यह आख्यान श्रीमद्भागवत अध्ययन करतो भयो

३ रुक्मिणीजी को गुण रूप से आकर्षण भयो सोई रुक्मिणीजीने पत्रीमें लिख्यो दशम स्कन्दमें कि हे भुवन सुन्दर तुम्हारे गुण कैसे हैं कि सुनवेवारोंके अंतर हृदय में प्रवेश होके अंगको ताप हरै हैं और तुम्हारो रूप दर्शन करवे वारों को सब अर्थको प्राप्तकरायवे वारो है ताको सुन

---

१ आत्माराम गणाकर्षी तत्र चरण तुलसी सौरभेन सनकादीनांतृतीयेतस्यारविन्द नयनस्य इत्यादिना

२ लीला या शुकदेवस्य द्वितीयस्कंदे परिनिष्ठतोपिनैर्गुण्ये उत्तम श्लोक लीलया गृहीतचेतः राजर्षेराख्यान मधीतवान

३ गुणरूपाभ्यांरुक्मिण्याराकर्षणंदशमे ॥ श्रुत्वागुणान्भुवन सुन्दरशृण्वतांते नि र्विश्यकर्णविवरै हरतोऽङ्गतापं ॥ रूपंदृशांदृशिमतामखिलार्थलाभं त्वय्यच्युताविशतिचित्तमपत्रपंमे

के मेरी निर्लज्ज्य चित्त तुममें प्रवेश भयो १
वेणु शब्द और रूपसे गोपीवर्गको आकर्षणगोपी बोलीं हे प्यारे त्रिभुवनमें ऐसी कौन स्त्री है कि तुम्हारे वेणु गीतके लम्बे मनोहर स्वरसे मोहित होयके बड़ों के पथ से चलायमान न होय और त्रिलोकीको सौभग यह रूप देखके जासे गैय्या पक्षी मृगा पुलकावलि धारणकरैं कौनन चलै अर्थातसब मोहित होय श्रीगोपी व श्रीरुक्मिणी आदि आत्मारामों की भी गुरू हैं

२ स्त्रियोंकी स्थिरता हरै स्नेह मुख्यसे सो स्त्रियों को धीरज हरवे वालो कहावै प्रथम स्कन्दमें पृथ्वीजी ने कह्यो कि दा पुरुषोत्तम को विरह कौन सहै जो प्रेमकी चितवन रुचिरमन्द मुस्क्यानसे मनोहर बोलीसे मथुरा की मनिनियों को मानसहित धीरज हरलेते भये जाके चरण

१ वेणुशब्दरूपाभ्यांगोपी नामाकर्षणं दशमे कास्त्र्यङ्गतेकलपदायतवेणुगीत सम्मोहितार्य्या चरितान्न चलेत्त्रिलोक्यां त्रैलोक्यसौभगमिदञ्चनिरीक्ष्यरूपं यद्गोद्विजद्रुममृगाः पुलकान्यबिभ्रन्।

२ स्त्रीस्थैर्य्यहरतिस्नेहमुख्यैः स्त्रीस्थैर्य्यहारकः यथावाभागवते काचासहेतविरहंपुरुषोत्तमस्य प्रेमावलोकरुचिरस्मितवल्गुजल्पैः स्थैर्य्यंसमानमहरन्मधुमानिनी नांरोमोत्सवोममयदंघ्रिविटङ्कितायाः

के स्पर्शसे मेरे यह रोमांचको उत्सवहो तो भयो १ प्रतिज्ञा जाकी दृढ़ कोई न मेट सकै सो दृढ़ व्रत कहावै जैसे हरिवंश पुराण में आप हरिने कह्यो हे मुने मैं तुमसे सत्य कहौं न देवतान गन्धर्वगणन राक्षस नसर्पन असुरन यक्ष मेरी प्रतिज्ञा नाश करवे को कोई समर्थ नहीं भये २ भक्तों ने जाको शोध लियो ताको हरि गृहण करै ताप-वित्र आत्माको अपनों लोक देवैं सो तृतीय स्कन्दमें उद्धवजीने कही और जो लोकमें बीरजो संग्राममें आये श्रीकृष्णके मुख कमलकी माधुरीजो नेत्रोंको रमावै नयनोंसे पान करके अर्जुनके अस्त्र से मरके पवित्र भये तिन श्रीकृष्णके धामको प्राप्त भये

३ आसक्तों को जाके अंगके दर्शन से

---

१ दृढव्रत प्रतिज्ञाभृद्धरिवंशेयथा हरिः नदेवगंधर्वगणानरा-क्षसानचासुरानैवचयक्षपन्नगाः ममप्रतिज्ञामपहंतुमुद्यता मुनेसमर्थाः खलुसत्यमस्तुते

२ भक्तशोधितस्य ग्राहो यत्पूतात्मस्वलोकदः यथा श्रीभागवते तथैवाचान्येनरलोक वीरा य आहवे कृष्ण मुखारविन्दं नेत्रैः पिवन्तो नयनाभिरामं पार्थास्त्र पूतापदमापुरस्य

३ आसक्तोह दृष्टांगीयमतृप्ताःपश्यतांदृशः यथाश्रीभागवते नित्यंनिरीक्षमाणानांयद्यपिद्वार कौकसाम् नवितृप्यंतिहिदृशः श्रियो-धामांगमच्युतं

बड़ी दर्शनकी भूख उपजै सोई प्रथम स्कन्द में यद्यपि द्वारिकावासी श्रीकृष्णके अंग के नित्य दर्शन करैं पर शोभाके स्थान अच्युतके अंग दर्शन करके नेत्र तृप्तनहीं होंय १ भक्तोंके जो वैरी तिनसे जो अधिक वैर करै सो भक्ति द्वि-डधिद्वेषी कहावै पुराणके वचन हैं श्रीकृष्ण ने कह्यो जो तिन पान्डवोंसे बैर करै सो मोसो बैर करै है जो तिनके अनुगत है सो मेरो अनुगत है पान्डवोंके साथ मैं एकात्मताको प्राप्तभयो हूं वे मेरे प्राण हैं ऐसे जानै २ यथा योग्य सब को आदर करै सोयथा योगसबको सनमान करबे वारो होय सोई प्रथम स्कन्दमें श्रीकृष्ण परदेश से द्वारिकामें आये यथाविधि सबसे मिलके सब को मान देते भये कोईकी पूजा करी कोई को अभिवादन कियो कोईको आलिंगन करके कोई

१ भक्तद्विडधिद्वेषी भक्तद्विड्भ्योऽधिद्वेषम् महाभारते यो तानद्वेष्टि स मां द्वेष्टि यो ताननु स मामनु ऐक्यात्ममां गतं विद्धि पाण्डवैर्धर्मचारिभिः

२ सर्वादरी यथा योग्य यथार्हं सर्वमानकृत् श्रीभागवते । १ यथाविधि उपसंगम्य सर्वेषां मानमादधे प्रह्वाभिवादनाश्लेष करस्पर्शस्मितेक्षणैः

को हाथसे हाथ पकडके कोईको मन्द मुस्क्यान की चितवनसे सबको सन्मान करते भये

१वयस्वी ॥ नाना प्रकार के बालपोगण्डादिवयसहै पर समग्र भक्ति रसको समुद्र किशोर वयस वारो साक्षात एक रस विचित्र विलास को धारण करिवे वारो है २ चतुरः एक ही बारमें सबको सांत्वन करलेय सो चतुर कहावै यथा यामलमें दासों को उनके मनकी जानके सांत्वन करते भये शत्रुवों को सेना समूह से मातावों को प्रसाद से सखावों को प्रतीत से प्यारियों को कटाक्षेप से पशुवों को दृष्टि से ऐसे हरि सबको सांत्वन करते भये ३ मृत्यु मोच कृत मृत्यु को निष्फल करै अर्थात मरे भये को जिवाय देय सोई श्रीभागवतमें काली

---

१ वयस्वी ॥ वयस्विनोपिनानात्वेखिलभक्तिरसांबुधिः वयस्त्ये च किशोराख्याशश्वच्चित्रविलासभृत्

२ चतुरः युगपच्चतुरः सांत्वीशः स चतुरः उच्यते यथायामले तान्स्वचित्तज्ञतयासनचरानवलोकनोमातॄः प्रसादेन सख्यीनप्रतीतिभिःप्रेष्ठा स्त्वपांगेन पशूनदृशाहरिः स सांत्वयननागकशोनवर्तत

३ मृत्युमोचकः ॥ जीवयन्निहतानन्यः स मृत्युमोचकउच्यते यथा श्रीभागवते विषपानविषपानेन निःशुकान्भुजगार्पितम् उत्थापयापायवद्दृगावल्लोकप्रकृति,खिल

सर्पके विषको जलपान करके मरे जो पशू व सखा तिनको जिवाय के काली सर्पको दहसे निकार के सो जलनिर्मल करकें फिर गौवों को पान करावते भये

१ स्थिरः, जो चेष्टा आरंभ करै याके फल को प्राप्तहोय सो स्थिर कहावै यथा तंत्र मेंस्त्रीरत्न जामवती और स्यमंतकमणि फल उदय पर्यंत कृष्ण इच्छा करते भये और छिपाई भई को यथे च्छ अच्छो तरह से गृहण करते भये २ गंभीरजा की हृदयकी बात को कोई न जानसकै सो गंभीर कहावै सोतंत्रमें चारसंकादिक सर्वज्ञ भी पर गोपी रसमें बशी भये जो श्री कृष्ण तिनको आस्वादन करते भी प्रीति अप्रीति नहीं जानते भये ३ भक्तपराजितः जो भक्ति करके भक्तों से हारजाय

१. स्थिरः आरब्धचेष्टा फलप्राप्ता स्थिरोऽभिधीयते बुधैः यथा तंत्रे स्त्रीरत्नंचमणिंकृष्णश्चाद्यच्छन्नाफलोदयात् । यथेच्छं विश्वगात्र हृ निन्हुतोपिस्थिरोहरिः

२ गंभीर अनवगाह्यहार्दोयः सगंभीरोऽभिधीयते यथातंत्रे चतुः सनोपिसर्वज्ञोगोपीरस वशीकृतं नवेदप्रीतमप्रीतं कृष्णं चास्वा- दयं स्तथा

३ भक्तपराजितः योभक्तैर्जीयतेभक्त्या सतुभक्तपराजितः यथा सुदर्शनं स हिनायां अहंपराजितो भक्तैरजितोपितुसर्वतः बहु- वीचह्रभोनित्य रमयापि समाश्रितः

सो भक्त पराजित कहावैं यथा सुदर्शन संहिता में भगवानने स्वयं कह्यो मैं कवहूं कोईसे हारोनहीं पर भक्तोंसे पराजित हूं वल्लुवि जोगोपी तिनको प्यारो लक्ष्मीको सम्यक आश्रय देवे वारो परभक्त आधीन हूं

१ यशस्वी जाकी कीर्त्ति संसारको तारैसो यशस्वी कहावैं एकादश स्कंद में अपनी मूर्त्तिकी सुन्दरतासे मनुष्योंके नेत्रोंसे लोकोंकी लावण्यता दूर करी अथवा सब लोकोंको सुन्दरता दानकरी वाणीकर के स्मरण करवे वारोंके चित्त हरे अपने चरण चिन्होंसे दर्शन करवे वारोंकी क्रियाहर-लीनी सुन्दरय शीली कीर्त्ति पृथ्वीपर विस्तार करी जासे अनायास संसारी जन अज्ञान को अंधकार तर जांयगे इत्नो कर हरि अपने धाम को गये २ उदारः सब लोकों में अतिशय दान

१ यशस्वी संसारतारिणी कीर्त्तिर्यशस्वीयत्कथ्यते यथा भागवते ॥ स्वमूर्त्यालोकलावण्यनिर्मुक्त्यालोचनं नृणां गीर्भिस्ताः स्मरतांचित्तं पदैस्तानीक्षतांक्रियाःआच्छिद्यकीर्त्तिसुश्लोकांवितत्यह्य जसानुकौ तमोनयातरिष्यंतीत्यगात्स्वपदमीश्वरः

२ उदारः दानवीर उदारः स्यात्सर्वं लोकाति शायिकः यथाभागवते स्मरतःपादकमलमात्मानमपि यच्छति किन्त्वर्थं कामान् भजतोनात्यभीष्टान् जगद्गुरुः

वीर सो उदार कहावै श्रीभागवत में है हरि अपने चरण कमल स्मरण भजनकरवे वारोंको अपनी आत्मापर्य्यंत देदेवैंतौ अनचहीते अर्थ कामको जगद्गुरु दे देवैं तौका अचम्भो है १ तृप्तिदर्शन करन वारोंको जाके दर्शनसे न होय सो तृप्तिरहित सौन्दर्य है यथा नवमस्कन्द में जाकोमुख मकराकृत कुन्डल सहित सुन्दर करण जामें सुभग कपोल जामें प्रकाश मान सुन्दर विलास वारो हास जामें

नित्यनवीन उत्सवको दाताताकी शोभा को नारी तथा नर हर्ष पूर्वकनेत्रोंसे पीवते तृप्त न होते भये और पलकोंपर बैठे खोलेंमून्दें जोनिमितिनपर अतिकोप करतेभये२सदावासः संतोमें सम्यक्वास जाको सो सदावास कहावै सोई पद्म पुराणमें नारदजीसे कही मैं वैकुंठमें

१– तृप्ति रहित सौन्दर्य स्तुत्रियं नास्तिपश्यतां यथाभाग- वते यस्याननंमकरकुण्डलचारुकर्णभ्राजत्क

पोलसुभंग सविलासहासं। नित्योत्सवंनत तृपुद्दृशिभिः पिबंत्यो नार्यों नराश्चमुदिता कुपितानिमेश्च

२—सदावासः। सत्स्वासः सदायस्य सदावासः सगद्यते यथापाद्मे नाहंवसामिवै कुण्ठेयोगिनां हृदयेनच। मद्भक्ता यत्रगायंति तत्र तिष्ठा मिनारद

हे नारद नहीं रहों सो नहीं रहौ योगियों के हृदयमें भी रहों पर मेरे भक्तजहां गावें तहांसे सरकौं नहीं अर्थात वैकुन्टादिकसे अन्यत्रचलो भी जावों पर भक्त सभामें तौनिश्चैं हौं ध्राधात् गतिनिवर्तनमें है भक्तोंके गानसे मेरी गतिस्तब्ध होजाय १ जा काम में कोईकी सामर्थ्य नहीं ता काम को करवे वालो सबसे बचे कामको करवे वालो है सोकूर्मयामलमें लिख्यो है जो श्रीयुधिष्ठिरजीकी राजसूययज्ञमें सबसे ऊंचो काम संतोंके चरण धोनो यह और कोई पर न होसकै सोअवशिष्टकाम अर्थात सबसे बचे कामके करवे वारे सबकी आत्मा आप चरण धोवे का काम लेते भये

२ विचित्र चमत्कार चेष्टा को समुद्र हृदय की हरवे वाली अपनी केलिसे आपही विस्मय

१— सर्वाशक्यंकृत्यस्तु सर्वावशिष्ट कार्यकृत । यथाकूर्म यामले । कौन्तेययज्ञे चतराज सूये सर्वोज्झित तोसज्जरणावनिक्तं । कृष्णस्तत्र शक्यामस्त्विसात्मकस्याज्ञ माहशिष्टामवशिष्टकारी

२—चित्रचमत्क्रियेहाब्धि हृत्हारिकेलि विस्मितः । यथबृहद्धामने । संतिपद्यपिमे प्राज्यलीलास्तास्ता मनोहराः नहिजाने स्मृते रासेमनोमेकादृशीभवेत्

होजाय सोई बृहद्वामन पुराण में कह्यो आप श्री कृष्णाने यद्यपि सोसो अनेक मेरी लीलामन की हरवेवाली है पर जबमैं अपनी रासलीला स्मरण करों तब मन कैसो होजाय सोमैं भी नहीं जानौं १प्रतिभायुत शीघ्री पदको दूसरो अर्थ करलेय ताकोप्रतिभायुत कहैं सोई तंत्रमें है श्रीराधिकाजीने श्रीकृष्णासे पूछी कि कौनदशा से प्राप्त भये श्रीकृष्णने आशाको अर्थ तृष्णा लगाय के उत्तर दियो कि हे रमे तुम्हारे अधरमें फिर श्रीराधिकाने पूछी कि तुम्हारी बंशीकहां कृष्णाने ता बंशको अर्थ संतान लगायके कह्यो कि चारौ फिर श्रीराधाने पूछी कितुम्हारो बास नाम निवास कहां है श्रीकृष्णाने वस्त्रअर्थ से उत्तर दियो कि मेरे शरीरमें स्थित है तो तुम्हारो अंबर कहां श्रीकृष्णाने आश अर्थ करके उत्तर दियो कि बाहिर नही अंगके भीतर है ऐसेश्री

१- प्रतिभायुत । आशयार्थांतर सन्धायित्व विलक्षणात् प्रतिभायुतः यथा तंत्रे । कासाधुखाते ब्रजनाथ शंसरामेश्वरे तर्हित बंशधराः विप्वक्ह चासो वपुषि स्थित मेतदं चरंतो बहिर नवङ्ग । एवं प्रियां प्रतिपृच्छतीं सकृष्णश्च काशीन यशोदयोधैः

कृष्ण नये ज्ञानको उत्तरदियो १ बुद्धिमान सूक्ष्म बातको जो हृदयमें अनुसन्धान करलेय सो बुद्धिमान कहावै सोई कुमारयामल में गर्गजी की यादवनने हंसी करी सो शिबजींके शापसे कालयवन यादवनको भयदेवेवालो प्रगटकरते भये ताको अपनेसे और यादवन करके अवध्य जानके श्रीकृष्ण अनुनय करते भये अपने भक्त को ढक्यो तेजसोई ज्येष्ठ मासकी उष्णतातासे जलकी तरह जरानो विचार करते भये याते मुचकुन्दकी गुफामेंताको लेजातेभये कालयवनकी

२ वेणुवादन दशममे गोपी सब यशोदा जीसे कहैं हेसति यह तुम्हारो बेटा गिरधारी व्रजगौपर दया करबे वारे बांसुरी अनेकरागों से बजानो अपनो आपही सीख्यो अधरबिंब

१—बुद्धिमान् सूक्ष्महार्दानु संधायी बुद्धिमानिति कीर्त्यते यथा कुमारयामले। उपहसितपुरोधाः कारितात् ह्रशापात्मयमपि य दुर्निर्मुक्तस्य बध्योनुनीय। स्वसदुपहिततीर्य तेजसाज्येष्ठकाशः शुचि वह्निरिति पिधीत कृष्णो गुहां मौचकुन्दीं

२—वेणु वादन दशमे। विविध गोपचरणेषु विदग्धो वेणु वाद्य उरुधानिज शिक्षाः। तवसुतः सतियदाधर बिंबेदत्त वेणुरनय त्स्वरजातीः सवनशस्तदुपधार्य्यसुरेशाः शक्रशर्व परमेष्ठिपुरोगाः। कवय आनतकं धरचित्ता कश्मलंययु रनिश्चिततत्त्वाः

पर धरके जासमय बजावैं हैं तौताको सुनके देवतावों में मुख्य इन्द्र ब्रह्मा महादेव तिन के गण आप पन्डितभी हैं पर मोहको प्राप्त हो जायहैं गीतकी ध्वनि व रागसेकन्धे औरचित्त नम्र होजाय हैं अर्थात् आनन्दमें मग्न होजांय मनोहर स्वरकी आलाप चारीं के तत्वके भेद को निश्चय नहीं करसकैं १प्यारियोंकेआधीन होनो श्रीमद्भागवत रास पंचाध्यायीमें आप भगवान ने गोपियोंसे कही कि मैं तुम्हारे उपकार कियेको प्रतउपकार करवेको सामर्थ नहीं तुम्हारो ऋणि हूं देवतावों की आयु लेकर भी तुमसे निर्ऋण नहीं होवों दुर्जर घरकीशंखला छोड़के तुमने मो के भज्यो मैं नहीं कर सकौं

ऐसेहरिके गुण अनन्तहैं जो गुण विरुद्ध धर्मके देखे जांय जैसे व्यापक को यशोदा गोद में परिछिन्न होनो आत्माराम को काम सेवन इत्यादिकोंको कूर्म पुराण के बचन अनुसार

१- तत्रैव प्रियाया आधीनता। नपारयेहं निरवद्य संयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः। यामाभजन दुर्जरगेह शृङ्खलाः संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना

समाधान कर लेने सोई कह्यो सो १ स्थूल नहीं अणु नहीं और स्थूलभी है अणु (सूक्ष्म)भी है श्याम जाके लोचन के कोने रक्त सो चारौओरसे अवर्ण वर्णनकियो है ऐश्वर्य के योग से भगवान में विरुद्ध अर्थ सब घटै है २ वैष्णव तंत्र में लिखो है कि भगवानको अंग अठारह दोष से रहित है और सब ऐश्वर्यमय विज्ञान आनन्दरूप है वे अठारह दोष विष्णु यामलमें लिखे हैं १मोह २तन्द्रार आलस ३भ्रम ४रूखोरसपनो ५घोरकाम ६लोलपता(चांचल्य) ७मद ८मात्सर्य्य ९हिंसा १०खेद ११परिश्रम १२ झूठ १३क्रोध १४आकांक्षा १५आशंका १६विश्व-विभ्रम अर्थात ब्रह्मादिकके सम्बन्ध व इच्छा से जगतके पालनादिक १७वैषम्य १८पराई अपेक्षा

१-कौर्मे अस्थूलश्चानुरणुश्चैवस्थूलोऽणुश्चैवसर्व्वतः । अवर्णः सर्वतःप्रोक्तःश्यामरक्तान्त लोचनः ऐश्वर्य योगाद्भगवान विरुद्धार्थोऽभिधीयते

२ वैष्णवतंत्रे अष्टादशमहादोषै रहिता भगवत्तनुः सर्वैश्वर्यमयी सत्य विज्ञानानन्द रूपिणी विष्णुयामले अष्टादशमहादोषा । मोहस्त न्द्रा भ्रमोरुक्षरसता काम उल्वणः । लोलतामदमात्सर्य्य हिंसा खेद परिश्रमौ । असत्यं क्रोध आकाङ्क्षा आशङ्का विश्वविभ्रमः विषमत्वं परापेक्षा दोषा अष्टादशोदिताः

ये अठारह दोष भगवद्विग्रहमें नहीं है भक्तोंकेप्रेम वशसे जो ये दोष

दिखाई भी पडैं तौ गुणही समुझने श्रीमद्-भागवतमें ऊखलबन्धन को कथा प्रसिद्ध है कि हरि १ आत्मारामने इतने चरित्रोंसेभक्त वश्यता दिखाई पूर्ण कामकों भूख लगी शुद्धसत्वरूपको क्रोध आयो आप्तस्वा राज्यलक्ष्मी वारो चोरीकरैं महाकालयमजासे डरपै सो माताके डरसे भागै मनसे जाको विशेष वेग ताको मय्या पकड लावै जो आनन्दमय सो रोवै २ या प्रकार सखावों के संग शृंगाररस वारियोंके संग दासोंके संगजो विरुद्ध धर्मदेखे जांय तौ दोष नहीं है सोई कूर्म ३ पुराणमें लिखो है ऐश्वर्यके योगते भगवानमें विरुद्ध धर्म देखे जांय हैं तौ भी भगवानमें कोई तरहको दोष लावनो योग नहीं है जो कहौ कि

१—श्रीमद्भागवते दशमे। एवं संदर्शिताह्यंग हरिणा भक्तवश्यता। स्ववशेनापि कृष्णेन यस्येदं सेश्वरं वशे

२—तत्रैव नवमे अहं भक्तपराधीनोह्य स्वतंत्र इव द्विज। साधुभिर्ग्रस्त हृदयो भक्तैर्भक्तजन प्रियः

३—कूर्मे ऐश्वर्य योगाद्भगवान् विरुद्धार्थोभिधीयते। तथापि दोषाः परमेनैवाहार्य्याः समन्ततः

कालयवन जरासिंधके आगे कैसे भगे तौ बा में भी कारण हैं द्वारिका धाम बसानो मुचकन्द अपने भक्तको एक आदिमी भेट देके जगानो और दर्शन देनो जरासिंधुसे ब्राह्मणोंकी रक्षा करनी ये कारण है पान्डवोंको रथ हांकनो बलि के द्वारे गदालेके द्वारपाली करनो पटरानियोंके घरसे न निकलनों यशोदाके नचाये नाचनोसखों को कांधेपर चढावनो यह प्रेम दश्यता है

शथनामवर्णन करै हैं नामदो प्रकार को मंत्रात्मक केवलनाम तामें पहिले मंत्र वर्णनकरै हैं १ अष्टा दशाक्षर मंत्र लोकों को पवित्र करवे वारो व्यापक है सात कोटि महामंत्र जो शेखर हैं उनको मुकट रूप है सब मंत्र जाकी सेवा करै ऐसो अठारह अक्षर को गोपालमंत्र सब मंत्रोंका राजा है यामें प्रकृति मंत्रके स्वरूप श्री कृष्ण हैं कारण रूपसे पुरुषभी ताके अधिष्टाता देवता हैं सो या मंत्रमें चार रूप दिखाई पडै हैं मंत्र के कारणरूप वर्णसमूहोंके रूप अधिष्टाता देवता

१ अष्टादशाक्षरो मंत्रो व्यापको लोकपावनः सप्तकोटि महा मन्त्र शेखरो देव शेखरः

देवतारूपसोई १गोपाल तापनीकी श्रुतिहै एकही वायु जैसे भुवनमें प्रवेश होके देह देहमें पांच रूप को होतो भयो तैसे ही कृष्ण जगत के हितके अर्थशब्दरूप से पांचपदको मंत्र रूप होते भये सोई २हयशीर्ष पंचरात्रमें कह्यो है वाच्य वाचक देवतामंत्र हे ब्रह्मनतत्व के जानवे वारे इन में भेद नहीं बतावैं हैं

अथनाम ३कृषिभू अर्थात सत्ता वाचक है णकार आनन्द वाचक है इन दोनोंको मिलाय कें पर ब्रह्म कृष्ण यह कह्यो जाय है४मंत्रमें भी है हे विष्णो तुम्हारो नाम चित्स्वरूप है याते महः स्वप्रकाशरूप है तासे या नामको (आ) थोडोभी जाननबारो कुछ सम्यक उच्चारण से

१तथाहि श्रीगोपाल तापनीयं श्रुतिः। वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो जन्ये जन्ये पंचरूपो बभूवकृष्णस्तथैको जगद्धितार्थं शब्देना पंचपदो विभातीति

२तथाहयशीर्ष पंचरात्रे—वाच्यत्वं वाचकत्वंच देवतामंत्रयो रिह। अभेदेनोच्यतेब्रह्म तत्त्व विद्भिर्विचारत इति

३-अथनाम। कृषि भूवाच कोशब्दःणश्च निर्वृति वाचकः। तयोरैक्यंपरब्रह्म कृष्ण इत्यभि धीयते

४-- ॐ आस्य जानन्तो नामचिद्विवक्त न महस्ते विष्णो सु तिंम भजामहे

महात्म्य होय सो नहीं केवल अक्षरको अभ्यास मात्र होय ताको सुमति अर्थात विद्या में प्राप्त करावों औरभी १नामकी माधुरी वर्णा न करै हैं हे भृगुवर यहकृष्णानाम मधुरसे भी मधुर है मंगल करनवारोंको मंगल करै है सकलवेद वल्लिको सुन्दर फल चैतन्यस्वरूपहै जोकोईएकवार श्रद्धा से अथवा अवज्ञासे गावै मनुष्य मात्रकोतारै है अथ योबन नाम युवा अवस्था यद्यपि श्रीकृष्ण की कौमार पौगन्ड कैशोरादि सब अवस्था हैं और ताकेउपयोगी वात्सल्य सख्य रसवारोंको वे नित्य है तामें किशोर अवस्था धर्मी

जामें योवनकी उठान होय सोई धर्मी है वात्सल्य सख्यादि रसवर्णनमें और अवस्थादि खाई जांयगी यास्थलमें योवनको उद्गम जामें अर्थात अन्तिम कैशोरषोडश वर्षकी दिखावै हैं कोई रसिकजन कौमारादि अवस्थामें भी उज्ज्व लरसको आविरभाव कहूं बर्णन करैहैं और सब

१-मधुर मधुर मेतन्मंगलमङ्गलानां सकलनिगमवल्ली सत्फलं चित्स्वरूपं। सकृदपि परिगीतं श्रद्धयाहे लयावा भृगुवर नरमात्रं तारयेत कृष्णनाम।

सम्भव है परपूर्णारसनहीं प्राप्त करावैं अंतिमकैशोरकी शोभा श्रीभागवतदशम स्कन्दमें १रूपयोवन के मदसे थोडे लाल डोरा बारे लोचन घूम रहे रूपमाधुरीके दर्शन से बन्माली सुहृदों को मान देवैं गद्दरबेर जैसे हरो पीरो होय तैसे सुवर्ण की कुन्डलकी कांतिसे मुखकी शोभा कोमल कपोल झलकैं ऐसे यदुपति हाथी मतबारे के समान बिहार करत चन्द्रमा की तरह दिनके अंतमें हर्षभरेमुख से व्रजमें आवैं तौ दिनभरकी दुरन्त बिरहकी ताप ब्रजबासी व गौवोंकी छुडायदेंय अथलीला वर्णन करैं हैं स्वभाविक मनोहर चेष्टा तिनको लीला कहैं जैसे माखन चोरी दान लीला रासलीला गौचाणादि इन सब लीलावोंका तात्पर्य यह है कि जीव श्रवणादर्शन करवे वारोके संसारी विषयों से मुंह फिर के भगवत में लगै

१– दशमे। मदविघूर्णित लोचन ईषन्मानदः सुहृदां वन्माली। बदर पाण्डु वदनो मृदु गन्डं मंडयन् कनक कुण्डल लक्ष्म्या। यदुपति र्द्विरदराज विहारो यामिनी पतिरिवैषदिनान्ते। मुदित वक्त्र उपयाति दुरंतं मोचयन् व्रजगवां दिनताप

सोई रासपंचाध्यायोके अंतमें कह्यो १ भूतमात्र पर कृपाकरके मानुष देहवत अपनो स्वरूप प्रगट कियो ऐसो लीला करीकि सुनवेमात्रसे तत्पर हो जायअर्थात श्रीकृष्णमेंमन लगजाय जैसे पूर्व महात्मावोंने चोरी वर्णनकरी कोई यह कृष्ण चोरमेंरेमनका चुरावै है शरणागतोंके पापचुरावै पूतनाके प्राण चुरावैगोपोरूपी छोटी छोटी ब्रजाङ्गना तिनके भूषण वस्त्र चुरावै सज्जन दर्शन करवेवारोंके हृदय व नेत्रचुरावै इनसब लीलावों में रास लीला मुख्य महामाधुरी की भरी है सोई दशमस्कन्दमें कह्यो ३ चरणोंको ताल पूर्वक भूमि परपटकके भुजाको अभिनयसहित फिराय के मन्दमुस्कयान सहित भौंहको नचायके कमर

१— अनुग्रहाय भूतानां मानुषं देहमाश्रितः। कुरुतेतादृशीः क्रीडाः श्रुत्वा तत्परो भवेत्

२-कस्यचित। अपहरतिमनोमे कोप्ययं कृष्णचौरः प्रणत दुरत चौरः पूतना प्राण चौरः। वलय वसन चौरः बालगोपांगनानां नयन हृदय चौरः पश्यतां सज्जनानां।

३- श्रीमद्भागवते। पादन्यासैर्भुज विधुतिभिः सस्मितैर्भ्रूविलासैर्भज्यन्मध्यैश्चल कुचपटैः कण्डलोलैः कपोलैः स्विद्यन्मुख्यः कबररशना ग्रन्थयः कृष्ण वध्वो गायंत्यस्तं तडित इव मेघच क्रे विरेजुः

लचकायके कुचके वस्त्र चलते जांय कुन्डल कपोलनपर हलते जाय मुखपर श्रमकरण झलकैं चोटीकी गांठखुलगई ऐसी श्रीकृष्णकी वधूतिन को गावत रासके समय विजुली सदृशमेघचक्रमें शोभा पावती भयी

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

अथ भगवल्लोका अपि चिदानन्द मया नित्यास्तत्र सभगवःक्व प्रतिष्ठित इति स्वमहिम्नोति श्रुतेः अतएव श्रीमद्वृन्दावना दीनां चिदानन्द मयत्वेपि भगवत्क्रीडार्थं कुञ्जोप कुञ्ज सभासरः सरित प्रासादवनो पवन वापी कूप तडागादि गुल्मलतौषध्यादि रूपत्व वो- ध्य आहुश्च श्रीमत्पद्माचार्याः कुञ्ज गुल्मादि रूपत्व श्रीमद्वृन्दाव नस्यच । कृष्ण क्रीडाकृतेश्चैव चिद्धनस्य विचित्रतेति चकाराद्गोलो का दीनामपि ग्रहणं । वृन्दावनं सखिभुवो वितनोति कीर्तिंयद् वधौ स्तनपदाम्बुज लब्धलक्ष्मीत्यादि श्रीभागवते च वैकुण्ठस्थस्य प्राकृतस्य मुक्तं परमागम चूडामणौ श्रीनारद पंचरात्रे जितंते स्तोत्रेच

भाषाकान्तिप्रकाशिका

अथभगवानकेलोकभी चिदानन्दमयनित्य हैं सोभगवानकहां रहैं हैं अपनी महिमा में रहै हैं यह श्रुति है याते श्री वृन्दावनादि धाम चिन्मय होके भी भगवत क्रीडा के अर्थ कुञ्ज उपकुञ्ज सभा सरोवर नदी महल बन उपवन बावरी कुवा तडागादि गुल्मलता

औषधि आदि रूपसे जाननो चाहिये सोई श्रीपद्मचार्यने कह्यो है श्रीवृन्दावनकेकुञ्ज गुल्मादि रूप कृष्णक्रीडाके अर्थ समझनो चिद्घन की विचित्रता याही कारणते भई चकार से गोलोकादिकों को भी ग्रहण करलेनो सोई दशमस्कन्दकी २० अध्यायमें है।हे सखिवृन्दावन पृथ्वी को कीर्ति विस्तार करै है काहेसे कि देवकी सुतके चरण कमलसे लक्ष्मी पाई है।श्री वृन्दावनमें गिरराजपरवत पर कृष्ण बंशीबजावै ताको सुनके मतवारे मोर नाचै तिनकोदेखके सब पशुपक्षी अपनी क्रिया छोडके चित्रसे रहिजावैं

सिद्धांतरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

लोकं वैकुण्ठनामानं दिव्यषाड्गुण्य संयुतम्। अवैष्णवानाम प्राप्य गुणत्रय विवर्जितं। नित्यसिद्धैः समाकीर्णं तन्मयैः पंचकालिकैः। सभाप्रासाद संयुक्तं वनैश्चोपवनैर्युतं। वापी कूप तडागैश्च वृक्षखण्डैश्च मण्डितम्। अप्राकृत सुरैर्वन्द्यं अयुतार्क समप्रभं। प्रकृष्ट सत्त्वसम्पूर्णं कदाद्रक्ष्यामिचक्षुषेति अस्याकां नलदीसे यत्स्थानं त्रिव्योमहात्मन इत्यादि महाभारतेच। सहस्रस्थूणे वितरेद्धडे उभे यत्र देवानामधिदेवास्तेध्रुवं तमस्यरजसः पराकेयोस्याध्यक्षः परमेव्योमन्

भाषाकान्तिप्रकाशिका

वैकुन्ठको अप्राकृतपनो परम आगमों को चूडामणि श्रीनारदपंचरात्रमें लिख्योहै जितंते

स्तोत्र में वैकुन्ठनामको लोकदिव्य छयगुण के ऐश्वर्यसे युक्त अवैष्णावोंको नही मिलै तीनगुणा से वर्जित नित्य सिद्धजामें रहैं। सभा महल वन उपवन वापी कूप तडाग वृक्ष खन्डोंसे शोभायमान सो अप्राकृत है। सब देवताजाको बन्दना करैं हैं दसहजार सूर्यसमानकांति है। प्रकृष्टसत्व से संपूर्ण है ताको नेत्रसे मैं कब देखोंगो अग्नि सूर्यसे भी विशेष प्रकाशमानसो विष्णु महात्मा का स्थानहै इत्यादि श्रीमहाभारतमें लिख्योहै हजारों स्थूनका जामें विस्तार क्षयतमरजसे परे याके अध्यक्ष पर व्योम हैं

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्वार्द्ध

तद्विप्रासोविपन्यव जागृवांसः समिंधते यत्पूर्वं साध्या सन्तिदेवास्तद्विष्णोः परमं पदं सदापश्यंति सूरय इति श्रुतौ च सहस्र पत्र कमलं गोकुलाख्यं महत्पदं। तत्कर्णिकार तद्धामतदन तांश सं भवं। किंजल्कं महदात्मषट्कोणं वज्रकीलकम्। षडंगषट्पदीस्थान प्रकृत्या पुरुषेणच। प्रेमानन्द महानन्दरसेनावस्थितंहियत्। ज्योति रूपेण मनुना कामबीजेन सङ्गतं। तत्किंजल्कंतदंशानां तत्पत्राणि श्रियामपि। चतुरस्रं तत्परितःश्वेतद्वीपाख्य मद्भुतम्

भाषा कांति प्रकाशिका

हे विमाता वैकुन्ठमें व्यवहारजिनके ग्ये जागवे वाले सम्यक्प्रकारवसैं हैं। जामें पहिले

साध्यदेव हैं सो विष्णु को परमपद है ताको सद सुरिनाम भगवान के पार्षद देखे हैं यह श्रुतिमें है। सहस्त्र पत्रकोकमल गोकुलनाम को महत्पद ताको कर्णिकामें तिनकोधाम है, सो अनंत जो शेषजी तिनके अंशसे उत्पन्न भयो है जामें बड़ो कर्णिका छयकोनेको वज्र करके कीलित है। छयअंग षठपदोको स्थान है प्रकृति पुरुषकरके युक्तहै जो प्रेमानन्द महानन्द रस करके अवस्थित है। मंत्रकी ज्योति और काम बीज करके संगतहै ताही ज्योति व बीज के केसरा और अंश सब पत्ता और श्री है

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

चतुरस्रं चतुर्मूर्त्तिश्च तुर्धाम चतुष्कृतम्। चतुर्भिः पुरुषार्थैश्च चतुर्भि र्हेतुभिर्वृतम्। शूलैर्दशभिरानद्ध मूर्द्धाधोदिग्विदिक्ष्वपि। अष्टाभिर्निधिभिर्जुष्टमष्टाभिः सिद्धिभिस्तथा। मनुरूपैश्चदशभिर्दिक्पालैः परितोवृतम्। श्यामैर्गौरैश्च रक्तैश्च शुक्लैश्च पार्षदर्षभैः। शोभितं शक्तिभिस्ताभिः अद्भुताभिः समंततः। गोकुलाख्य मित्यनेनाग्रे गोपी बालकरूपत्वं गोलोकस्य

भाषा कांति प्रकाशिका

सोचारो ओर से अद्भुत श्वेतिदीप नाम को है। चौकोर चार मूर्ति वासुदेवादि चारव्यूह चारधाम चारकृति करके बढ्यो है। चारपुरुषार्थ

अर्थ धर्म काम मोक्ष चारहेतु तिनपुरुषार्थों के साधन तिनसे युक्तहैं। ऊंचे नीचे दिशा विदिशा में दशशूलोंसे घिररह्यो हैं आठनिधि १ महापद्म २ पद्म ३ शंख ४ मकथ ५ कच्छप ६ मुकुन्द ७ कुन्द ८ लीला आठसिद्धि १ अणिमा २ महिमा ३ लघिमा ४ प्राप्ति ५ प्रकाम्य ६ ईशता ७ कामावशायिता ८ वशिता जाकीसेवाकरैं। मंत्ररूपजो दशदिग्पाल सो चारो ओरसे घेरेरहैं श्यामगौर रक्तशुक्लपार्षद श्रेष्ठो से शोभित हैं विमलादिसब अद्भुतशक्ति करके शोभायमान हैं गोकुल यह नाम कहिवे से गैया व गोपियोंको वासरूप गौलोकवर्णनकियो

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

विवक्षितं गोकुलमित्याख्या रूढिर्यस्येति निरुक्तेः रूढिर्योगम पहरतीतिन्यायेन। तत्स्वरूपं तु तदनंतांश संभवमिति अनन्तस्य श्री बलरामस्यांशेन ज्योतिर्विभाग रूप विशेषेण संभवः सदाविर्भावोय स्य तदित्यर्थः। निखिलमन्त्रगण सेवितस्य श्रीमदष्टादशाक्षर गोपाल महामन्त्र राजस्य मुख्यपीठमिदमेवेत्याह। कर्णिकार मित्यारभ्य काम बीजेन संवृतमित्यन्तेन अत्र प्रकृति मन्त्रस्य स्वरूप श्रीकृष्ण एवकारण रूपत्वात्पुरुषोऽपि तदधिष्ठातृ देवतारूपःसम्पद्यते चायंचतुरूपेण मन्त्रेमन्त्र कारणरूपत्वेन वर्णसमुदाय रूपत्वेन अधिष्ठातृ देवता रूपत्वेन देवता रूपत्वेनचेति

भाषाकान्तिप्रकाशिका

जाकी गोकुल यह आख्या रूढि है रूढि

योगको हरै है यान्यायते ताको स्वरूप वर्णन करैं हैं सो अनन्तके अंशसे उत्पन्न भयो अर्थात अनन्त जो श्रीबलराम तिनके अंशज्योतिविभाग रूप विशेष से सदा उत्पन्न भयो सब मन्त्र गण जाकी सेवा करैं सो अठारह अक्षर को गोपाल महामन्त्र राजताकों यह मुख्य पीठ है सोई कह्यो है कर्णिकार यहांसे आरम्भ करके कामबीज करके संगत या अंतपर्यंत या में प्रकृति मन्त्रके स्वरूप श्रीकृष्णा हैं। कारणरूपसे पुरुष भी ताके अधिष्टाता देवरूप है सोई चार रूपसे मन्त्र में दिखाई पडै हैं मन्त्र के कारण रूपतासे अक्षर समूह रूपसे अधिष्टाता देवता रूप से देवतारूप से

सिद्धान्तरत्नावली

तथाहि श्रीगोपाल तापनीयं श्रुतिः वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो जन्ये जन्ये पञ्चरूपोबभूव कृष्णस्तथैको जगद्धितार्थं शब्दनासौ पञ्च पदोविभातीति तथा हयशीर्ष पञ्चरात्रेपि वाच्यत्वं वाचकत्वञ्च देव तामन्त्रयोरिह। अभेदेनोच्यते ब्रह्मस्तत्व विद्भिर्विचारत इति दुर्गाया अधिष्टातृत्वं च शक्ति शक्ति मतोरभेदात् श्रीकृष्णस्यैव दुर्गानाम शक्तिः अतोनेयं मायां शभूता दुर्गा तथाच परमागम चूडामणौ नारद पञ्चरात्रे श्रुति विद्या सम्वादे जानस्येका पर कांत सैव दुर्गातदात्मिका। या परापरमाशक्तिर्महाविष्णु स्वरूपिणी यस्या विज्ञानमात्रेण

भाषाकांतिप्रकाशिका

तैसे ही गोपालतापनी की यह श्रुति है एक पवन जैसे भुवनमें प्रवेश होके देह देहमें पांच रूप से होती भयी, श्रीकृष्णा भी तैसे ही जगत के हितके अर्थ शब्द करके पांच पद रूप से प्रकाश पावै हैं तैसे ही हयशीर्षपंचरात्र में वाच्य बाचक देवता मंत्रतत्वके जानवे वारे विचार के इन चारों को भेद रहित बतावै हैं या प्रकार दुर्गाकोंभी अधिष्ठातापनो है। शक्ति अंशक्तिमान को अभेद है। दुर्गा नाम शक्तिश्री कृष्णा की है तासे यह दुर्गामायाकी अंशभूत नहीं है। सोई परम आगमचूडामणि नारदपंच रात्र श्रुति विद्याके सम्वाद में है, जो एक परम कांत को जानै सोई दुर्गातदात्मिका है जो सब से महापरमाशक्तिमहाविष्णु स्वरूप धारी है जाके विज्ञान मात्र से देवों के

सिद्धान्त रत्नाञ्जली

पुराणां परमात्मनः । मुहूर्तार्द्धं न देवस्य प्राप्तिर्भवति नान्यथा एकेयं प्रेमसर्वं स्वभाव श्रीगोकुलेश्वरी अनयासुलभोऽयं आदिदेवो खिलेश्वरः । भक्तिर्भजन सम्पत्तिर्भजते प्रकृतिः प्रियम् । ज्ञायतेऽत्यन्त दुःखेनसेयं प्रकृति रात्मनः । दुर्गेतिगीयते सद्भिर खण्डरस वल्लभा

अस्याधरिकाशक्तिमंहा माया खिलेश्वरी। यया मुग्धं जगत्सर्वं सर्वं देहाभिमानिन इति तत्पत्राणिश्रियाम पीत्यत्र बहुवचनं पूजार्थंधि यस्मात्र यस्या गोपीरूपायाः श्रीराधिकायाः उपवनरूपाणि धामानी त्यर्थः गोपीरूपत्वं चास्यमन्त्रस्यतन्नामलिंगतत्त्वात् अथचतुरस्त्रेण्य

भाषाकान्ति प्रकाशिका

देवश्रेष्ठ परमात्माकी मुहूर्त्तमात्रमें प्राप्ति होजाय अन्यथा नहीं। एकयही गोकुलेश्वरी प्रेमके सर्वस्व भाववारी है या करके आदि देव अखिलेश्वर सुलभ हैं। भक्ति - भजन - संपत्ति प्रकृति प्यारे को भजैं हैं सो वह आत्मा की प्रकृति दुःखकरके जानी जाय है या अखण्ड रस वल्लभा को महात्मा दुर्गानाम कहैं हैं। इन्हीं की आवर कानामनीचेकी शक्ति अखिलेश्वरी महामाया है जाकरके सब जगत देहाभिमानी मोहित हैं इति ता कमलके पत्ता श्रीरूप हैं बहुवचन पूजा के अर्थ है श्री नाम तिन की प्यारी गोपी श्रीराधिका कोहै उनके उपवन रूप धाम हैं। गोपीरूप जो श्री राधिका तिसके नामसे यह मन्त्र चिन्हित है। चतुस्त्रेय अर्थात चौकोर अंतरमंडल श्रीवृन्दावननाम जाको

सिद्धान्त रत्नाञ्जली

ऽन्तमंण्डलं श्रीवृन्दावनाख्यं श्रेयं तथा च बृहद्वामने श्रुतिवाक्यं । आनन्द रूपमिति यद्वदन्तिहि पुराविदः । तद्रूपं दर्शयास्माकंयदि देयो वरोहितः । श्रुत्वैतद्दर्शयामास स्वलोकं प्रकृतेः परं । केवलानुभवानन्द मात्रमक्षरमव्ययं । यत्र वृन्दावनं नाम वनं कामदुघैर्द्रुमैः मनोरम निकुञ्जाढ्यं सर्वर्त्तु सुख संयुतमित्यादि उक्तश्चायं गोलोकः श्रीमद्भागवते नन्दस्त्व तीन्द्रियं दृष्ट्वालोकपाल महोदयं कृष्णेच सन्नतिं तेषां ज्ञातिभ्यो विस्मितो ब्रवीत् तेचौत्सुक्यधियो राजन्मत्वा गोपास्तमीश्वरं । अपिनः स्वगतिं सूक्ष्मामुपाधास्य दधीश्वरः

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सो जानौ सोई बृहद्वामन पुराणमें श्रुति के वाक्य हैं-पहिले के ज्ञाता जाको आनन्द रूप बतावैं जो आप हमको वरदेवतौ तारूप के दर्शन करावो। इत्नो सुनके प्रकृतिसे परे जो लोक श्रुतियोंको ताके दर्शन करावते भये केवल अनुभव आनन्द मात्र कबहू नाश न होयमध्य विराजै जहांवृन्दावन नाम बन जाके वृक्षसब कामना के दुहिवेवारे मनको रमावै ऐसी जामें निकुञ्जहैं। सब ऋतु के सुखों से भरोभयो है याही गौलोककी श्रीमद्भागवत में वर्णन है नन्दजीने वरुणलोकको अपूर्व वैभव देख्यो और श्रीकृष्णमें तिनकी दीनता देखी तब अपने जातिवारे गोपोंसे कहते भये तब सब व्रजवासियोंकी बुद्धिकी बडी उत्कंठा भई

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

इति स्वानां स भगवान् विज्ञायाखिलदृक्स्वयं । संकल्प सिद्धये तेषां कृपयैतदचिंतयत् । जनो वै लोकएतस्मिन्नविद्याकामकर्मभिः । उच्चावचासु गतिषु नवेदस्वां गतिं भ्रमन् । इति संचिन्त्य भगवान् महाकारुणिको विभुः । दर्शयामास लोकंस्वं गोपानां तमसः परम् । सत्य ज्ञानमनंतं यद्ब्रह्मज्योतिः सनातनं । यद्धिपश्यन्ति मुनयो गुणापाये समाहिताः तेतुब्रह्म ह्रदंनी तामग्नाः कृष्णेन चोद्धृता । ददृशुर्ब्रह्मणो लोकं यत्राक्रूरोऽध्यगात्पुरा । नंदादयस्तुतं दृष्ट्वा परमानन्द निर्वृताः । कृष्णं च तत्र छन्दोभिः स्तूयमानं सुविस्मिता इति स्वगति स्वधाम

भाषाकान्तिप्रकाशिका

और गोप श्रीकृष्ण को ईश्वर जान के बोलते भये कि अधीश्वर कृष्ण अपनी सुक्ष्मा गतिअर्थात अपनो धाम दिखावैंगेका सोभगवान अंतर्यामी अपनोंको संकल्प जानके ताकी सिद्धि के अर्थ कृपाकरके इतनो चिंतवन करतेभये कि यह साधारण ब्रजवासी जन यालोकमें अविद्या तासे काम तासे कर्म तासे ऊंची नीची गतिमें भ्रमे हैं और अपनीगति को नहीं जानै, दयालू भगवान ऐसे चिंतवन करके तमसे नाम माया से परे अपनो गोलोक दिखावते भये जो सत्यज्ञान अनंत जो ब्रह्मज्योति सनातन है जाको मुनिगणसत्वरजत-मतिनके नाश भये पीछे सावधान होके देखैं हैं

तिनको पहिले ब्रह्महृदमें डुबाये अर्थात ब्रह्माकार वृत्तिकर दीनी फिर जैसे विषयोंसे निकारकै

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

सूक्ष्मां दुर्ज्ञेयां अणुःपंथाविततः पुराण इत्यादौ श्रुतेः उपाख्यान्य दुपाख्यास्यति अस्मान्यापायिष्य तोल्पर्यः इतिनिश्चितवंतइतिशेषः अयं व्रजवासी जनः अविद्या द्विभि रूच्चावच्चा सुमनुष्यतिर्यगादि रूपा सुनुमन स्वरूप मज्जानन स्वलोकं गोकुलं ब्रह्मणः परमसूक्ष्म स्वं यलोक गोलोकाख्य इहुराः ननुलोकवैकुण्ठनामानमित्यादि श्रीनारदपंचरात्रेजितंते स्तोत्रोक्तया सर्वे पंचोपनिषन्मुखरूपा इतिपाद्मोक्तः पंचोपनिषत्प्रधान पंचाक्षर वाक्यः प्राकृत हृत्यानुविद्धवैकुण्ठं तस्यापि प्रतीतिः कोसौब्रह्मह्रदयस्त आहृयत्रेति तथाच्चगोपानामिति

भाषाकान्तिप्रकाशिका

ब्रह्ममें लगावै तैसे ब्रह्मदहसे ऊंचे निकारे तब वे ब्रजवासी ब्रह्मको लोकदेखते भये जहां शुकपरीक्षत के सम्वादसे पहिले अक्रूरजाते भये नन्दादिकताको देखके परमआनन्द पावते भये औरश्रीकृष्णकी तहां वेदोंसे स्तुति हो रही है सो देखके विस्मय को प्राप्त भये इति, तामें स्वगति नाम अपनो धामसूक्ष्म नाम जानो न जाय। अणुः अर्थात सूक्ष्म पंथा विस्तरित पुराणो है इत्यादि श्रुति में है यह साधारण ब्रजवासो जन अविद्यादि करके ऊंची नीची मनुष्य तृय-गादि रूपके विषय भ्रमै हैं। अपने गोकुलको स्वरूप

नहीं जानै परमबृहत्तम जोब्रह्म ताको लोकदेखने भये तामें यह शंका है कि लोक तौवैकुन्ठ नामको इत्यादि श्रीनारद पंचरात्रमें जितंते यास्तोत्रकी उक्तिसे सब पांच उपनिषतस्वरूप के यापद्म पुराणकी उक्तिकरके पांच उपनिषत्प्रधान

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

पष्टिनिर्दिष्टं शाब्य मेव गौलोकाख्य इति ज्ञायते सर्वं लोकोपरि विराजमानत्वं चास्य परमागम चूडामणौ श्रीनारद पञ्चरात्रे विजयाख्याने तत्सर्वो परिगोलोकस्तत्र लोकेश्वरः स्वयं विहरेत्परमानंदो गोविन्दोऽतुलनायक इति चैव सर्वो परिविराजमानत्वेपि सर्वगत एवायं श्रीगोलोकः श्रीमन्नारायण वदप्राकृता प्राकृत वस्तु व्यापकः। नयत्र माया किमुता परेहरे रनुव्रता यत्र सुरा सुरार्चिता इतिद्वितीय स्कन्ध वर्णितं कमलासन दृष्टवैकुण्ठ यच्चापि व्रजवासिभि र्दृष्टमिति भावः अत्रभूमौचायं श्रीगोलोकाख्यः वेदेप्रसिद्धः तथाहि यमुनातीरे गोकुलाख्ये निवसंतं बाला नन्दन हेगोपः श्रीमतं मांवर्जितनाथमाकृपि लोकं माकेशव निमाशोभिध्यात्मा परमात्मा प्रियतमस्यं भातोक्ति

भाषाकांतिप्रकाशिका।

पांचअक्षर वाच्य अप्राकृत द्रव्यको विधो भयो वैकुंठ और भी प्रतीत होय है सो कौन ब्रह्मह्रद है ताकोकहैं कि जामें अक्रूर पहिले जातो भयो गोपानांयोषष्टिके निर्देशसे गौलोक नामजानो जाय है। सब लोकोंके ऊपर विराजमान होनो याको परम आगमचूडामणि श्रीनारदपंच रात्रमें लिख्यो है विजय आख्यानमें सोगौलोक

सबके ऊपर है, जहां स्वयं परमानन्दी गोविन्द अतुल नायक विहार करैं हैं। यद्यपि सबसे ऊपर विराजमान है, तबभी सब नीचे ऊपरमें व्यापक है जैसे श्रीनारायण सब प्राकृत अप्राकृत वस्तुमें व्यापक है तृतीयस्कन्दमें जैसे ब्रह्माके देखे भये वैकुन्ठको वर्णन है जा वैकुन्ठमें सबकी मूल माया ही नही जहां हरिके पार्षद, सत्वगुणी देवता रज तमवारे असुर जिनकी पूजा करैं वे रहैं हैं तैसोही यह अप्राकृत गोलोकको ब्रजवासी देखते भये

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि पूर्वार्द्ध

स्रष्टा त्रिलोका विष्णुर्वेदे हे पङ्कजनेत्र माधव हृषीकेशांग पद्मोद्भव मायेन्द्र शरीर माकृती मूर्त्तिमान्विगतान्विगतोहि । इति स्वा मवेदे विष्णुस्तोत्रे । तानान्युश्मसि गमध्यै यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः अत्राहतदुरुगा यस्य ब्रह्म परमंपदमव भातिभूरीति ऋग्वेदे । यातेधा मान्युश्मसीति विष्णोः परमंपदम वभाति भूरीति यजुर्वेदे पंच श्री मदष्टा दशाक्षरी गोपाल विद्या यामुख्यपीठस्य श्रीगोलोकाख्यस्यश्री चिदानन्द रूपत्वं सिद्धा । चिंत्यशक्तित्वेनोभ यत्रापि नित्यत्वं सिद्ध

भाषा कांति प्रकाशिका

याभूमिमें भी यह गौलोक नामको वेद में प्रसिद्ध है तथा यमुना के कनारे रमणीक गोकुल में बसैं बालानन्दन यहगांवःमायाको जो क्षोभकरै

जाको कोई नाथ नहीं लक्ष्मीके अर्थबनायोश्रोक नाम स्थान लक्ष्मी सहित केशव नितरां लक्ष्मी शोभित अध्यात्मा परमात्मा मित्र तासे बढी सो अग्नि को रचन हारो सबको भोक्ता ऐसे विष्णु को वन्दन करौं॥१॥हे पंकजनेत्र लक्ष्मीसहिततुम हृषीकेशको लक्ष्मी सहित कमल भयो जाते ऐसे तुमको लक्ष्मी सहित वेद शरीर को लक्ष्मी सहित आकृतमूर्तिको लक्ष्मीसहित॥२॥विगति अविगति यहसामवेद के विष्णुस्तोत्रमें वातानि (वस्तूनि) प्रकाशमान स्थान जहां बड़ी शृङ्गवारी गैया शोभा मानताको हम ध्यान करैं तहां कहै सो बड़े प्राक्रम बारे विष्णुकोपरमपद बहुत प्रकाश होरहोहै यह ऋगवेदमेंहै॥३॥जातुम्हारे धामप्रकाशमान इति विष्णुको परमपदबड़ो प्रकाशै है यह यजुर्वेदमें४ ऐसे ही श्रीमदष्टादशाक्षरवारी गोपाल विद्याको जो गोलोक को मुख्यपीठ है सो चिदानन्दरूप सिद्ध भयो तौ गौ लोककी अचिन्त्यशक्तिहैतासे ऊपरनीचे नित्यपनो सिद्धभयो

और भी भगवतसम्बन्धकी वस्तुवर्णनकरै

वै जिनको भगवतसमानपूज्यत्वहै श्रीकृष्ण१भक्त २भागवतशास्त्र३तुलसी४श्रीकृष्णकेवासर५हरि-वासर६ महाप्रसाद इत्यादि तामें पहिले भक्तवर्ण नकरैंहैं यद्यपिप्रथम परिछेदमें इनके भेद वर्णन किये हैं पर प्रकरण प्राप्तफिर भी वर्णन करैं हैं श्रीकृष्णको भावजिनके हृदयमेंनिरन्तर वासकरैं उनकोनाम भक्तहै सोई नवमस्कन्दमेंस्वयंभगवान ने कह्यो१मोमें तिनने पक्कोहृदयबांध्यो समदर्शी साधूमोको भक्तिकरकेऐसे वशकरलेयजैसे सुन्दर स्त्री सुन्दरपुरुषको वशकरलेय२साधूमेरे हृदयहैं मैंभक्तोंको हृदयहौं मेरे बिनावि और को नहींजानैं मैंउनकेबिनाऔर कोई को कुछ नहींजानौंऔरभी भगवानके वाक्यहैं३चारवेदको वक्ता अभक्तमो-कोप्यारो नहीं मेरो भक्तश्वपचमोको प्यारो है

१श्रीभागवतेमयि निर्बद्ध हृदयाःसाधवो समदर्शिनः। वशीकुर्वन्ति मांभक्त्या सत्स्त्रियः सत्पतिं यथा

२— साधवो हृदयं मह्यं साधूनां हृदयं त्वहं। मदन्यत्तेन जानन्ति नाहंतेभ्यो मनागपि

३— नमे प्रियश्चतुर्वेदी मद्भक्तःश्वपचः प्रियः। तस्मैदेयंततो ग्राह्यं सच पूज्यो यथा ह्यहं

४—शद्रमेनशूद्रा भगवद्भक्तास्तेतु भागवता मता। सर्ववर्णेषु ते शूद्राये ह्यभक्ता जनार्दने

ताके अर्थ देनों तासे ग्रहणकरनो सो मो समान पूज्य है। पद्म पुराणमें भगवद्भक्तशूद्र नहीं वे भागवत है। सब वर्णोंमें वेशूद्र हैं, जोहरिके अभक्तहैं। काशीखंडअ्र चत्वरित्रमें हैं १ ब्राह्मणक्षत्री वैश्यशूद्र चाहै कोई और होय विष्णुभक्तिसंयुक्तसो सबसे उत्तम है

और मुख्यव र्णाश्रमीहरि भक्तही हैं, अभक्त नवर्णी न आश्रमी। इनके विशेष प्रमाण देखनेहोंय तौ श्रीनिम्बार्कभगवान औरपण्डितको सम्वादसुध र्मध्वबोधग्रंथमें देखो भगवानजामें प्रतिपाद्य ताको भागवतशास्त्रकहैं श्रीमद्गीताभागवतादि २स्कन्दपुराण में लिख्यो है वैष्णवशास्त्र जोसुनैं पठनकरैं हैं, वे मनुष्यलोकमें धन्य हैं उनके ऊपर कृष्ण प्रसन्नहोंयहैं ३ जिनकेमन्दिरमें वैष्णवशास्त्र लिखे भये विराजै हैं तहां है नारद साक्षात नारा–

१काशी खण्डेध्र चत्वारिंशे ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यःशूद्रो वाथ चेतरः । विष्णु भक्ति समायुक्तो ज्ञेयः सर्वोत्तमोत्तमः

२—स्कान्दे वैष्णवानि सुशास्त्राणि ये शृण्वंति पठन्ति च । धन्यास्ते मानवा लोके तेषांकृष्णः प्रसीदति

३ –तिष्ठन्तिवैष्णवं शास्त्रं लिखितं यस्य मन्दिरे । तत्र नारायणोदेवः स्वयं वसति नारद

यणादेव स्वयंवास करैंहैं।तुलसीजी श्रीभागवतमें रासमेंश्री कृष्णकेअंतर्ध्यानसमयगोपीपूछैं १ हे हेतुलसीकल्याणी!तुमगोविन्दके चरणकी प्यारी हौ तुमको भौरावोंकी भीड़ सहित गोविन्दधारण करैं हैं तुमने अच्युत श्रीकृष्णदेखेहैं २ स्कन्दपुराण मैं जो कोई तुलसीको दर्शन करैं स्पर्शकरैं ध्यान करैं कीर्त्तन करैं दन्डवत करैं सुनैं आरोपणकरैं नित्यपूजन करैं ऐसे नवप्रकार से दिन दिन मैं तुलसीको सेवैं हैं वे कोटि हजार युग हरिके घर मैं वासपावैं हैं

सिद्धांतरत्नमालिपूर्वार्द्ध

भोक्तृ त्वच पत्रं पुष्पं फलं तोयं योमेभक्त्या प्रयच्छतीत्या दौ प्रसिद्धमेव तस्यं याहुः पिप्पलम् स्वाद्वत्ति इत्यादौ श्रुतौच नत्वा नयनश्नन्याभि चाकशीति श्रुतिविरोधइति वाच्यं तस्याः प्राणधारण भूताशन निषेध विषयत्वात् प्रीति तस्तु तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मन इत्यादि वचनात् सत्यकामः सत्यसङ्कल्पो भगवान् शुभा न् भोगान् भुनक्त्येवेति सर्वं परमास्तिकानां मत

भाषाकान्तिप्रकाशिका

श्रीकृष्णके वासरे रामनौमी जन्माष्टमी

---

१ श्रीमद्भागवते । कच्चित्तुलसिकल्याणि गोविन्द चरण प्रिये । सहत्वालि कुलै बिभ्रद् दृष्टस्ते अच्युत प्रियः

२— स्कन्द पुराणे । दृष्टा स्पृष्टा तथा ध्याता कीर्त्तिता न मता श्रुता । रोपिता सेविता नित्यं पूजिता तुलसीशुभा । नवधा तुलसींदेवीं येभजन्ति दिनेदिने । युगकोटि सहस्राणि तेवसन्तिहरेर्गृहे

आदितामें १कृष्णजन्मदिन भवष्योत्तरपुराणमेंहे जनार्दन! श्रीदेवकीने जादिन तुम को जन्माये सो दिन हमको कहिये आपको उत्सब करैंगे तासे जो आपके प्रपन्न हैं उनके ऊपर हे केशव प्रसाद करौ हरिवासर अर्थात २ एकादशी जो भक्तिकरके भक्तिमान एकादशी व्रत करैं हैं सो परमस्थानको प्राप्त होयहै। जहां स्वयं देवहरि रहैं हैं महाप्रसादकी महिमा भगवानने गीता जीमें कह्यो कि पत्रफूलफल जल जोमोको भक्ति करके देवै सो मैं भोजन करजाऊं यह प्रसिद्धहै तामें शंकाउपजी कि श्रुतिमें जीबको भोगलिखो है सो पिप्पल नामसंसार के विषय स्वादपूर्वक खायहै और भगवानबिनो भोजन के प्रकाशपावै है तौ विरोधभयो ताको समाधान यहहै कि श्रुति प्राणधारणाके भोजनको निषेध करै है प्रीति से

१–कृष्णाष्टमी भविष्योत्तर यस्मिन दिने प्रसूतेयं देवकीत्वां जनार्दन। तद्दिनं ब्रूहि वैकुण्ठ कुर्मस्ते यत्र चोत्सवं। तेनसम्यक प्रपन्नानां प्रसाद कुरुकेशव

२— एकादशी एकादशी व्रतं यस्तु भक्ति मानकुरुते नर सयाति परमं स्थानं यत्र देवो हरि स्वयं

तौ भगवान आपही कहैं हैं कि मैं भोजन करौ हौं, सत्यका, सत्यसंकल्पभगवान शुभभोगभोगैं हैं। यह सबपरमआस्तिकोंका मतहै, तासेभगवतप्रसादी वस्तुको प्राकृत जानके निरादर करनो अनुचित है, वैष्णवको अपराधहोय है। पहिले आपसेयाचना न करवेको अपराध दूसरेकोई देदैं तो तिरस्कार करै सो महान अपराध है। वस्तु का स्वाद विशेष होजानो और बढ़जानो यह भोग लगे की प्रतीति है

सिद्धान्त रत्नाञ्जली

तत्रोपास्य विशिष्टेष्ट देवता युगल स्वरूप मनुस्मरति अङ्गेया दि अङ्गेतुवामे वृषभानुजां मुदा विराजमानां मनुरूप सौभगां । सखी सहस्रैः परिसेवितां सदास्मरेम देवीं सकलेष्ट कामदां । ५ अनन्ताच त्य कल्याण गुण गणस्य श्रीकृष्णस्य वामांगे श्रीवृषभानुनन्दनीं देवीं स्मरेम इत्यन्वयः कीदृशीं सकलेष्ट कामदां अभीष्ट फलदां देवींतां तत्समानां सखीगणैः सेवन स्थान स्थिताभिः परम सुखैश्वर्याभिःश्रीललि ता रंगदेव्यादिभिः सेवितां सर्वतः सेव्यमानां अतश्चाधिकतर विरा- जमानां अनुरूप सौभगा मिति अनुरूप सौभगं यस्याः तां यथोक्तं श्रीभागवते तांरूपिणीं श्रियमनन्य गति निरीक्ष्यया लीलयाधृततनोरनु रूपरूपाम् । प्रीतः स्मयन्नलककुण्डल निष्ककण्ठम्

भाषाकान्ति प्रकाशिका

उपास्यजोश्रीकृष्णसोई इष्टदेवता तिनके युगलस्वरूपश्रीराधातिनकोनिरंतर स्मरण करैं

हैं समस्तदोष करके रहित अनन्तकल्याणगुण के समूहजो श्रीकृष्णा तिनकेवांये अंगमें श्रीवृष भानुनन्दनीतिनको हमस्मरण करें हैं अर्थात ध्यान करें हैं वेश्रीराधा सकल इष्टमनोर्थकीदाता हैं और देवी अर्थात प्रकाशमान हैं सहस्रअर्थात अपरमित अनगिन्ती सखियों के समूह अपने अपने सेवाके स्थानमें स्थितिपरमयुथोंकी ईश्वरी श्रीललिता रंगदेवी आदिकु वंचारों ओरसे सेवा करें हैंताते अधिकतर विराजमान हैं और श्री कृष्णा के अनुरूप अर्थात वरावर हैसौभाग जिन को सोई श्रीभगवान तारूपिणी श्री अनन्यगति को देखके जो लीलाही करके श्रीकृष्णाकेअनु--रूप रूपधारण करैं प्रीति से मुस्क्याती भयी, अलकावली मुख पर पड़ी, कंठमें धुकधु की, मुखमंदमुस्क्यानकी

सिद्धान्तरत्नाञ्जलिपूर्तौ

चकोऽलकावलिस्मल स्तुवां हरिप्रत्र भावइति अत्रायमाशयः अन पायिनी भगवत श्रीः स साक्षादात्मनो हरेरिति श्रीभागवतोक्तेः श्रियो नित्या विनाभाव सम्बन्धः सर्वसम्मतः तत्र श्रियोऽनेकरूपे श्रीश्चलक्ष्मी श्चेति तथाहि श्रुतिः श्रीश्चतेलक्ष्मीश्चपत्न्या वहोरात्रे पार्श्वं इति ग- न्ध द्वारा दुराधर्षां नित्य पुष्टांकरीषिणी । ईश्वरीं सर्व भूतानांतामि होपाह्वये श्रिय मिति तत्र याश्रीः सा वृषभानोस्त नयायाच लक्ष्मीः सा॰

रुक्मिण्यादि रूपा देवत्वे देवदेहेयंमानुषत्वे च मानुषी । विष्णोर्देहा नुरूपां चकरोत्येषात्मनस्तनु मिति वैष्णवोक्तेः १ यां यां तनुमुपादत्ते भगवान् हरिरीश्वरः । तां तां श्रीरप्यथांशेन भगवतो न पायिनीति श्रीनारदोक्तेश्च २

भाषाकान्तिप्रकाशिका

सुधासे शोभायमान तिनसे बोले आशय यह है कि भगवती श्रीहरि आत्माकीहै यह भागवतमें लिख्यो है। श्रीकोहरिको नित्य भावसंबंध सबको सम्मतहै तामें श्रीके दोरूप हैं एक श्री दूसरी लक्ष्मी सोई श्रुतिमेंलिख्यो है। श्री और लक्ष्मी आपकी पत्नी दिनरात आपके निकट विराजैं हैं। गंधके द्वारा कोईसे धर्षण करवेमें न आवैं नित्य पुष्टकरवेवालीसब भूतोंकीईश्वरी ऐसी श्रीको हमबुलावैं हैं तामें जोश्री सोव्रषभान की बेटी और जो लक्ष्मी सो श्री रुक्मिण्यादिरूपहै सोई वृहद्वैष्णवमें कह्यो है- जब भगवानदेवता होंय तब वे देवीरूप धारणकरैं और जब कृष्णमनुष्यहोंके अवतार लेय, तब मानुषी होय या प्रकार विष्णुके देहके अनुरूप आत्माकी मूर्ति करैं और श्रीनारदजीनेकह्यो है, जों जो मूर्तिभगवानहरि ईश्वर ग्रहण करैं श्रीभी भगवानकी अनपायिनी सोई रूप अवश्य करके धारण करैं हैं

सिद्धान्त रत्नाञ्जलि

तत्र श्रीराधिकायाःसर्वस्वरूप श्रेष्ठत्वंश्रुतिः । प्रमाण्यात् तथाहि श्रुतिःराधयासहितोदेवोमाधवे नचराधिका । योनयोर्भेदं पश्यतिसन्न सृतेर्मु कोन भवतीति । ३ वामांगेसहितादेवी राधा वृन्दावनेश्वरीति कृष्णोपनिषदि । ४॥ परमागमचूडामणौ श्रीनारद पञ्चरात्रेच । हरेरर्द्धं तनू राधा राधामन्मथसागरा । राधा पद्माख्या पद्मानामग्रगाधानत्र योगिनाम् ॥ ५ ॥ पुनस्तत्रैव । राधया सहितं कृष्णंयः पूजयति नित्य शः । भवेद्भक्तिर्भगवति मुक्तिस्तस्य करे स्थितेति ॥ ६ ॥ श्रियं विष्णुं च वरदावा शियं प्रभवाउभौ । भक्त्या सम्पूजयेन्नित्य यदीच्छेत्सर्वं सम्पद इति ॥ ७ ॥ ब्रह्म वैवर्तेच । लक्ष्मीर्वाणीच तत्रैव जनिष्यंते महा मते । वृषभानोस्तु तनयाराधा श्रीर्भविता स्थितेति

भाषा कांति प्रकाशिका

तासे श्रुतिके प्रमाणते श्रीराधाको सबरूप से श्रेष्ठता है सोई श्रुति में कह्यो-श्रीराधा के सहित देव माधव औंर माधवके सहित राधा विराजमान हैं जो कोई इन दोनोंमें भेद देखैं हैं सो जन्ममरणसे नहिं छुटैं। कृष्णोपनिषद में भी राधावृन्दावनेश्वरी कृष्णके वाम अंग में विराजैं हैं॥४॥श्रेष्ठ सब आगमों के चूणामणि नारद पञ्चरात्रमेंभी है हरिकी आधे अंगश्रीराधा है राधामनकी मथनकरवेवारी सागर हैं। पद्मा नामकी जो जो लक्ष्मी हैं तिनमें पद्मा नाम

की श्रीराधा योगिनियोंको भी अगाधा हैं ॥५॥ औरभी तहांही लिख्यो है राधाके सहित कृष्ण को जो नित्य पूजनकरै हैं ताकी भगवानमें भक्ति होय है और मुक्तिनौ ताके हाथ में धरी है ॥६॥ श्रीमद्भागवत में श्रीऔर विष्णुये दोनों वर के दाता और मनोर्थके प्रगटकरबे वाले हैं जो सब संपदाकी इच्छा होय तौ भक्तिकरके सम्यक प्रकार इनकी पूजा करै॥७॥

सिद्धान्तरत्नाञ्जलि

बृहद्गौतमीयतंत्रेच । देवीकृष्णमयी प्रोक्ता राधिका परदेवता सर्वलक्ष्मीमयी सर्वकान्तिः संमोहिनी परा ॥ ९ ॥ ब्रह्मसंहितायां च यःकृष्णःसापिराधा याराधा कृष्णएवसः । अनयोरन्तरादर्शी संसारान्नविमुच्यत इति ॥ १० ॥ सम्मोहनी तंत्रे । तस्माज्ज्योतिरभूद्द्वेधा राधामाधव रूपकमित्यादि ॥ ११ ॥ अतश्च श्रीराधिकाया एवश्री रूपत्वेन श्रेष्ठत्व मितिसिद्ध इति श्रीमद्धरि व्यासदेवकृत सिद्धान्तरत्नाञ्जलौ पूर्वार्द्धं समाप्त

भाषाकांतिप्रकाशिका

ब्रह्म वैवर्त्त में लिख्यो है हे महामते लक्ष्मी और वाणी येदोनों तहांही जन्म लेंयगी और वृषभानकी बेटी जोराधा करके हैंसो निश्चय

श्रीहोंयगी॥८॥वृहद्गोत्मीतंत्रमें देवीश्रीराधिका कृष्णासमान वर्णान करी हैं सब लक्ष्मीमयी स्वर्णा कांति परासंमोहिनी है॥९॥ब्रह्म-संहितामें जो कृष्णा सोई निश्चय राधा हैं, जो राधा सोई निश्चय कृष्ण हैं इन दोनों में जो अंतर देखै सो संसार से नहीं छुटै ॥१०॥ संमोहनतंत्र में तस्मातकारणात एकज्योति राधामाधवरूप से दो प्रकारकी भयी॥११॥याते श्री राधिका को हो श्रीरूप करके श्रेष्टता सिद्ध भयी

(नोट)—या ग्रन्थ मैं ८२ पृष्ट की ८वीं पंक्ती से ९१ पृष्ट की १५वीं पंक्तीतक कठिन वेदान्त प्रकरण और ९७ पृष्ट के अन्त की १२ वीं पंक्ती जैसे " अग्निः " यहां से लेके ९९ पृष्ट के भाषा की दूसरी पंक्ति तक पंडित श्रीगणपतिजीशास्त्री तर्कतीर्थ कृत भाषा है।

श्रीमदाचार्य्य परम्परा

(२) श्रीमद्हंस भगवान्जी
(२) श्रीसनकादिक भगवानजी
(३) श्रीनारद भगवान्जी
(४) श्रीनिम्बार्क भगवान्जी
(५) श्रीश्री निवासा चार्य्यजी
(६) श्रीपुरुषोत्तमा चार्य्यजी
(७) श्रीविश्वा चार्य्यजी
(८) श्रीविलासा चार्य्यजी
(९) श्रीस्वरूपा चार्य्यजी
(१०) श्रीमाधवा चार्य्यजी
(११) श्रीबलभद्रा चार्य्यजी
(१२) श्रीपद्मा चार्य्यजी
(१३) श्रीश्यामा चार्य्यजी
(१४) श्रीगोपाला चार्य्यजी
(१५) श्रीकृपाचार्य्यजी
(१६) श्रीदेवा चार्य्यजी
(१७) श्रीसुन्दर भट्टजी
(१८) श्रीपद्मनाभ भट्टजी
(१९) श्रीउपेन्द्र भट्टजी
(२०) श्रीरामचन्द्र भट्टजी
(२१) श्रीवामन भट्टजी
(२२) श्रीकृष्ण भट्टजी
(२३) श्रीपद्माकर भट्टजी
(२४) श्री श्रवण भट्टजी।
(२५) श्रीभूरि भट्टजी
(२६) श्रीमाधव भट्टजी
(२७) श्रीश्याम भट्टजी
(२८) श्रीगोपाल भट्टजी
(२९) श्रीबलभद्र भट्टजी
(३०) श्रीगोपीनाथ भट्टजी
(३१) श्रीकेशव भट्टजी
(३२) श्रीगंगल भट्टजी
(३३) श्रीकेशवकाश्मीरीभट्टजी
(३४) श्री श्रीभट्टजी
(३५) श्रीहरिव्यास देवजी
(३६) श्रीस्वयंभूराम देवजी
(३७) श्रीकर्णहरदेवजी
(३८) श्रीनारायण देवजी
(३९) श्रीहरिदेवजी
(४०) श्रीश्याम दामोदरजी
(४१) श्रीसुतदेवजी
(४२) श्रीसहजराम देवजी
(४३) श्रीवृन्दावन देवजी
(४४) श्रीराम देवजी
(४५) श्रीधर्मदेवजी
(४६) श्रीसेवादासजी
(४७) श्री गोपाल दासजी
(४८) श्रीहंसदास जी

❀सिद्धान्तरत्नाञ्जलि संस्कृत का शुद्धि अशुद्धि पत्र❀

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	६	दानत्र	दानव
९	६	उपरक्षः	उपरतः
१२	६		क्षुपा
१६	८	न्द्रियादि	न्द्रियादि
१७	१	शु	शुच
१७	७	वं	जीवं
१८	५	चि	र्चि
२०	४	कर्म	कर्म
२२	४	यो	त्यो
२३	१	मकुण	मत्कुण
२४	५	व्याख्या	व्याप्त्या
२४	७	यु	शु
२७	४	पपत्या	उपपत्त्या
२६	६	काम	काय
२६	७	ऐक्य	दैक्या
३२	४	स्पार्श	स्पार्श
३२	७	मध्यई	मण्हई
३४	१	शिष्टो	विशिष्टो
३८	४	आत्म	आत्मा
३९	२	मुत्याद्य	मुत्पाद्य
४०	३	त्वादे	त्यवादे
४१	६	मुर्क	मुर्क
४३	३	चेम्म	चेल्त
५२	६	मीत्य	मीण्य
५२	९	श्रीत्म	श्रील
५५	५	वैष्वा	वैष्णवा
५५	५	इनि	इति

संख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६४	५	स्याहं	स्याह
६५	७	णि	पाणि
६७	३	उत्पत्तिक्रम	उत्पत्तिक्रम
७४	१	स्रोतोतो	स्रोतो
७६	१	व्यक्यो	व्यक्त्यो
८५	५	वेदेवि	वेदेपि
८७	८	अभ्यस्त	अभ्यस्ता
९१	२	सामाग्या	समिग्या
९२	३	अतश्च	अतश्च
९३	२	सर्वें	सर्वे
९६	२	प्राप्रया	प्राप्नुया
१००	३	मेकक्मेव	मेकमेव
१०१	५	यस्तु	वस्तु
"	६	पोय	पोन्य
१०४	१	करणां	करणां
"	७	निष्फलां	निष्फलां
१०४	१	पाश्ये	पाश्या
१०५	६	आर्णत्य	आनंत्य
१०६	८	भ्रांत	भ्रांति
११०	३	प्रभ्युच	प्रभ्युप
११०	६	क्षुत	क्षत
१११	१	चिपिनां	न्विपिनां
"	४	व्यत्पत्या	व्युत्पत्या
"	७	क्मिग्धं	स्मिग्धं
११३	१	पणां	पण
"	४	र्त्वमि	स्वमि
"	५	निर्विशेषु	निर्विशेषेषु
११४	६	ब्रया	भ्रत्या
११५	८	हवनयादि	हवनीयादि
११६	१	दुंधा	दुग्धा
"	५	जघन्यादि	जघन्यापि
११९	६	विधव	विधत्व

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२५	२	गे	गो
”	७	द्वि	यादि
”	८	थापक	स्थापक
”	६	येह	यथेह
”	१०	यत्व	व्यत्व
१३१	२	ममर्थ्यात	समर्थ्यात
१४०	७	थंमी	धोमी
”	८	रव	एव
१४८	१	पाद	पाद्
१५०	१	वेजा	तेजा
१५१	५	ऑकर	श्रोंकार
”	६	प्रवन्ते	प्रवर्तंते
१५२	२	अभिलाष	अभिलाष
२०६	४	यथं	कथं
२१२	२	अन्त	अनंत
२१३	७	ज्ञानत्य	ज्ञानात्म
२१७	३	उच्या	उष्मा
”	७	लोक	लोकं
”	७	दुष्ट्वा	दृष्ट्वा
२१८	६	सरूपा	सरूपा
”	५	शः	शुः
२२०	६	नियत्वं	नित्यत्वं
२२४	१	त्यच	त्वंच
२२७	१	वक्तो	वक्तो
२२८	४	सेदो	दोके
२२६	८	सपद	संपद्
२३०	२	सहिताय	संहितायां
”	५	तमे	तथे
”	”	दृष्टा	दृष्ट्वा
”	६	वरचत	विरचित

❀ भाषा की शुद्धि अशुद्धि का पत्र ❀

अंकपृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१	१०	मवो	सवों
२३	१५	पृथ्वी	पृथ्वो
२६	१३	अप्रोप्ति	अप्राप्तिता
३०	१६	अतः	अंतः
४३	१	भनवान्	भगवान्
५४	८	आसाधारण	असाधारण
,,	१४	मृगु	भृगु
६४	१०		उत्पन्न
,,	११		अहंकार
६४	३	ऐमो	ऐसो
		सो तामें स्वार्थ को त्याग	
६	२	परार्थ की कल्पना प्राप्तिकी बाधा बहुत दोष हैं	
१०१	८	परिमाण	परिणाम
१०४	८	रचेतो	रचतो
१०६	९	ब्रह्म	ब्रह्म
१२३	७	जरत्वा	जहत्वा
१२५	३	है हो	है ही
१३५	५	माधुर्य्य	माधुर्य्य
,,	७	सांगर	सागर
१३६	६	लीलावतार के आगे पुरुषावतार	
१४४	३	ढेन	लेनो
१५१	८	स्वरान्त के आदिवरणटी	
१५४	१६	रासे	ऐसे
१५६	५	तम	तुम
	१	को	के
	१३	भये	भये
	२	वतां	वतों
	४	भागत	भागवत
	१	दखत	देखते

अंकपृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७४	१६	एकदश	एकादश
१८४	९	मे	मैं
१९६	११	नारो	नारी
१९८	६	रमै	रामै
२०१	९	पामल	यामल
„	१२	क्रो ध	क्रोध
२१२	६	श्रेष्टी	श्रेष्ठो
२२६	२	सत्यका	सत्यकाम
२२८	७	गंव	गंध
२३२	१	योगिनयों	योगियों

परम्परामें पहिले नं०६ श्रीविश्वाचार्य पीछे ७ में श्री पुरुषोत्तमाचार्य

❋ टिप्पनी की शुद्धा अशुद्धी का पत्र ❋

अंकपृष्ठ	नम्बर श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
५३		यत्र	यत्रुग
„		निवर्त्तते	निवर्त्तते
१६०	३	तत्वाया	तत्त्वायां
१६३	१	सुखायो	सुखापो
१६४	१	चा	च
„	२	त्यक्तावा	त्यक्
१६५	२	कल्यो	कल्यो
१७१	१	लक्ष्य	लक्ष्मं
१७८	२	मज्झिता	मनुज्झिता
१८४	२	दैत्य	दैत्यं
„	„	हल	हलं
१८७	१	वको	वतूको
„	२	अर्च्चितनो	अर्च्चिततनो
१८८	१	वताया	यताया
१८९	२	दशमतो	दुशमतां

अंकपृष्ठ	नम्बर श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
१६३	८	युगपद्	युगपद्
"	३	प्र ष्ठा	प्र ष्ठां
१६७	१	प्रकारी	प्रकारी
"	२	पद्यपि	यद्यपि
		काव्शो	कांदशो
१९८	१	शस	शंस
२००	१	शृडवला	शृंखला
२०१	२	तद्रा	तंद्रा
२०२	२	विम	विक्रम
२०२	२	ग्रहस्त	ग्रस्त
२०४	४	तिमि	मति
२०७	१	वद	वंद
२२३	३	विष्ठ	निष्ठ
२२२	१	दृशिनः	दर्शिनः
"	३	ग्राहा	ग्राह्य

❀ इति श्री शुद्धाशुद्धि पत्र-समाप्त ❀

इति श्री महर्षि व्यास देव सिद्धान्त रत्नाञ्जलि की भाषा दासानुदास हंसदास कृत समाप्त।

❋ नोटिस ❋

सज्जनों व महानुभावों को विदित हो कि [illegible] [illegible] [illegible] प्रथमार्द्ध छप चुकी है। ग्रन्थ पूरे होने की आशा [illegible] पूर्वार्द्ध अब मुद्रित हुआ है। अन्य भी कई ग्रन्थ ,,रहस्य प्रकाशिका [illegible] रहस्य प्रकाशिका, निम्बार्क प्रभा, गोदन हारी लीला [illegible] छप कर प्रेमियों व महात्माओं को आनंद पहुंचा रही हैं।

हंसदास
वृषभान पुर (बरसाना)
बिहारीपुर निवासी